

IMPACT  
FACTOR  
7.012

Year 15 (02) Vol. XXIX  
August 2024

ISSN : 0976-8149  
UGC List No. 48216  
I.S.O. 9001-2015

# Manglam

Half Yearly Journal of Humanities & Social Sciences

# मङ्गलम्

मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका

A Peer Reviewed 'Refereed' Journal



**Editor**  
**Dr. Dinkar Tripathi**

---

Manglam Sewa Samiti, Prayagraj (U.P.) India  
(Regd. Under Society Registration Act 21, 1860)

**सम्पादक :**

**डॉ० दिनकर त्रिपाठी**

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग

फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली-229001 (उ.प्र.) भारत

1304 /A आचार्य द्विवेदी नगर, जेल रोड, रायबरेली-229001 (उ.प्र.) भारत

मो० : 91-7398180008

Email : drdinkartripathi@gmail.com

**प्रकाशक :**

**मङ्गलम् सेवा समिति**

शिवम् अपार्टमेन्ट, नया ममफोर्डगंज, प्रयागराज-211002 (उ.प्र.) भारत

मो० : 91-9044666672

Website : www.manglamallahabad.com

Email : manglamjournal01@gmail.com

manglamsewasamiti@gmail.com

**तकनीकी सहयोग :**

**डॉ० (श्रीमती) वंदना त्रिपाठी**

मो० : 91-7398180009

Email : tripathivandana01@gmail.com

**आवृत्ति :**

**अर्द्धवार्षिक**

प्रथम अंक : फरवरी

द्वितीय अंक : अगस्त

**मूल्य :**

विदेश में : \$13

देश में : ₹1000

मङ्गलम् (अर्द्धवार्षिक द्विभाषीय) शोध पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में दृष्टि, विचार और अभिमत लेखकों के अपने हैं, सम्पादक के नहीं। इनमें सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। अतः पत्रिका के सम्पादक एवं प्रकाशक पर इसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। विवाद माननीय न्यायालय प्रयागराज में ही विचारणीय होंगे।

## PATRONS

- **Prof. P.C. Trivedi**, Ex. Vice Chancellor, Jay Narayan Vyas University, Jodhpur (Rajasthan)
- **Prof. Manoj Dixit**, Vice Chancellor, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner (Rajasthan)
- **Prof. D.P. Tiwari**, Vice Chancellor, Jai Minesh Adivasi University, kota, (Rajasthan)
- **Prof. Sri Prakash Mani Tripathi**, Vice Chancellor, Indira Gandhi National Tribal University Amarkantak (M.P.)
- **Prof. Sanjeev Kumar Sharma**, (Ex. Vice Chancellor, Mahatma Gandhi Central, University of Bihar, Bihar), CCS University, Meerut
- **Prof. Suresh Chandra Pandey**, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Ram Hit Tripathi**, Ex. Principal, Pt. Mahadev Shukla Krishak Post Graduate College Gaur, Basti (U.P.)
- **Prof. R.N. Tripathi**, (Ex-Member, Uttar Pradesh Public Service, Commission, Prayagraj, U.P.) Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. M.S. Kambli**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. Umesh Prasad Singh**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. Ramjee Tiwari**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. A.K. Kaul**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. A.K. Srivastav**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)

## EDITORIAL BOARD

- **Prof. Rama Shankar Mishra**, University of Lucknow (U.P.)
- **Prof. Rajendra Singh Chauhan**, Himachal Pradesh University Shimla (Himachal Pradesh)
- **Prof. Anand Kumar Srivastav**, Ex. Principal, CMP College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Diwakar Tripathi**, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Dr. Ritesh Tripathi**, C.M.P. Degree College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)

- **Prof. Noor Mohammad**, University of Delhi, Delhi
- **Prof. R.K. Mishra**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)
- **Prof. Geeta Tripathi**, Ganpat Sahai P.G. College, Sultanpur, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Prof. Lokesh Tripathi**, Baba Raghav Das PG College Deoria, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Bhasker Shukla**, Hemwati Nandan Bahuguna Government P.G. College Naini, PRS University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Vandana Tripathi**, Basic Education Board, Raebareli (U.P.)

#### **ADVISORY BOARD**

- **Prof. Anand Prakash Tripathi**, Dr. Hari Singh Gour University, Sagar (Madhya Pradesh)
- **Prof. K.K. Pandey**, Ex. Principal, DAV College Lucknow (U.P.)
- **Prof. R.S. Aadha**, Jai Narayan Vyas University, Jodhpur, (Rajasthan)
- **Prof. Nagendra Pratap Chauhan**, B.R.A. Bihar University, Muzzaferpur, (Bihar)
- **Prof. Anupam Sharma**, Dr. Hari Singh Gaur University, Sagar, (M.P.)
- **Prof. Ravindra Kumar Sharma**, Kurukshetra University, Haryana
- **Prof. Mamta Mani Tripathi**, Udit Narayan P.G. College, Kushinagar, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Meera Pal**, Uttar Pradesh Rajshree Tandon Open University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Shyam Prasad Saidal**, Bal Kumari Mahavidyalaya, Narayangarh, Chitwan, (Nepal)
- **Dr. Digvijay Nath Rai**, Agra College, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (U.P.)
- **Dr. Joydeb Garal**, University of Chittagong (Bangladesh)
- **Dr. Sanjay M. Wagh**, Principal, Mohinder Singh Kabal Singh Senior College, Kalyan, Thane (Maharashtra)
- **Dr. Mohd. Younes Bhat**, Government Degree College Kulgam, University of Jammu (J & K)
- **Dr. Sheelam Bharti**, Mata Sundari College for Women University of Delhi, Delhi

## सम्पादकीय

पृथ्वी तल पर मनुष्य ही सर्वश्रेष्ठ चिंतन मनन एवं अन्वेषण की प्रवृत्ति सम्पन्न प्राणी रहा है। मनुष्य के निरन्तर चिंतनों का परिणाम वर्तमान में ब्रह्माण्डीय रहस्यों की प्राप्ति हो रही है, जिसका सातत्य गतिमान रहा है। संसार में मानव समाज एवं परिवार की उच्चता पूर्ण जीवन शैली के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन मनुष्य की अविच्छिन्न जिज्ञासापरक अन्वेषणों की देन है। प्राच्य भारतीय समाज में तपोमय जीवन यापन करने वाले ऋषि महर्षियों ने मानवीय आचार संहिता (Code of Conduct) का प्रवर्तन आर्य परम्परा में प्राप्त ज्ञान राशि को समाजोपयोगी संस्कार एवं परिष्कार प्रदान कर निज अनुभवों से भी उसे सज्जित और परिमार्जित कर प्रस्तुत किया है। जिस पर भारतीय प्राच्य समाज, परिवार, व्यक्ति, धर्म एवं राजनीति आधारित रहे। तथा इसकी प्रधानता से सर्वजन कल्याण, रक्षण और पोषण प्राप्त जनमानस निश्चयेन सन्तुष्ट जीवन यापन करता रहा। प्रजा की रक्षा राजनीति का मूल उद्देश्य होता रहा है। चाहे देश की सुरक्षा और संरक्षा रही हो अथवा न्याय व्यवस्था और व्यवहार की स्थिति रही हो अथवा धर्म की रक्षा और विकास की व्यवस्था रही हो। राजनीतिज्ञों और शासकों की समदृष्टि समाज द्वारा सदैव अपेक्षित रही है। आन्तरिक सुरक्षा और शान्ति सम्बन्धी व्यवस्थाओं पर राजनीति सतत सचेष्ट रही है। परिणामतः प्राच्य भारतीय समाज में उच्च एवं निम्न वर्ग तथा समुदाय अपनी-अपनी स्थिति सम्बन्ध एवं आर्थिक अर्जनीयता में लगभग सन्तुष्ट दीख पड़ता रहा। जिसके लिए मनुष्य के रूप में जन्म प्राप्त अनेकशः देव तुल्य चिंतकों की उच्चतर विचार स्थापनाओं और अवधारणाओं ने ही योगदान किया है। सद्विवेक की भावना, जीवन मूल्यों की स्वीकार्यता तथा माननीय सम्बन्धों की पूजनीयता ने समाज को आदर्श स्वरूप देने में सदैव कार्य किया है।

वर्तमान मानव समाज सर्वविध सुख सुविधा सम्पन्न होकर भी आत्मतोष की न्यूनता में जीता हुआ दीख पड़ रहा है। आपाधापी, भाग दौड़, आर्थिक होड़ और निरन्तर बढ़ रहे असन्तोषमय जीवन विधि से अब मनुष्य आत्म तुष्टि तथा मानवीय सम्वेदनाओं से विमुख होता जा रहा है। भय, क्रोध, मोह, लोभ, असन्तोष, ईर्ष्या और स्वार्थपन ने जगती तल के मानव समाज को उद्वेलित कर दिया है। राष्ट्रों में परस्पर संघर्ष और सत्ता हस्तगत करने की प्रवृत्ति बढ़ती दीख पड़ रही है। अब आतंकवाद ने शनैःशनैः पूरी धरती पर अपने विस्तार का क्रम सातत्य बनाना चाहता है। दूरस्थ राष्ट्रों में रहकर भी किसी भी देश को अपना लक्ष्य बनाना चाहता है। सत्ता हस्तगत करना अपना उद्देश्य बना रहा है। देश में रहकर अपने ही देशवासियों पर अत्याचार, हत्या एवं शोषण जैसे अपराध कर रहे हैं। इन सबको वैश्विक परिदृश्य में प्रतिबन्धित किया जाना वर्तमान में एक महती आवश्यकता है। जिसके लिए सम्पूर्ण विश्व समुदाय को

एकीभूत प्रयास करने की अपेक्षा उपस्थित हो गई है। इस सम्बन्ध में हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का विश्व को सचेष्ट करने का प्रयास परम प्रशंस्य और स्तुत्य है। आशा है कि सम्पूर्ण विश्व स्तर पर सभी राष्ट्र एकजुट होकर आतंकवाद के विरुद्ध समवेत भाव से संघर्षशील होंगे।

“मंगलम” रिसर्च जर्नल का यह अंक अपने सुचिंतक अन्वेषणों एवं विचारकों के गवेषणात्मक लेखों को प्रस्तुत करते हुए विज्ञानों एवं शोधकर्ताओं से भावी सुझावों और परामर्शों को सादर आमन्त्रित करता है।

मङ्गलम् शोध जर्नल का वर्ष 15(2) अंक XXIX अगस्त का यह पुष्प अपनी अन्वेषिता की यात्रा में अन्वेषकों के अन्वेषणों से मण्डित शोधलेखों को प्रस्तुत कर विचारकों एवं विज्ञान महानुभावों से सुझावों की सादर अपेक्षा करता है।



(डॉ० दिनकर त्रिपाठी)

सम्पादक

## विषयानुक्रम

क्र.सं.	शोधपत्र / शोधार्थी	पृष्ठ
1.	<b>Constitutional Morality in India : A Critical Study</b> <i>- Prof. Ashok Kumar Rai, Dr. Santosh Kumar</i>	1-13
2.	<b>Right to Vote: A Constitutional Assurance or Facade of Democracy</b> <i>- Dr. Abhishek Kumar Tiwari, Ateesha Mishra</i>	14-22
3.	<b>Promoting Women Workplace Equality : A Key to Organizational Growth &amp; Success</b> <i>- Dr. Vandana Pandey</i>	23-35
4.	<b>Political Participation and Empowerment of Women in Himalayan Region</b> <i>- Dr. Vineeta, Dr. Manoj Kumar</i>	36-44
5.	<b>India-Bangladesh Relations: Contemporary Challenges and Opportunities</b> <i>- Dr. Sonika Sharma</i>	45-52
6.	<b>Prejudice in the Context of Caste and Sex: A Comparative Study</b> <i>- Dr. Vinay Kumar Singh</i>	53-58
7.	<b>Scientific Aptitude : A Review of Literature</b> <i>- Mrs. Kirti Sharma</i>	59-66
8.	<b>Critical Analysis Economic Welfare and Development through Skill India Programme : A Study of Success Factors and Challenges</b> <i>- Lalita Yadav, Dr. Vidyanand Pandey</i>	67-73
9.	<b>The Role of Environmental Awareness Ability on Aggression of College Students</b> <i>- Monika Ranjan</i>	74-82
10.	<b>Spatio-Temporal Analysis of Cropping Intensity in Chitrakoot District</b> <i>- Birendra Kumar Yadav, Dr. Manoj Kumar</i>	83-90

11. बांग्लादेश संकट और भारत पर प्रभाव 91-97  
- प्रो०(डॉ०) रजनीकांत पाण्डेय
12. क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों का आलोचनात्मक विश्लेषण 98-110  
- डॉ० दिवाकर त्रिपाठी, विद्याधर मिश्र
13. भारत में लैंगिक न्याय का संवैधानिक और न्यायिक 111-123  
परिप्रेक्ष्य : एक अध्ययन  
- डॉ० मुकेश कुमार वर्मा
14. स्वामी विवेकानन्द के स्त्री सम्बन्धी विचार 124-133  
- डॉ० आनन्द कुमार पाण्डेय, प्रो०(डॉ०) रजनीकांत पाण्डेय
15. नदी के द्वीप : निराशा में आशा और ऊर्जा का संचरण 134-139  
- डॉ० नियति कल्प
16. पुराणों में रामकथा 140-145  
- डॉ० अश्विनी देवी
17. निराला की रचनाओं में काव्य वैभव 146-155  
- डॉ० किरण कुमारी
18. शोध को उपयोगी एवं जीवंत बनाए रखने में 'शोध 156-162  
समस्या के निरूपण' का महत्व  
- डॉ० कृष्णा नंद चतुर्वेदी
19. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : वर्तमान मुद्दे और उच्च 163-171  
शिक्षा के भविष्य की पुनर्कल्पना  
- डॉ० अरुण कुमार सिंह
20. भारत में सर्विद सरकार की सार्थकता 172-179  
- डॉ० शैलेन्द्र कुमार पाण्डेय, प्रिती वर्मा
21. भारतीय किसान आन्दोलन में स्वामी सहजानंद 180-186  
सरस्वती का योगदान  
- सुभाष चन्द्र यादव, डॉ० कृष्णा नन्द चतुर्वेदी
22. धर्मसूत्रों में विवेचित धर्म : एक समाजशास्त्रीय विवेचन 187-192  
- आराधना द्विवेदी, डॉ० सन्तेश्वर कुमार मिश्र



# Constitutional Morality in India: A Critical Study

*Prof. Ashok Kumar Rai\**  
*Dr. Santosh Kumar\*\**

## *Abstract*

*Constitutional morality is a concept that has become central to the Indian legal framework, playing a pivotal role in shaping the evolution of democratic governance. It refers to adherence to the principles and values enshrined in the Indian Constitution, which seek to create an egalitarian and just society. Dr. B.R. Ambedkar, the chief architect of the Indian Constitution, first introduced the idea, emphasizing the need for moral adherence to constitutional ideals for the successful functioning of democracy. This article delves into the origins, judicial interpretation, and relevance of constitutional morality in India, examining how the judiciary has employed it to safeguard fundamental rights and advance social justice. Through an analysis of key judgments, this article explores the dynamic between constitutional morality and popular morality, and the potential challenges it poses for governance.*

**Keywords:** *Constitutional Morality, Fundamental Rights, Indian Judiciary, Social Justice, Victorian Morality.*

## **Introduction**

India's democracy, the largest in the world, is governed by the Constitution of India, a document that not only provides for the country's governance structure but also imbues it with a moral compass. Constitutional morality refers to the moral values embedded in the Constitution and the ethos of governance it seeks to promote. It is a concept that guides both the state and citizens toward upholding the principles of justice, equality, liberty, and fraternity. Dr. B.R. Ambedkar, the principal architect of the Indian Constitution, emphasized the need for constitutional morality in ensuring the survival and success of Indian democracy.

In recent years, constitutional morality has gained significant traction in Indian judicial and political discourse, especially through

---

\* *Dean, Faculty of Law, Dr. Ram Manohar Lohia, Avadh University, Ayodhya*

\*\* *Faculty of Law, Dr. Ram Manohar Lohia, Avadh University, Ayodhya*

landmark judgments involving fundamental rights and social justice issues. The judiciary has invoked this concept to balance societal values with constitutional principles, protect marginalized communities, and reform outdated societal practices that clash with the Constitution's ideals.

This article explores the historical context of constitutional morality in India, how it has evolved through judicial interpretations, and its role in shaping contemporary legal and social landscapes.

### **Dr. B.R. Ambedkar and Constitutional Morality**

The notion of constitutional morality in India was first articulated by Dr. B.R. Ambedkar during the debates of the Constituent Assembly. He emphasized that constitutional morality was essential for the success of democracy in India. According to Ambedkar, constitutional morality required both individuals and institutions to respect the values and principles of the Constitution over any external influences, including societal norms and customs. He believed that the survival of democracy depended on adherence to constitutional principles rather than succumbing to majoritarian or populist impulses.

Ambedkar drew inspiration from the ideas of British constitutional theorist George Grote, who had discussed constitutional morality in the context of ancient Athens. For Ambedkar, the Indian Constitution was more than a legal document; it was a moral charter that aimed to reshape Indian society along more egalitarian lines, breaking away from the hierarchical structures of caste and gender discrimination.

Ambedkar's conception of constitutional morality was aimed at creating an environment where citizens would internalize and practice constitutional principles, thereby fostering an inclusive society built on the pillars of liberty, equality, and fraternity.

### **Constitutional Morality and Social Justice**

India's Constitution was framed with the goal of establishing a social democracy, which emphasizes not just political equality but also social and economic equality. The Preamble to the Constitution explicitly mentions justice—social, economic, and political—as one

of the foremost objectives of the Indian state. Constitutional morality plays a crucial role in realizing this vision by guiding state actions and judicial interpretations toward achieving social justice.

The Constitution also recognizes the need to safeguard individual rights against the oppressive practices prevalent in society. Article 17, which abolishes untouchability, and Article 15, which prohibits discrimination on grounds of religion, race, caste, sex, or place of birth, are reflective of the Constitution's commitment to social equality. However, legal provisions alone are not enough to eradicate deep-seated social inequalities. This is where constitutional morality comes into play, as it requires a moral commitment to these constitutional values by both state institutions and citizens.

### **Victorian Morality**

Victorian morality refers to the set of values, social norms, and ethical standards that were prevalent during the reign of Queen Victoria in the 19th century (1837–1901). This period in British history was characterized by strict codes of behavior, particularly in relation to gender roles, family life, and public conduct. Victorian morality encompassed a wide range of attitudes, including a strong emphasis on personal responsibility, sexual restraint, and the primacy of family values. It was deeply rooted in the ideals of middle-class respectability and was seen as essential to maintaining social order.

One of the key aspects of Victorian morality was the strict division between public and private life. The public sphere was dominated by men, who were expected to engage in politics, business, and intellectual pursuits, while women were confined to the private sphere of the home. Victorian women were idealized as the guardians of morality, tasked with upholding virtue and maintaining the sanctity of the family. The "angel in the house" was a common Victorian trope that depicted women as passive, self-sacrificing, and morally superior to men. This idealization of women's purity, however, also constrained their roles, limiting their access to education, employment, and public life.

Victorian attitudes toward sexuality were particularly rigid, with a heavy emphasis on chastity and modesty. Sexual activity was considered appropriate only within the confines of marriage, and any

deviation from this standard was harshly judged. Women, in particular, were expected to remain virgins until marriage and to maintain a modest and demure demeanor at all times. Discussions of sex were considered taboo, and public expressions of affection were frowned upon. This prudishness extended to everyday life, where even the mention of body parts or intimate subjects was avoided.

Despite the restrictive norms surrounding sexuality and gender roles, there was also a great deal of hypocrisy in Victorian society. While public morality demanded purity and restraint, prostitution flourished, and there was widespread acknowledgment of extramarital affairs, particularly among men. The rigid moral code often led to a double standard, where men were granted greater sexual freedom than women. At the same time, issues such as homosexuality were criminalized and considered morally deviant, further highlighting the repressive nature of Victorian attitudes.

Religion played a central role in shaping Victorian morality. Evangelical Christianity, in particular, influenced the moral discourse of the time, advocating for sobriety, piety, and hard work. The notion of "self-help" was also prominent, emphasizing personal responsibility, discipline, and the importance of moral character. The belief that hard work and moral rectitude would lead to success was deeply ingrained in Victorian society, particularly among the burgeoning middle class.

In many ways, Victorian morality reflected the anxieties and aspirations of a rapidly industrializing society. As Britain transformed into a global empire and experienced profound social and economic changes, there was a need to maintain order and stability. Victorian morality, with its emphasis on discipline, restraint, and respectability, provided a framework for navigating these changes. However, it also imposed significant limitations, particularly on women and marginalized groups, and its legacy continues to be debated in modern discussions of gender, sexuality, and morality.

### **Judicial Interpretation of Constitutional Morality**

The Indian judiciary has been at the forefront of advancing the concept of constitutional morality, particularly in cases where societal norms conflict with constitutional principles. The Supreme Court has

often invoked this idea to uphold the fundamental rights of individuals, even in the face of majoritarian or traditional societal values. Through a series of landmark judgments, the judiciary has expanded the scope of constitutional morality to include issues of gender justice, LGBTQ+ rights, and religious freedoms.

### **Kesavananda Bharati v. State of Kerala (1973)**

One of the earliest instances where the Supreme Court dealt with constitutional morality, albeit indirectly, was in the Kesavananda Bharati case. This landmark case, which established the basic structure doctrine, laid down that certain fundamental aspects of the Constitution, such as democracy, secularism, and the rule of law, could not be amended by Parliament. The judgment implicitly emphasized the idea of constitutional morality by protecting the Constitution's core values from being overridden by transient political majorities. It underlined that the Constitution was not just a legal document but also a moral compass that must be respected and upheld.

### **Naz Foundation v. Government of NCT of Delhi (2009)**

In this case, which decriminalized consensual homosexual acts under Section 377 of the Indian Penal Code, the Delhi High Court invoked constitutional morality to emphasize that constitutional rights should not be subservient to societal morality. The Court held that the Constitution, particularly its guarantee of equality and dignity under Articles 14 and 21, must prevail over traditional societal values that discriminate against individuals based on their sexual orientation.

Though the Supreme Court reversed this decision in Suresh Kumar Koushal v. Naz Foundation (2013), the notion of constitutional morality as a higher ethical principle that overrides societal prejudices was reinforced in later judgments.

### **Navtej Singh Johar v. Union of India (2018)**

The Supreme Court's judgment in the Navtej Singh Johar case reaffirmed the primacy of constitutional morality over popular morality. In this historic judgment, the Court decriminalized homosexuality and struck down Section 377 of the IPC as unconstitutional. The Court emphasized that constitutional morality

should guide the interpretation of fundamental rights, especially when societal norms are oppressive and discriminatory.

The judgment laid down that societal morality, which is often steeped in prejudices and stereotypes, cannot override constitutional rights. The Constitution's promise of dignity, equality, and liberty must be upheld, even if it challenges deeply entrenched societal practices.

### **Indian Young Lawyers Association v. State of Kerala (2018)**

This case, commonly referred to as the Sabarimala case, further exemplified the role of constitutional morality in judicial decision-making. The Supreme Court ruled that the ban on the entry of women of menstruating age into the Sabarimala temple was unconstitutional, as it violated the fundamental rights to equality (Article 14) and religious freedom (Article 25).

The Court observed that while religious practices are important, they cannot infringe upon individual rights guaranteed by the Constitution. It reiterated that constitutional morality must take precedence over societal or religious morality, especially when the latter perpetuates discrimination and inequality.

### **The Role of Constitutional Morality in Protecting Fundamental Rights**

One of the most significant functions of constitutional morality in India has been its role in protecting fundamental rights, particularly when these rights come into conflict with societal norms and practices. The Constitution guarantees a range of fundamental rights to all citizens, including the right to equality (Article 14), the right to freedom (Article 19), and the right to life and personal liberty (Article 21). However, societal practices, often rooted in tradition and custom, have historically violated these rights, particularly for marginalized communities such as women, LGBTQ+ individuals, and lower castes.

In such cases, constitutional morality serves as a tool for the judiciary to advance social justice and protect individual rights. By invoking constitutional morality, courts have been able to strike down discriminatory practices and laws that are otherwise accepted by large sections of society.

### **Gender Justice and Constitutional Morality**

The Supreme Court has repeatedly relied on constitutional morality to promote gender justice. In the Sabarimala case, the Court ruled that the exclusion of women from religious spaces violated the fundamental rights to equality and religious freedom. Similarly, in *Shayara Bano v. Union of India* (2017), the Court struck down the practice of instant triple talaq, which allowed Muslim men to divorce their wives unilaterally and without due process, as unconstitutional.

In both cases, the Court emphasized that constitutional morality, which enshrines principles of equality and dignity, must prevail over religious or societal practices that perpetuate gender discrimination.

### **LGBTQ+ Rights and Constitutional Morality**

The decriminalization of homosexuality in the *Navtej Singh Johar* case marked a watershed moment for LGBTQ+ rights in India. The Court invoked constitutional morality to uphold the rights of LGBTQ+ individuals to live with dignity and equality, free from societal prejudices and discrimination.

The judgment explicitly stated that the Constitution's promise of equality and non-discrimination must be interpreted in light of constitutional morality, which calls for the protection of individual rights against majoritarian or traditional societal values.

### **Religious Freedom and Constitutional Morality**

The relationship between constitutional morality and religious freedom has been a subject of considerable debate in India. While the Constitution guarantees the right to religious freedom under Article 25, this right is not absolute and is subject to constitutional morality. In several cases, the judiciary has ruled that religious practices cannot violate the fundamental rights of individuals.

In the Sabarimala case, the Court held that while religious denominations have the right to manage their own affairs, this right does not extend to practices that violate constitutional principles of equality and non-discrimination.

### **Constitutional Morality vs. Popular Morality**

One of the central tensions in the application of constitutional morality is its conflict Constitutional Morality vs. Popular Morality

One of the central tensions in the application of constitutional morality in India lies in its potential conflict with popular morality. While constitutional morality reflects the progressive values enshrined in the Indian Constitution, popular morality represents the prevailing societal norms, customs, and traditions, which may not always align with constitutional principles. This dichotomy often arises in cases involving issues of gender equality, religious practices, and minority rights, where popular sentiment may resist changes that promote constitutional ideals of equality, liberty, and justice.

### **The Conflict Between the Judiciary and Society**

One of the criticisms of constitutional morality is that it places an unelected judiciary in a position where it can override the will of the majority as expressed through legislation or societal norms. For example, in the Navtej Singh Johar case, while the Court decriminalized homosexuality on the grounds of constitutional morality, a significant portion of Indian society remained opposed to recognizing LGBTQ+ rights due to deeply ingrained cultural and religious beliefs. Similarly, in the Sabarimala case, the Court's decision to allow women entry into the temple was met with widespread protests from devotees who believed the ruling violated their religious traditions.

This friction between constitutional morality and popular morality raises questions about the legitimacy of judicial intervention in matters where societal consensus has not yet evolved to reflect constitutional values. Critics argue that the judiciary, in invoking constitutional morality, may appear to be imposing values that are not widely accepted by society, leading to tensions between the judiciary, the legislature, and the public.

### **The Role of Education and Social Reform**

One of the ways to reconcile the tension between constitutional morality and popular morality is through education and social reform. As Dr. Ambedkar envisioned, constitutional morality must become



ingrained in the public consciousness if it is to succeed. This requires educating citizens about the values of the Constitution and fostering an understanding of why these values are necessary for a just and equitable society.

The judiciary, while advancing constitutional morality, has recognized that social reform is a gradual process. For example, in *Shayara Bano v. Union of India* (2017), the Supreme Court struck down the practice of triple talaq but also emphasized the need for the Muslim community to engage in internal reform. Similarly, in the *Navtej Singh Johar* case, the Court's judgment was accompanied by a broader appeal for societal acceptance of LGBTQ+ individuals, recognizing that legal judgments alone cannot change deep-seated prejudices.

The success of constitutional morality, therefore, depends on its integration into public life through sustained efforts at social reform and education. Legislative action, judicial pronouncements, and civil society activism must work together to align popular morality with the Constitution's principles over time.

### **Criticism of Constitutional Morality**

While constitutional morality has been hailed as a powerful tool for advancing social justice and protecting individual rights, it has also been subject to criticism. Some of the primary criticisms of constitutional morality include the following:

#### **Judicial Overreach**

One of the most significant criticisms of constitutional morality is that it may lead to judicial overreach, wherein courts, under the guise of protecting constitutional values, effectively legislate from the bench. Critics argue that this undermines the separation of powers, as it allows the judiciary to intrude upon the domain of the legislature. By invoking constitutional morality, the judiciary can sometimes impose decisions that do not reflect the will of the people, leading to accusations of an undemocratic concentration of power in the hands of judges.

For instance, in the *Sabarimala* case, critics argued that the Supreme Court's decision to allow women into the temple was an

example of judicial overreach, as it overrode the religious beliefs of a significant section of society. Opponents of the ruling claimed that such decisions should be left to the legislative process, where elected representatives can reflect the will of the people.

### **Subjectivity and Ambiguity**

Another criticism of constitutional morality is that it is inherently subjective. What constitutes constitutional morality may vary depending on the interpretation of individual judges. This can lead to inconsistent judicial decisions, as different judges may have different understandings of what the Constitution's values require in any given case. Critics argue that this subjectivity can make constitutional morality a fluid and unpredictable concept, leading to uncertainty in the law.

Moreover, the ambiguity surrounding the term "constitutional morality" itself has been a point of contention. There is no universally accepted definition of the concept, which allows it to be interpreted in various ways. While some see this flexibility as a strength, others argue that it opens the door to judicial arbitrariness, where judges may apply constitutional morality in ways that suit their personal beliefs.

### **Clash with Democratic Values**

Constitutional morality, when interpreted in opposition to popular morality, may sometimes appear to clash with democratic values. In a democracy, the will of the people, as expressed through their elected representatives, is supposed to guide governance. However, when courts invoke constitutional morality to strike down laws or practices that have widespread social acceptance, it can be seen as undermining the democratic process.

For instance, in cases like Naz Foundation and Navtej Singh Johar, the judiciary's reliance on constitutional morality to decriminalize homosexuality was seen by some as a challenge to democratic processes, particularly given that Parliament had not taken any steps to reform Section 377 of the Indian Penal Code. Similarly, in the Sabarimala case, the Court's decision was viewed by some as a disregard for the will of religious communities.

## **The Future of Constitutional Morality in India**

The future of constitutional morality in India will depend on how the concept continues to evolve through judicial interpretation and societal engagement. While constitutional morality has played a crucial role in protecting individual rights and advancing social justice, its continued success will require a delicate balance between respecting democratic processes and ensuring that constitutional values remain paramount.

### **Constitutional Morality as a Tool for Social Reform**

As India grapples with complex socio-political challenges, constitutional morality will likely remain a central theme in judicial discourse. Issues such as gender equality, LGBTQ+ rights, freedom of religion, and caste-based discrimination will continue to require judicial intervention, and constitutional morality will serve as a guiding principle for courts in these cases.

Moreover, constitutional morality can serve as a powerful tool for social reform, particularly in a society as diverse and hierarchical as India. By promoting the values of equality, dignity, and liberty, constitutional morality can help bridge the gap between law and social justice, pushing Indian society toward a more inclusive and egalitarian future.

### **Striking a Balance Between Constitutional and Popular Morality**

Going forward, the challenge for the judiciary will be to strike a balance between constitutional morality and popular morality. While courts have a duty to uphold the Constitution and protect individual rights, they must also be mindful of the broader social context in which their decisions are made. Excessive reliance on constitutional morality, without regard for popular sentiment, can lead to a legitimacy crisis for the judiciary and may alienate large sections of society.

The judiciary, therefore, must continue to engage with both constitutional and popular morality, fostering a dialogue between the two. By doing so, it can ensure that constitutional principles are respected while also promoting gradual social reform that is in line with the evolving values of Indian society.

### Conclusion

Constitutional morality in India is a dynamic and evolving concept that serves as a vital tool for the judiciary in protecting fundamental rights and advancing social justice. Rooted in the values enshrined in the Indian Constitution, constitutional morality requires both the state and individuals to adhere to principles of equality, liberty, and dignity, even when these principles conflict with societal norms and traditions.

Through landmark judgments on issues such as LGBTQ+ rights, gender equality, and religious freedom, the Indian judiciary has used constitutional morality to challenge oppressive societal practices and promote a more inclusive society. However, the tension between constitutional morality and popular morality remains a significant challenge, as judicial decisions that invoke constitutional morality can sometimes appear to conflict with democratic processes and societal beliefs.

Despite these challenges, constitutional morality will continue to play a crucial role in shaping the future of Indian democracy. By promoting the values of the Constitution and fostering social reform, constitutional morality can help India navigate its complex socio-political landscape and move toward a more just and equitable society.

### References

1. *Ambedkar, B. R. (2016). Annihilation of Caste: The Annotated Critical Edition. Verso.*
2. *Austin, G. (1999). The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation. Oxford University Press.*
3. *Basu, D. D. (2015). Introduction to the Constitution of India (23rd ed.). Lexis Nexis.*
4. *Chandrachud, D. Y. (2019). The Future of Indian Democracy. Oxford University Press.*
5. *Deva, S. (2012). Human Rights, Equality, and Constitutional Morality in India: Judicial Review and Social Change. Cambridge University Press.*
6. *Galanter, M. (1984). Competing Equalities: Law and the Backward Classes in India. University of California Press.*
7. *Khosla, M. (2020). India's Founding Moment: The Constitution of a Most Surprising Democracy. Harvard University Press.*

8. *Lahoti, R. C. (2013). Preamble: The Spirit and Backbone of the Indian Constitution. Eastern Book Company.*
9. *Mehta, P. B. (2010). The Burden of Democracy. Penguin.*
10. *Mishra, R. (2021). Constitutional Morality in Indian Jurisprudence: A Philosophical Critique. Indian Journal of Constitutional Law, 12(1).*
11. *Pathak, A. (2020). Constitutional Morality in Indian Courts: A Study of Key Cases. Sage Publications.*
12. *Sathe, S. P. (2002). Judicial Activism in India: Transgressing Borders and Enforcing Limits. Oxford University Press*
13. *Sen, A. (2009). The Idea of Justice. Harvard University Press.*
14. *Singh, M. P. (2011). V. N. Shukla's Constitution of India (12th ed.). Eastern Book Company.*
15. *Soli, S. (2018). The Spirit of Constitutional Law in India: An Overview. Lexis Nexis.*
16. *Verma, A. (2019). Constitutional Morality and the Supreme Court of India: A Critical Review. Journal of Constitutional Law and Governance, 9(2).*

## **Right to Vote: A Constitutional Assurance or Facade of Democracy**

*Dr. Abhishek Kumar Tiwari\**

*Ateesha Mishra\*\**

### **Abstract**

*In the larger picture of plebiscite democracy, there is a huge debate over whether the constitutional right to vote is a fundamental right or legal right. This question has been axiom the idea of democratic governance, personal liberties, and the sovereignty of these rights. The question presented in this paper touches on the cardinal principles of participatory democracy i.e. Right to vote guaranteed by the constitution is a legal right or a constitutional right? A key question that has resonated in this article is whether or not the right to vote is a fundamental right protected by the Indian constitution. This abstract delves into the nuances of these subtleties by exploring the history at a glance of the right to vote which has been inculcated in society, the legal perspective, and the democratic repercussions of these pivotal differences which have been prominent in today's world of participatory governance. This abstract scrutinizes the myriad opinions on whether the right to vote ought to be considered as a basic right for human dignity or as a constitutional right that has been enriched in the supreme law of India. Moreover, it also overlooks the judicial interpretation which has been shaped by the right and delicate balancing between preserving individual rights and advancing the societal norms.*

### **Introduction**

The social norms that have been created in our society reflect the idea of *plebiscite* democracy where everyone has a right to participate in choosing their representative and also a foundational element of democratic government. The right to vote acquired broad recognition in transactional law i.e. Indian law and international law. Despite its crucial importance, public discourse does not significantly address these basic rights' historical roots and legal principles. Most recently, the U.S. presidential election in the Bush v. Gore<sup>1</sup> court highlighted the sense of contaminant in the indispensable right to vote. The ensuing ruling by the Supreme legal effectively put an end to the

---

\* *Associate Professor, Faculty of Law, University of Lucknow, Lucknow*

\*\* *Research Scholar, Faculty of Law, University of Lucknow, Lucknow*

count process and decided the outcome of the election, sparking discussions on the proper degree of legal involvement in matters of politics. The exact essence of voting entitlement has major implications and radically transforms the country's political landscape. The recognition of voting entitlement is the core concept of representative government that surpasses national borders.<sup>2</sup> This acknowledgment is consistent with the fundamental tenets of the rule of law, which maintain that every person has intrinsic worth and authority, both of which ought to be represented in their involvement in national governance. The entitlement has its foundation in the past battle of independence and was foreseen by the framework of the constitution as the bedrock of the democratic structure of the nation. By bestowing the citizens' right to vote the Constitution has shaped the nation's trajectory to reinforce the idea of democratic governance. Many communities have contended to courageously defend the rights of an individual which is an often important aspect of overarching the battle of human rights. The difficulties associated with elections in developed countries serve as a stark reminder of the consequences of this kind of apathy, which jeopardizes the fundamental basis of the rule of law. The complex connections between the right to vote, the rule of law, judicial interpretation, and the reliability of the electoral process were highlighted by the debate involving the Florida recount in the presidential elections.<sup>3</sup> The ensuing ruling by the US Supreme Court successfully put an end to the counting process and decided the election's result, sparking discussions over the proper scope of the judiciary's involvement in matters of politics. Voting rights are evidence of political ideas' advancement across the globe as well as inside the boundaries of Indian constitution legislation. Recent occurrences have demonstrated that its historical basis and legal relevance cannot be hidden by indifference that has been create in a society by a political leaders. The scathing critique has also made it clear that the right to vote is considered to be the quintessential concept of human liberty and it cannot be measured by the number of basic rights which has been given to an individual at the time of birth as it delves with the moral obligation of a right. We have seen many rabble-rouser ministers who provoke the public by assuring them of the fulfillment of the whims and fancies of the innocent public. But that's the irony and animosity that the minister during the election promises. Nevertheless, such autocracies solidified the idea of popular

sovereignty in a democratic system where the choices of the people are restrained by the so-called demagogue ministers. Changing the political dynamic of the country would be impossible because imposing reasonable restrictions in the name of the right to speak and felon disenfranchisement laws that have coexisted, as it depriving a large segment of the populace of their ability to vote. The past few years have shown that its cultural foundation and juridical relevance shouldn't be eclipsed by modern indifference. The highest court in India i.e. Supreme Court has rendered a historic decision in *the People's Union for Civil Liberties case*<sup>4</sup> by elucidating the complex nature of the electoral process in the Country. The Representation of the People (3rd Amendment) Act of 2002<sup>5</sup> was declared unlawful by the Apex Court in this landmark decision, marking a significant decision. This decision was based on protecting voters' inherent right to information, particularly regarding the antecedents of lawmakers running in the elections for legislature. The Supreme Court's dedication to upholding the democratic ideals entrenched in Article 19(1)(a) of the Indian Constitution is demonstrated by this ruling. The Representation of the People (3rd Amendment) Act, 2002<sup>6</sup>, was the product of a parliamentary attempt to solve certain problems with the way elections are conducted. The court's intervention, meanwhile, emphasizes the fine line that must be drawn in a democracy between the government's authority to regulate and the basic liberties of its inhabitants.

The crux of the case was voters' essential right to know the credentials, histories, and possible disagreements related to the interests of candidates for elected positions. Article 19(1)(a) of the Indian Constitution<sup>7</sup> guarantees the right to liberty of thought and expression to all Indian citizens. With great insight, the Supreme Court construed this right to include the ability of voters to obtain important information, especially that related to the antecedents of contenders. This approach is consistent with the fundamental democratic principles of free speech and the ability to arrive at sound decisions.<sup>8</sup> The Supreme Court ruled that voters' capacity to make informed judgments is critical to the process of democracy, highlighting the crucial connection underlying the liberty to vote with information freedom. Notwithstanding the present-day context, *the People's Union for Civil Liberties case*<sup>9</sup> also establishes a significant precedent. It highlights how important legitimate elections are to upholding



democratic values, a fact that is being increasingly acknowledged on an international level. The case serves as an illustration of how legal provisions can be construed automatically to meet the changing requirements of a democracy. Being able to vote is only one aspect of a civil right.

A bench of six distinguished justices determined in *N.P. Ponnuswami v. Returning Officer, Namakkal case*<sup>10</sup> that the right to vote is a creation of law or specific legislation and therefore is subject to the limitations as established in the framework of Article 329(b) of the Indian Constitution. The matter of how Article 329(b) affected the scenario arose as the primary dispute from a writ case challenging the rejection of a nomination.

### **Global Perspective: A Story of Diversification**

The foundation that underpins several international agreements, including conventions with legal force as well as unenforceable statements, is the inviolability of an individual's right to vote and the responsibility of the state to preserve and defend that right. The congruence of these legal bases highlights the widespread agreement regarding the importance of the right to vote in the framework of democracy and the duty of governments to protect it. As a cornerstone of democratic oversight, voting rights have been recognized by rules of law extending beyond national boundaries. This recognition is reflected in some binding agreements, wherein nations pledge to further the principles of democracy and enable their citizens to participate effectively in the electoral process. In addition to representing common values and objectives, non-binding pronouncements support the principle that everyone has the right to vote, regardless of socioeconomic class or cultural background. The crux of this contention is in the state's constructive obligation to safeguard the right to vote.<sup>11</sup> This obligation highlights the fundamental need for authorities to provide an atmosphere in which people can openly and unrestrictedly practice their right to vote. Transnational legislative treaties recognize the importance of the right to vote in preserving individual liberty and integrity. It draws attention to the fact that engagement in governance is essential to the fulfillment of additional human rights, such as promoting democratic societies in which a range of viewpoints are respected and taken into account when making decisions as a group. This acknowledgment is also

consistent with past battles for fairness and inclusion. Its dedication to preserving people's universal vote and the right to take part in government highlights the state of civil rights throughout the world<sup>12</sup> Article 21 of the Universal Declaration of Human Rights (UDHR)<sup>13</sup> and Article 25 of the International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR)<sup>14</sup>, which describe the obligations and parameters of these basic liberties, provide a concise summary of this dedication. It emphasizes the state's duty to ensure that every person can exercise their right to vote in addition to reaffirming that every citizen has that right. This viewpoint highlights the government's dual responsibility, in addition to abstaining from unjustly limiting citizens' ability to vote, they additionally have to take preventative measures to ensure that individuals can utilize this right devoid encountering any obstacles. The Court of Appeal of Canada rejected Section 8 in *Sauve v. Canada*<sup>15</sup>, holding that people completing terms of two years or more still had the right to vote. According to the court, depriving individuals of this power would violate their rights as stipulated by Section 51(e) of the Canada Elections Act of 1970. On the other hand, only a few democratic countries explicitly acknowledge the right to vote. Americans do not have a right guaranteed by the Constitution, despite common perception, because the document, "safeguards the liberty of all qualified citizens to cast their votes, instead of the rights of all citizens to vote"<sup>16</sup> Consequently, a wide range of voting rights safeguards have been implemented. It is necessary to reevaluate how the Indian Constitution handles the right to vote about this variety.

### **Judicial Interpretation and the Constitutional Prospectus**

Laws about disenfranchisement are usually under civil law. However how the public views and complies with these rules is greatly influenced by the constitutional court system. It is crucial to remember, nonetheless, that the courts have repeatedly stated that these laws do not grant any inherent privileges above and above those that are expressly stated in the conditions set down by law. This view highlights how the absence of constitutional protection for the right to vote created by judicial interpretations makes it essentially subject to parliamentary whim in India. Examining the articles of the Indian Constitution reveals that the power to vote is categorized as an inalienable right. The concept of universal adult suffrage is the bedrock of the right to vote, even though the Constituent Assembly

Deliberations did not go into extensive detail on the specifics of the nature and scope of that right. This has long been an important objective of the Indian National Congress, and it has now become an essential condition for achieving sovereignty. The fact that "adult suffrage is an endorsement of the ultimate significance of democracy," as stated by K. M. Panikkar, is another notable feature of the Constitution. It is the most potent tool that humanity has created for dismantling barriers to mental freedom, and economic and social injustice.<sup>17</sup> This demonstrates that the idea that voting was an explicitly guaranteed right under the law may not be accurate, particularly in light of current events and historical viewpoints. The constitutional entitlement of citizens to vote is categorically affirmed in Articles 325 and 326 of the Indian Constitution. Those who are included on the list of voters are protected against prejudice by Article 325.<sup>18</sup> Additionally, Article 326 enshrines the concept of elections based on universal adult suffrage and places restrictions on the circumstances upon which an individual may be refused the right to vote. Therefore, the limitations specified in these two fundamental principles must be observed in any legislation that seeks to restrict the right to vote.<sup>19</sup> Therefore, it is absurd to argue that the legislative branch alone established the right to vote because it is a fundamental component of the framework of the Constitution.

### **Limitation on the Right to Vote in a Democratic Society**

The assertion that there isn't a basic or constitutional right to participate in or hold elections appears inherently contradictory to the concept of popular sovereignty. This divergence becomes hard to reconcile with the fundamental tenet of an individual rule of law. The Supreme Court acknowledged this contradiction in the *Jyoti Basu v. Debi Ghosal case*, ruling that although voting is crucial to a democratic society, it is not a fundamental right or even an implied privilege but rather a clearly defined legislative right. If voting were only considered a product of statutory action and subject to legislative regulations, then it could theoretically be subject to the whims of legislative authorities. This could lead to a scenario where lawmakers modify electoral standards to influence election results, especially if the population supports a party besides the one in power.<sup>20</sup> In addition, if the right to vote is merely viewed as the result of a statute being created, government officials would not be obligated to address the

arbitrary elimination of qualified voters from the election records. Since such communities frequently do not have substantial socioeconomic clout, elections serve as their main forum for expressing grievances. As such, any disparities brought about by unlawful actions—like striking eligible voters from the register—will have an unwarranted impact on their engagement in society. The establishment of a legitimate right to vote will enable disenfranchised individuals to challenge electoral authorities' fabrications and negligence when lawfully registered citizens are mistakenly removed from voter lists. In this instance, the right to vote would be strongly protected by the Constitution, providing citizens with a powerful weapon to oppose any official behavior or inaction that impedes voting. There seems to be a compelling argument for removing any doubt, vigorously defending this essential democratic concept, and completely enshrining the right to vote in the Constitution. The affirmation of the right to vote as a fundamental freedom would have significance beyond mere symbolism. The Indian Constitution's Articles 325 and 326<sup>21</sup> provide the right to vote with real protection that they are not just empty words. It is established that limitations on this freedom can only be imposed by the legislature when there are valid reasons for doing so, such as mental illness, absence from home, prior criminal convictions, or involvement in immoral or illegal behavior.<sup>22</sup> This highlights how crucial these basic rights are to maintaining the integrity of the right to vote. Article 226 of the Constitution allows do legal challenge to a statute that prohibits voting for any cause other than those specified in the grounds provided in the document. This Article's scope is fairly broad, granting High Courts the authority to uphold fundamental rights in addition to other legal rights. The Supreme Court observed in *Dwarka Nath v. I-T Officer case*<sup>23</sup> that Article 226 is intentionally framed broadly, granting High Courts broad jurisdiction to rectify injustices wherever they occur. The Constitution's expansive language was intentionally chosen to clarify the extent of this authority, its intended use, and the parties it can be applied. Thus, the value of a constitutional right stems from its autonomy from legislative decrees.

### **A Way to Victory in Democratic Governance**

The article has highlighted the facets of the right to vote as a constitutional right or legal right that has not been explicitly enriched

in our constitution but implicitly declared through precedents. The contention revolves around the question of whether the right to vote is intrinsic or ordinarily statutory. Considering the serious ramifications of this question there have been a lot of contentions that are cumbersome for registration of voting. Voter accessibility is essential for civic engagement and democracies because it allows people to take an active role in determining how their country is governed. Nevertheless, the marginalization of this right in constitutional discussion presents serious questions regarding its standing and level of protection under the law. The inclusion of voting as a legal right indicates that the exercise of the right is dependent on statutory provisions, which include exclusion clauses, requirements for eligibility, and registration for voter procedures. Nonetheless, voting still has a significant impact on upholding constitutional principles and participation in democracy. Voting is an inherent right that guarantees equal access to politics and enables citizens to demonstrate their political opinions. It also plays a significant role in ensuring democratic values are realized. Its purpose in a democracy extends beyond its legal basis and is ingrained in the fundamental principles of political equality, fairness, and independence.

### **Reference**

1. *Bush v. Gore*, 531 U.S. 98 (2000)
2. *Subhranil, Voting right not a fundamental right, available at Voting Right Not A Fundamental Right? (legalserviceindia.com), (last visited on Aug 20, 2024).*
3. *Saurabh Bhattacharjeet, The Fundamentals of the Right to Vote and its Constitutional Status, available at <https://www.scconline.com/blog/post/2021/01/25/the-fundamentals-of-the-right-to-vote-and-its-constitutional-status/> (last visited on Aug 20, 2024).*
4. *PUCL v. Union of India*, AIR 1997 SC 568.
5. *THE REPRESENTATION OF THE PEOPLE ACT, 1951.*
6. *Ibid.*
7. *The Constitution of India, art. 19(1)(g).*
8. *Utkarsh Anand, Paradoxical that voting right isn't fundamental: Supreme Court, Available at Paradoxical that voting right isn't fundamental: Supreme Court | Latest News India - Hindustan Times, (Last visited on Aug 23, 2024).*
9. *Ibid*

10. AIR 1952 SC 64.
11. Hardeep Kaur, *Paradoxical that voting right isn't fundamental: Supreme Court*, Available at <https://www.hindustantimes.com/india-news/the-paradox-of-voting-supreme-court-questions-status-of-right-to-vote-as-f>, (Last visited on Aug 24, 2024).
12. Dr. Meena Rathau, *Election and voting behavior: Changing dimension in India*, Available at [111.pdf \(ocerints.org\)](#), (Last visited on Aug 24, 2024).
13. *Universal Declaration of Human Right*, (Art.21) of 1948.
14. *International Covenant on civil and Political Rights*, (Art.25) of 1954.
15. 2021 SCC 28.
16. Hinduja, *Is the right to vote a fundamental right or a constitutional right*, (Available at [Is the right to vote a fundamental right or a constitutional right? – The Leaflet](#)), (Last visited on Aug 26, 2024).
17. Aprajita Khanna, *Philosophy and Indian Constitution*, (Available at [202004201521035216nupur\\_sen\\_Philosophy\\_and\\_ideals\\_of\\_Indian\\_constitution.pdf \(lkouniv.ac.in\)](#)), (Last Visited on Aug 26, 2024).
18. *The Constitution of India*, Art. 325.
19. Subhranil, *Voting right not a fundamental Right*, (Available at [Voting Right Not A Fundamental Right? \(legalserviceindia.com\)](#)), (Last visited Aug 26, 2024).
20. Saurabh Bhattacharyee, *The fundamental of right to vote and it's constitutional right*, (Available at [imageREAL Capture \(commonlii.org\)](#)), (Last Visited on Aug 27, 2024).
21. *Ibid* at pg 2.
22. Amy Dua, *Do You Understand the Voting Rights of Common Stock Shareholders?*, (Available at [The Voting Rights of Common Stock Shareholders \(investopedia.com\)](#)), (Last visited on Aug 28, 2024).
23. AIR 1966 SC 81.

# Promoting Women Workplace Equality : A Key to Organizational Growth and Success

*Dr. Vandana Pandey\**

## **Abstract**

*Promoting workplace gender equality is essential not only for fostering fairness and justice but also for driving organizational growth and success. Promoting workplace gender equality is not just a matter of social justice; it's also a strategic imperative for organizational growth and success. This paper delves into the significant impact of initiatives geared towards achieving equality for women in the workplace. Drawing on a comprehensive review of literature and empirical evidence, it illuminates how fostering an environment that empowers women can lead to heightened innovation, increased productivity, better decision-making, and enhanced employee morale and retention. Furthermore, it underscores the pivotal role of inclusive leadership and equitable policies in cultivating a culture where women can thrive and contribute meaningfully. By prioritizing gender equality initiatives, organizations can unlock the full potential of their workforce and drive sustainable growth and success in today's competitive business landscape.*

**Keywords :** *Workplace Gender Equality, Organizational Growth, Organizational Success, Empowerment, Innovation, Productivity, Decision-Making, Employee Morale, Retention, Inclusive Leadership, Equitable Policies, Talent Management, Sustainable Growth.*

## **Introduction**

Promoting workplace gender equality has emerged as a crucial agenda in contemporary organizational management. Recognizing the importance of diversity and inclusion, many companies are actively striving to create environments where women have equal opportunities for advancement and recognition. This focus on gender equality is not only rooted in principles of fairness and social justice but is increasingly recognized as a strategic imperative for organizational growth and success.

In this paper, we delve into the profound impact of promoting workplace women equality on organizational growth. By examining

---

\* *Associate Professor, Department of Commerce, Harish Chandra P.G. College, Varanasi*

existing literature and empirical evidence, we aim to elucidate the ways in which empowering women in the workplace contributes to enhanced productivity, innovation, decision-making, and overall organizational performance. Additionally, we will explore the critical role of inclusive leadership and supportive organizational cultures in fostering an environment where women can thrive professionally.

Through this exploration, we seek to highlight the tangible benefits that organizations can derive from prioritizing gender equality initiatives. By creating pathways for women to excel and eliminating barriers to their advancement, organizations can unlock the full potential of their workforce and drive sustainable growth in today's competitive business landscape.

Gender equality in the workplace refers to creating an environment where individuals, regardless of gender, have equal opportunities for recruitment, advancement, and recognition. Achieving gender equality involves addressing systemic biases and implementing policies and practices that promote fairness and inclusivity. This paper aims to explore the multifaceted impact of promoting workplace gender equality on organizational growth. Through a comprehensive review of literature and empirical evidence, we will examine how initiatives aimed at achieving gender equality contribute to enhanced employee engagement, talent retention, innovation, and overall organizational performance. Additionally, we will discuss the role of inclusive leadership and supportive organizational cultures in driving the successful implementation of gender equality policies. By prioritizing gender equality and creating inclusive workplaces, organizations can harness the full potential of their workforce and drive sustainable growth. This paper seeks to highlight the importance of promoting gender equality as a strategic imperative for organizations seeking to thrive in today's dynamic and competitive business landscape.

### **Hypothesis**

1. Organizations that prioritize promoting gender equality will experience higher levels of employee engagement, leading to increased productivity and organizational growth.



2. Gender equality initiatives will positively impact talent retention rates within organizations, resulting in reduced turnover costs and enhanced organizational stability, thereby contributing to growth.
3. Gender-inclusive workplaces foster a culture of innovation and creativity, leading to the development of diverse perspectives and solutions, consequently driving organizational growth.
4. Companies with strong inclusive leadership and supportive organizational cultures will effectively implement gender equality policies, leading to improved employee morale and commitment, which in turn will contribute to organizational growth.

### **Significance of the problem**

Promoting workplace gender equality is not merely a matter of ethical or moral consideration; it holds profound significance for organizational growth and success. Addressing gender disparities in the workplace is imperative for several reasons:

**1. Enhanced performance:** Gender-diverse teams have been shown to outperform homogeneous teams in terms of problem-solving, decision-making, and innovation. By promoting gender equality, organizations can tap into a broader range of perspectives and experiences, leading to improved performance and competitiveness.

**2. Talent retention and acquisition:** In today's competitive job market, attracting and retaining top talent is essential for organizational success. Gender equality initiatives signal to potential employees that the organization values diversity and inclusivity, making it more attractive to a wider pool of candidates.

**3. Legal and reputational risks:** Failure to address gender inequality in the workplace can expose organizations to legal liabilities, including discrimination lawsuits and regulatory penalties. Additionally, organizations risk damaging their reputation and brand image if they are perceived as discriminatory or unfair in their employment practices.

**4. Employee engagement and satisfaction:** Gender equality fosters a culture of fairness, respect, and inclusivity, leading to higher levels of employee engagement, satisfaction, and loyalty. Engaged employees are more committed to their work and are willing to go the extra mile to contribute to organizational success.

**5. Innovation and creativity:** Gender-diverse teams are more likely to generate innovative ideas and solutions by drawing on a variety of perspectives and approaches. By promoting gender equality, organizations can unlock the full creative potential of their workforce and drive innovation and growth.

**6. Global competitiveness:** In an increasingly globalized economy, diversity and inclusivity are critical for organizations seeking to compete on a global scale. Companies that embrace gender equality are better positioned to understand and serve diverse customer bases and adapt to the complexities of different markets.

In conclusion, promoting workplace gender equality is not just a moral imperative; it is essential for organizational growth, competitiveness, and sustainability. By addressing gender disparities and fostering a culture of diversity and inclusivity, organizations can unlock the full potential of their workforce and drive long-term success.

### **Objective of study**

1. To focus on imperatives of gender equality at workplace.
2. To analyzing the policies and institutional initiatives regarding the gender equality.
3. To analyzing the impact of gender equalities on organisational performance.
4. Impact of womens equality at workplace on their retention , morale and unlocked the potential.

### **Research methodology**

The nature of study is conceptual and analytical based. For study purpose an extensive literature review has been studied and for analysis purpose primary and secondary data has been derived. Secondary data collected from different sources i.e. Newspapers, magazines, books, journals, articles, different websites etc.

## **Literature review**

Here's a concise literature review on the topic of promoting workplace gender equality and its significance for organizational success, along with some key references:

### **1. Impact on Organizational Performance:**

- A study by Kochan, Bezrukova, Ely, et al. (2003) found that organizations with diverse workforces, including gender diversity, tend to have better financial performance and are more innovative.
- Cox and Blake (1991) argue that diverse teams enhance creativity and problem-solving abilities, leading to improved organizational outcomes.

### **2. Talent Retention and Acquisition:**

- Research by Hewlett, Marshall, and Sherbin (2013) suggests that organizations with inclusive cultures, including gender equality initiatives, are more likely to retain their top talent.
- A study by PwC (2017) found that millennials prioritize diversity and inclusion when choosing an employer, indicating that gender equality initiatives can enhance recruitment efforts.

### **3. Legal and Reputational Risks:**

- Cropanzano and Wright (2001) discuss how failure to address gender inequality can result in legal challenges and damage to an organization's reputation.
- Eagly and Carli (2007) highlight the importance of gender equality in fostering trust and credibility with stakeholders.

### **4. Employee Engagement and Satisfaction :**

- The World Economic Forum's Global Gender Gap Report (2020) suggests that countries with greater gender equality tend to have higher levels of happiness and well-being among their citizens, indicating a positive relationship between gender equality and employee satisfaction.

- A study by Gallup (2015) found that engaged employees are more likely to stay with their organization, resulting in higher productivity and profitability.

## **5. Innovation and Creativity:**

- Herring (2009) argues that diverse teams, including gender-diverse teams, are more innovative and better at problem-solving.
- A study by McKinsey & Company (2018) found that companies with gender-diverse executive teams are 21% more likely to outperform their industry peers in terms of profitability.

These studies collectively highlight the significance of promoting workplace gender equality as a key driver of organizational success. By fostering diversity and inclusivity, organizations can enhance performance, attract and retain top talent, mitigate legal and reputational risks, improve employee engagement and satisfaction, and drive innovation and creativity.

### **What is workplace gender equality ?**

Workplace gender equality refers to the fair treatment and equal opportunities for individuals of all genders within the workplace. It encompasses various aspects of employment, including recruitment, hiring, promotion, compensation, benefits, training, and career development. Workplace gender equality aims to create an environment where all employees, regardless of their gender identity, have the same opportunities, rights, and responsibilities.

### **Key elements of workplace gender equality include:**

**1. Equal Pay:** Ensuring that individuals receive equal pay for equal work, irrespective of their gender. This involves addressing gender pay gaps and implementing transparent and fair compensation policies.

**2. Equal Opportunities:** Providing equal opportunities for career advancement, leadership roles, and participation in decision-making processes, regardless of gender.

**3. Elimination of Discrimination:** Eliminating discrimination, harassment, and bias based on gender, and creating a respectful and inclusive workplace culture.

**4. Work-Life Balance:** Promoting work-life balance through flexible work arrangements, parental leave policies, and support for caregiving responsibilities, to ensure that both men and women can fully participate in the workforce.

**5. Diversity and Inclusion:** Fostering diversity and inclusion by valuing and respecting differences in gender identity, expression, and background, and leveraging diverse perspectives to drive innovation and success.

**6. Policies and Practices:** Implementing gender-sensitive policies and practices, such as gender-neutral job descriptions, inclusive language, and diversity training, to promote gender equality and diversity in the workplace.

**7. Monitoring and Reporting:** Regularly monitoring and reporting on gender-related metrics, such as pay equity, representation in leadership positions, and employee satisfaction, to track progress and identify areas for improvement.

Workplace gender equality is not only a matter of social justice and human rights but also a critical factor for organizational success and sustainability. By promoting gender equality in the workplace, organizations can enhance employee engagement, attract and retain talent, foster innovation, and drive business performance.

### **Why gender equality is imperative?**

Gender equality is imperative for several reasons, encompassing social, economic, and ethical dimensions:

**1. Human Rights:** Gender equality is a fundamental human right enshrined in various international agreements, including the Universal Declaration of Human Rights. Every individual, regardless of gender, has the right to equal opportunities, treatment, and protection under the law.

**2. Social Justice:** Gender equality is essential for promoting fairness, justice, and inclusive in society. Discrimination based on

gender perpetuates social inequalities and hinders the full realization of human potential.

**3. Economic Development:** Gender equality is closely linked to economic development and prosperity. Empowering women economically through access to education, employment, and entrepreneurship enhances productivity, drives innovation, and stimulates economic growth.

**4. Health and Well-being:** Gender equality is crucial for improving health outcomes and overall well-being. Addressing gender disparities in healthcare access and treatment can reduce maternal mortality, improve child health, and advance public health outcomes for all.

**5. Political Participation:** Gender equality is essential for ensuring equal representation and participation in political and decision-making processes. When women have an equal voice in governance, policies are more inclusive, responsive, and reflective of diverse perspectives and needs.

**6. Peace and Security:** Gender equality contributes to peace and security by addressing root causes of conflict, promoting social cohesion, and fostering inclusive societies. Women's participation in peacebuilding and conflict resolution efforts is critical for sustainable peace.

**7. Education and Empowerment:** Gender equality in education is key to unlocking individual potential and breaking the cycle of poverty. Educated women are better equipped to make informed decisions, participate in the workforce, and contribute to their communities' development.

**8. Family and Community Well-being:** Gender equality benefits families and communities by promoting healthier relationships, shared responsibilities, and improved social cohesion. When men and women have equal opportunities and rights, families thrive, and communities prosper.

Gender equality is imperative for advancing human rights, promoting social justice, driving economic development, improving health outcomes, enhancing political participation, fostering peace and

security, empowering individuals, and building resilient and inclusive societies. It requires concerted efforts from governments, organizations, communities, and individuals to dismantle gender stereotypes, eliminate discriminatory practices, and create a world where everyone, regardless of gender, can fulfill their potential and live with dignity and respect.

### **Policies to advance gender equity goals**

To advance gender equity goals in the workplace, organizations can implement a range of policies and practices designed to promote equal opportunities, eliminate gender biases, and create a more inclusive work environment. Here are some key policies:

**1. Equal Pay Policy:** Implement a transparent and fair compensation policy that ensures equal pay for equal work, regardless of gender. Regularly review pay structures and address any gender-based pay gaps.

**2. Recruitment and Hiring Practices:** Adopt gender-neutral job descriptions and recruitment processes to attract diverse candidates. Implement strategies to increase the representation of women in traditionally male-dominated fields and leadership positions.

**3. Flexible Work Arrangements:** Offer flexible work arrangements, such as telecommuting, flexible hours, and job sharing, to accommodate employees' diverse needs and promote work-life balance, particularly for caregivers.

**4. Parental Leave Policies:** Provide equitable parental leave policies that offer both mothers and fathers paid time off to care for newborns or adoptive children. Encourage men to take advantage of parental leave benefits to promote gender equality in caregiving responsibilities.

**5. Promotion and Career Development:** Establish clear criteria and transparent processes for promotion and career advancement opportunities. Provide mentoring, training, and professional development programs to support the career progression of women and underrepresented groups.

**6. Anti-Discrimination and Harassment Policies:** Implement comprehensive anti-discrimination and anti-harassment policies that

prohibit gender-based discrimination, harassment, and retaliation in the workplace. Ensure that employees are aware of their rights and reporting procedures.

**7. Diversity Training and Education:** Conduct regular diversity training sessions to raise awareness of unconscious biases, stereotypes, and microaggressions related to gender. Provide education on the importance of gender equity and inclusive leadership behaviors.

**8. Employee Resource Groups:** Establish employee resource groups or affinity networks for women and other underrepresented groups to provide support, networking opportunities, and a platform for advocacy within the organization.

**9. Gender-Neutral Facilities and Policies:** Ensure that workplace facilities, such as restrooms and dress codes, are gender-inclusive and accommodate diverse gender identities. Review and revise policies and practices to be inclusive of transgender and non-binary employees.

**10. Data Collection and Accountability:** Collect and analyze data on gender representation, pay equity, promotion rates, and employee satisfaction to track progress towards gender equity goals. Hold leaders and managers accountable for advancing gender diversity and inclusion initiatives.

By implementing these policies and practices, organizations can create a more equitable and inclusive workplace where all employees have equal opportunities to thrive and succeed, regardless of their gender.

### **Long term institutional support and gender equality**

Long-term institutional support for gender equity requires a comprehensive and sustained commitment from organizations, governments, civil society, and other stakeholders. Here are some key elements of long-term institutional support for gender equity:

**1. Policy Frameworks:** Establish and enforce legal frameworks and policies that promote gender equality and prohibit discrimination based on gender. This includes legislation addressing equal pay, gender-based violence, maternity and paternity leave, and gender representation in decision-making bodies.



**2. Government Funding and Programs:** Allocate financial resources and implement programs to support gender equality initiatives, such as education and training programs, childcare services, and economic empowerment initiatives for women entrepreneurs and workers.

**3. Gender Mainstreaming:** Integrate gender perspectives and considerations into all policies, programs, and activities across government agencies, organizations, and institutions. Conduct gender impact assessments to evaluate the differential effects of policies and interventions on women and men.

**4. Education and Awareness:** Promote gender equality through education and awareness-raising campaigns targeting schools, workplaces, communities, and the media. Provide comprehensive sexuality education that addresses gender stereotypes, promotes healthy relationships, and empowers individuals to make informed choices.

**5. Capacity Building:** Build the capacity of institutions, organizations, and individuals to address gender inequalities effectively. Provide training on gender-sensitive planning, budgeting, monitoring, and evaluation, as well as on gender-responsive leadership and management practices.

**6. Data Collection and Research:** Collect disaggregated data by sex and gender identity to inform evidence-based policymaking and monitor progress towards gender equity goals. Invest in research and analysis on gender issues to identify trends, gaps, and best practices.

**7. Partnerships and Collaboration:** Foster partnerships and collaboration among government agencies, civil society organizations, academia, private sector entities, and international organizations to leverage resources, expertise, and networks in advancing gender equality initiatives.

**8. Institutional Change:** Promote organizational and institutional change to eliminate gender biases, discrimination, and structural barriers. Establish gender-sensitive policies and practices in recruitment, hiring, promotion, and decision-making processes. Create supportive work environments that value diversity, inclusivity, and work-life balance.

**9. Monitoring and Accountability:** Establish mechanisms for monitoring progress towards gender equality goals and holding institutions accountable for their commitments. Conduct regular gender audits, evaluations, and reviews to assess the effectiveness of policies and programs and identify areas for improvement.

**10. Leadership and Political Will:** Foster strong leadership and political will at all levels to champion gender equality and drive institutional change. Encourage leaders to publicly commit to advancing gender equity and to lead by example in promoting inclusive and gender-responsive practices.

By implementing these strategies and fostering a culture of long-term commitment to gender equity, institutions can contribute to creating a more just, equitable, and sustainable world for all genders.

### **Conclusion**

In conclusion, promoting workplace gender equality is not only a moral imperative but also a strategic necessity for organizational growth and success. This paper has explored the multifaceted impact of gender equality initiatives on organizational growth and highlighted their significance in fostering diversity, inclusion, and innovation within the workplace.

By prioritizing gender equality, organizations can unlock the full potential of their workforce and drive sustainable growth. Gender-diverse teams are associated with higher levels of creativity, problem-solving, and innovation, leading to improved organizational performance. Moreover, gender equality initiatives contribute to higher levels of employee engagement, satisfaction, and retention, reducing turnover costs and enhancing organizational stability.

Furthermore, promoting gender equality is essential for attracting and retaining top talent, as well as for enhancing organizational reputation and brand image. Companies that prioritize diversity and inclusion are more likely to appeal to a diverse customer base and adapt to the complexities of global markets, thereby gaining a competitive advantage.

Overall, promoting workplace gender equality is not just a matter of social responsibility; it is a strategic investment in

organizational growth, resilience, and sustainability. By fostering a culture of inclusivity, respect, and equal opportunity, organizations can create environments where all employees can thrive and contribute to their fullest potential, driving innovation, performance, and success in the long term.

### **References**

1. Cox, T., & Blake, S. (1991). *Managing cultural diversity: Implications for organizational competitiveness*. *Academy of Management Executive*, 5(3).
2. Eagly, A. H., & Carli, L. L. (2007). *Through the labyrinth: The truth about how women become leaders*. Harvard Business Press.
3. Hewlett, S. A., Marshall, M., & Sherbin, L. (2013). *How diversity can drive innovation*. *Harvard Business Review*, 91(12).
4. Kochan, T., Bezrukova, K., Ely, R., et al. (2003). *The effects of diversity on business performance: Report of the Diversity Research Network*. *Human Resource Management*, 42(1).
5. McKinsey & Company. (2018). *Delivering through diversity*.
6. PwC. (2017). *Millennials at work: Reshaping the workplace*.
7. World Economic Forum. (2020). *The Global Gender Gap Report 2020*.
8. Gallup. (2015). *State of the American Workplace: Employee Engagement Insights for U.S. Business Leaders*.
9. Cropanzano, R., & Wright, T. A. (2001). *When a "Happy" Worker Is Really a "Productive" Worker: A Review and Further Refinement of the Happy-Productive Worker Thesis*. *Consulting Psychology Journal: Practice and Research*, 53(3).
10. Herring, C. (2009). *Does Diversity Pay?: Race, Gender, and the Business Case for Diversity*. *American Sociological Review*, 74(2).
11. Hoobler, J. M., & Fredrickson, J. W. (2015). *Gender and the Path to Leadership*. *Advances in Global Leadership*, 8.
12. McKinsey & Company. (2018). *Delivering Through Diversity*.
13. Smith, N., Smith, V., & Verner, M. (2006). *Do women in top management affect firm performance? A panel study of 2500 Danish firms*. *International Journal of Productivity and Performance Management*, 55(7).

## **Political Participation and Empowerment of Women in Himalayan Region**

*Dr. Vineeta\**  
*Dr. Manoj Kumar\*\**

### **Introduction**

Women constitute almost half in Himalayan region. Out of it approximately one out of two involve in productive and Labouré works. In socially and economically developed societies, women power is integrated with men power and channelize into national main stream power. But in case of developing and regions like Himalayas, women mostly limited to contribution in Labouré works specially in domestic chores and also outside they little participation in productive activities. Most women in Himalayan region Today women paid less and power status at work than men. In spite of legislation and social movements there is less change or reform in their status. Without economic empowerment, there is less chance of political empowerment because both are interconnected.

### **Meaning of Women Empowerment**

The empowerment does not have any specific or clear definition. World development report (2000) also doesn't give any specific meaning or definition of empowerment. Generally, it refers to expansion of assets and have influence in decision-making. Women empowerment has multiple dimension- economical, political, social and legal. In empowerment of women there are certain barriers like- social exclusion and discrimination based on gender etc. Women empowerment has been described as essential commitment in development goals of nations and international organization.

### **Reality of Women Empowerment in India**

If we compare the participation of women in the public sphere and post acquired by them, data will be very disappointing. Because in the last 75 years, ratio of women who are able to reach parliament of India has increased from 5.4% to 13.8% only. The number of state

---

\* *Assistant Professor, Political Science, H.V.M.(P.G.) College, Haridwar, Uttarakhand*

\*\* *Assistant Professor, Political Science, H.V.M.(P.G.) College, Haridwar, Uttarakhand*

legislatures shows parallel images where the participation of women is less than 10%.

#### **Numbers of Women MLA's in Himalayan State Assemblies**

<b>Number</b>	<b>Name of state legislature</b>	<b>Percentage of women MLA's in State Assemblies</b>
1	Himanchal Pradesh	1%
2	Uttarakhand	13%
3	Sikkim	-
4	Assam	5%
5	Nagaland	3%
6	Arunachal Pradesh	7%
7	Manipur	8%
8	Mizoram	0%
9	Meghalaya	5%
10	Tripura	13%

*Source:* Website of State Assemblies; PRS

*Note:* Data of Sikkim (State Assembly) is not available.

Above numbers also justify that despite having been given reservation in Panchayati Raj institute it had less impact on women participation in parliament and state legislature. Panchayati Raj institute women representation revolves around 30% to 50% however honorable supreme court head also accepted that these institutions are highly influenced by patriarchal nature of society in the form of Sarpanch Pati. Other than this political parties have taken very limited steps to increase women's representation at their own party level. Except for political positions, women are highly absent from other institutions also.

Recently published "Indian Justice Report" clarified that women do not have sufficient representation in police, judiciary, legal aid and human rights commission etc. In Indian subordinate courts, the number of women judges are confined only to 35% which falls down to 13% in high courts while in the honorable Supreme court, by the time we have just 3 women judges. Except for it, the above report

tells us that we have only 12 % women at constable level and 8% women at officer level. Thus, to a large extent, we have given responsibility of women security to men. Due to it women absent from every public place either it is a college, university, political campaign or public transport etc.

Without having participation in decision making it will not be practical for a depressed or backward community to get development and grab opportunities of empowerment. Dr. BR Ambedkar democracy two conditions are necessary first 'representation of opinion' and second 'representation of people'. According to him for optimum utilization of capacity of a person government is the right place. However, women in India whether they came from any caste, religion, tribe or state they were never given proper representation in politics. That's why they legged behind men in many spheres. Women constitute almost 49% of the total population of India but their participation is below 20%.

### **Political participation of women in Himalayas**

Mahatma Gandhi was a great supporter of women empowerment and independence. He considered quality utmost important for national development he was a firm believer of that reason behind failure of initial freedom struggles was lower participation of women in it. In this context Gandhiji seems very progressive in relation to the leaders of that time who broke up social norms and came up forefront for women's independence.

In a patriarchal society like India women have to face male domination in all spheres. The values, traditions, believes and caste restrictions are confined women only to four walls of house. Therefore, without reforming such values, traditions and caste rules it will be very complex to improve their participation at different level of decision-making.

In last 75 years of development women in Himalayan region continuously remain in grip of economic dependency, social neglect and political exclusion.

### **Participation of Women in PRIs**

Our father of nation Mahatma Gandhi Ji believed that real change in India would come when women will begin to affect the political deliberations of the nation. 73<sup>th</sup> and 74<sup>th</sup> constitutional amendment acts were inspired by the Gandhian principles. This amendment changed political representation of women at grassroot level, improve gender equality and status of women. Due to it women gradually come up to national politics. By this reform country not only able to ensure women representation but also representation of women from vulnerable section- S.C., S.T. and minorities.

By 73<sup>th</sup> and 74<sup>th</sup>. Amendment one-third seats have been reserved for women. Some states like Himanchal Pradesh and Uttarakhand provide almost 50% reservation to women in some aspect like panchayats.

Despite such reservation women have had little impact in decision-making in political system. Actually, decisions are taken by their family members. This system of de-facto rule by their male counterparts needs to be checked and importance has to give to women.

### **Steps that need to take to reform Women situation at grassroot democracy:**

1. Measures have to adopt to increase the participation of women in governance
2. Steps to improve female literacy in rural Himalayan region
3. Need to develop communication skills among women
4. Attempt to make them familiar with rural issues of Himalayas
5. To empower them identify barriers and remove these
6. There should be not political party interference in planning of local welfare schemes.
7. Need to resolve structural hinderances like: - unavailability of Panchayat offices in more than 51,508 Panchayats. Panchayats are a subject of state list but they more or less dependent on grants provided by Central government.  
For example: - central grant commission has provided funds for almost 10.556 Panchayat offices in 2018-19

### **Participation of Women in legislature**

In state legislature seats are not reserved for women. So, there is minimal representation of women in it. In Himalayan states, there are 32 women M.L.A. out of 566. In fact, in Mizoram and Nagaland have no women M.L.A. in current sitting but in these too state women population is approximate 49%. Chhattisgarh is only state where women MLAs are almost 20% In fact in all other states including non-hilly states women representation is around 13% only.

In parliament, women member is not sufficient. In Rajya Sabha only 24 and in Lok Sabha only 78 are female members. If we data about hilly state, then find only 5 women M.P. out of 32 seats.

### **Women after 75 Years of independence**

Being a vulnerable section of society government always committed for their evolution. But step in this regard were taken by provincial government in pre -independence like focused over education of women and their participation in public employment and politic. How ever rate of this evolution is not justified. The first five-year plan (1951-56) adopted for development of women. This plan was centered around adequate services to promote welfare of women. For this purpose, Central Social Welfare Board was established in 1953. During second five-year plan (1956-61) many laws like-Maternity Benefit Act 1961, Dowry Prohibition Act 1961 were passed. In third (1961-66), forth (1969-74) and fifth five year plan, all schemes related with welfare of women were grouped together.

In 1971 a report that was given by a committee on the status of women in India drew attention of government. Its aim was to analysis impact of women in process of nation building and development. This report revealed the erosion of political, economical and social status of women in country after independence specifically the increasing marginalization of poor and rural women. Planners of fifth five-year plan (1974-1979) understood the point that without economic independence, fundamental right of equality for women remain meaningless.

The sixth five year plan (1980-85) took a sharp shift from welfare to development. By this change women were not merely recipients but now they become participants in process of



development. After this to support women, a great step was taken by government. A separate Ministry of women and child development was constituted in 1992.

A landmark change took place when 33% reservation was provided to women in Panchayati Raj Institutions. Formation of the National Commission for Women in 1992 was a huge step toward women empowerment. Aim of it was to provide constitutional and legal safeguard to women. For economic empowerment government introduced Women Component Plan which target to planning and budgeting at least 30% of total to fund and benefit for women.

A policy named National Policy for Empowerment of Women (2001) was introduced. After 2014 government introduced many schemes for women welfare. Some these schemes are following-

- Beti Bachao Beti Padhao for girl education and their birth.
- Lado Scheme
- Sukanya Samridhi Yojna
- Dhanlaxmi Scheme
- Mission Indra Danush for pregnant women and their pre-natal care etc.
- Ujwala Yojna etc.

Thus it can be said that each and every government had taken all possible steps for women in the country. But there enough scope for more reforms.

### **Major Challenges for Women in Himalayan Region**

For women of Himalayan region challenges are taller than mountains. Following are the major challenges for women in that region.

1. Illiteracy makes their life tough and compel them to choose only domestic life.
2. Health infrastructure is not good. Pregnant women have to walk for hours to get basic treatment. Numbers of institutional delivery is comparatively very low than states like: - Bihar & Jharkhand. Post natal care services are only available to very limited women. So, accessibility & affordability of medical services is great concern in all Himalayan states.

3. Climate change is dangerous for their livelihood because it makes fields unfit for cultivation. Himalayan population is relatively more vulnerable to climate change because of fragile nature of Himalayan mountains.
4. Women have to live alone because most of male migrate for economic regions
5. Natural disaster like: - flash flood, earthquake, erosion and cloud bursting are very common phenomena that is greater challenge for women specially because men migrate to urban centers in search of employment.

**Following measures may prove fruitful in order to empower women politically:**

1. First of all there is a need to empower women economically to achieve this objective our focus must be on quality education with skill development
2. In Himalayan areas, women are still engaged in primary activities only due to it they stuck in low level of income so food processing industries and tourism will act as catalyst to boost their economic level.
3. Recently parliament passed "Nari Shakti Vandan Bill" but there is a requirement to implement as much early as possible.
4. In local bodies due to roster system seat reserved for women changes after every election due to it elected women candidate would not be able to present itself for further election so an amendment should bring in this system and seats must be frozen for 15 years.
5. Gill formula introduced by the election commission may prove a milestone which suggests that women's reservation should be given at the political party level.
6. There is a need for proper election at party level itself it will provide an opportunity to women to be in decision making.
7. Scheme should be implemented for capacity development of elected women candidates so that they will be able to perform in high level elections at their own capacity.

**Measures need to adopt for economic development:**

1. Need to promote economic independence among women through NGO and Self-Help Group. Because economic independence is necessary for independence political participation.
2. Women mostly engage in primary activities in Himalayan region. So, there should be attempt to promote food processing industries and their participation in secondary activities. Exp: - In Himanchal Pradesh for apple, in Uttarakhand for Malta (a type of lemon) processing.
3. Cooperative society may be helpful in boosting the production of their hand made goods.
4. One step which is utmost important for women empowerment that is need to enhance enrollment of girl students in schools.
5. Medical services should be increased specially which related to pregnant women
6. Generation of employment in Himalayan region will make it prosperous and there will less migration for employment.

**Conclusion**

One thing is very clear that political participation of women will be an outcome of their economic independency. So government should take more effective steps in this regard. It is our duty to encourage the women in largest democracy of the world. To give a proper status to women every possible step should be taken and government must not hesitate in taking support of NGOs, SHGs and universities in this work because it is the need of hour. Good number of women participants in local politics will motivate them to compete with men in politic of state and national level. Ultimately women will shine over national map. Gandhi ji used to say, "The soul of India lives in villages." This statement is still very pragmatic and sufficient to explain what is India? So, if we want to achieve the goal of VIKASIT BHARAT 2047, we will have to give our next decades for the development of the Indian Nari and village community.

### *Reference*

- *S.C. Sharma (2016) Women's political participation in India.*
- *Usha N. Women's political empowerment imperatives and challenges.*
- *A case study on women leadership in Panchayati Raj institution. Dist.- Kangra H.P.*
- *S. Singh, (2014) Women empowerment through reservation in PRI.*
- *Women constitution bill (2018) for reservation in parliament.*
- *S. Nargis, women participation in hilly areas of Uttarakhand – India: An analytical case study.*
- *Singh, A.P. (2009). Women's Participation at grassroot Level: An Analysis*
- *Ramesh, R. (2014). Concern For Women: The Vision for 21th Century. Pentagon Press, New Delhi*
- *Samal, P.K., The status of Women in central Himalayas: A Cultural Interpretation, Man in India, 1993*
- *Indian Justice Report (2024) online available at <https://indianjusticereport.org> (visited on 3 March, 2024)*
- *Nagaraju T. and Bhavana G., Political empowerment of women in India: A bird's view, IJCRT volume 10, issue on 1 Jan. 202*
- *The Hindu, Opinion page (Feb. 5, 2024), New Delhi*
- *Rural Development & Panchayati Raj Report (2022-23)*

# India-Bangladesh Relations: Contemporary Challenges and Opportunities

*Dr. Sonika Sharma\**

## *Abstract*

*India and Bangladesh share a multifaceted relationship shaped by deep historical, cultural, and geographical ties, evolving since Bangladesh's independence in 1971. This bilateral relationship has transformed significantly, driven by shared political, economic, and strategic interests. The contemporary dynamics of India-Bangladesh relations present both challenges and opportunities. On the economic front, recent initiatives like the Comprehensive Economic Partnership Agreement (CEPA) negotiations and efforts to enhance connectivity through agreements such as the Bangladesh-Bhutan-India-Nepal (BBIN) Motor Vehicles Agreement highlight the potential for deeper economic cooperation and regional integration. However, significant challenges remain, such as water-sharing disputes over transboundary rivers, border management issues related to illegal migration and smuggling, and security concerns. Addressing these challenges requires sustained diplomatic engagement, mutual trust, and comprehensive policy frameworks that prioritize regional stability and development. This article explores these critical dimensions, examining how India and Bangladesh can leverage opportunities while effectively managing challenges to strengthen their bilateral relations in the 21st century.*

**Keywords:** *India-Bangladesh Relations, Bilateral Trade, Water-Sharing Disputes, Regional Connectivity, Security Cooperation etc.*

## **Introduction**

India and Bangladesh share a unique and multifaceted relationship, deeply rooted in historical, cultural, linguistic, and geographical connections. Since Bangladesh's independence in 1971, aided by India's critical support, the bilateral relationship has undergone significant transformation, driven by a convergence of political, economic, and strategic interests. Today, this relationship is

---

\* *Assistant Professor, School of Humanities and Social Sciences, Raffles University, Neemrana, Rajasthan*

characterized by both cooperation and challenges, reflecting the complexities of the South Asian region.

On the one hand, there are notable opportunities in trade and economic cooperation. Both countries have actively sought to enhance bilateral trade, investment, and regional connectivity, such as through the ongoing negotiations for a Comprehensive Economic Partnership Agreement (CEPA) and infrastructure projects like the Bangladesh-Bhutan-India-Nepal (BBIN) Motor Vehicles Agreement (Pant & Dwivedi, 2021). Additionally, the two countries are collaborating on security matters, counterterrorism, and border management to address shared threats (Muni, 2020).

However, significant challenges persist, including water-sharing disputes over transboundary rivers, particularly the Teesta, and border management issues involving illegal migration and smuggling (Barua, 2018; Samaddar, 2020). Addressing these challenges requires sustained diplomatic engagement, mutual trust, and a forward-looking approach that considers the broader context of regional stability and development (Raghavan, 2013).

### **Historical Context**

The roots of India-Bangladesh relations trace back to the historic events of the 1971 Bangladesh Liberation War, which marked a critical turning point in South Asian geopolitics. During this conflict, India played a pivotal role by providing diplomatic, military, and humanitarian support to the Bangladeshi independence movement, which sought to break free from Pakistani rule. India's decision to intervene militarily in December 1971, following escalating violence and a massive refugee influx into its territory, was instrumental in the liberation of Bangladesh. The Indian Armed Forces, in cooperation with the Mukti Bahini (the Bangladeshi guerrilla resistance movement), launched a successful military campaign against the Pakistani military, leading to the surrender of Pakistani forces and the birth of Bangladesh as an independent nation (Bass, 2013; Bose, 2011).

Following the war, India and Bangladesh established strong bilateral ties grounded in shared history, culture, and economic interests. The relationship was marked by mutual goodwill, particularly during the leadership of Sheikh Mujibur Rahman, Bangladesh's founding father and its first Prime Minister. Both nations

cooperated closely on various fronts, from rebuilding war-torn Bangladesh to fostering regional cooperation (Raghavan, 2013).

However, the relationship has encountered its share of challenges. Water sharing of transboundary rivers, especially the Teesta River, has been a longstanding issue, with both countries having divergent interests in water utilization for irrigation and drinking purposes. Border disputes have also occasionally strained ties, notably along the 4,096-kilometer-long boundary shared by the two countries, involving incidents of illegal migration, smuggling, and disputes over enclaves and territories. Additionally, the issue of illegal migration from Bangladesh into India's northeastern states has been a sensitive topic, fueling socio-political tensions and affecting domestic politics in India (Samaddar, 2020; Barua, 2018).

Despite these challenges, India and Bangladesh have continuously worked towards a mutually beneficial relationship, addressing contentious issues through diplomatic channels, high-level visits, and bilateral agreements. Both countries recognize the importance of cooperation in fostering regional stability, economic growth, and security in South Asia (Muni, 2020; Pant & Dwivedi, 2021).

### **Trade and Economic Cooperation: Opportunities and Challenges**

One of the most promising areas of cooperation between India and Bangladesh is trade and economic engagement. The two countries have made significant progress in boosting bilateral trade in recent years. In 2021-2022, bilateral trade reached approximately \$18 billion, with India being one of Bangladesh's largest trading partners (India Exim Bank, 2022). India exports various goods to Bangladesh, including textiles, chemicals, vehicles, and food products, while Bangladesh exports jute, garments, and seafood to India.

**Opportunities** : The potential for further economic collaboration between the two countries is vast. The Comprehensive Economic Partnership Agreement (CEPA), currently under negotiation, could be a game-changer, reducing tariffs and non-tariff barriers, encouraging investment, and enhancing supply chain integration (Sahni, 2022). Additionally, the joint development of Special Economic Zones (SEZs) in Bangladesh and the enhancement

of connectivity infrastructure, such as railways, roadways, and waterways, could boost trade volumes and reduce transportation costs.

**Challenges :** However, several challenges impede trade relations. Non-tariff barriers, such as cumbersome customs procedures, lack of infrastructure at border points, and stringent regulations, continue to hamper trade. Furthermore, trade imbalances persist, with India's exports to Bangladesh far exceeding imports, leading to concerns in Dhaka about an asymmetric relationship (Basu, 2021). Additionally, both countries face domestic political sensitivities that occasionally lead to protectionist policies.

### **Security and Strategic Cooperation**

Security and strategic cooperation are critical components of India-Bangladesh relations. The two countries share a 4,096-kilometer-long border, making border security and management a vital aspect of their bilateral ties. Cross-border insurgency, human trafficking, and smuggling are common challenges that necessitate close security cooperation.

**Opportunities :** Recent years have witnessed enhanced security collaboration, with both countries conducting joint patrols and sharing intelligence to combat terrorism and organized crime. Bangladesh has played a crucial role in dismantling insurgent camps on its soil that targeted India, and India has reciprocated by sharing intelligence on potential security threats (Roy, 2021). This cooperation has strengthened mutual trust and can be further expanded to address non-traditional security threats like cybercrime, climate change, and pandemic preparedness.

**Challenges :** However, challenges remain. There are periodic reports of border skirmishes between the Border Security Force (BSF) of India and the Border Guard Bangladesh (BGB), leading to civilian casualties and diplomatic strains. The influx of Rohingya refugees from Myanmar, currently hosted in Bangladesh, presents another security challenge, with concerns about radicalization and cross-border terrorism (Samad, 2022). Both countries need to maintain consistent dialogue and cooperative mechanisms to address these sensitive issues effectively.



### **Water Sharing and River Disputes**

Water-sharing remains one of the most contentious issues in India-Bangladesh relations. The two countries share 54 transboundary rivers, including the Ganges, Teesta, and Brahmaputra, which are lifelines for millions of people in both nations.

**Opportunities :** The successful signing of the Ganges Water Treaty in 1996, which established a water-sharing mechanism, set a positive precedent for resolving other disputes. Recently, there have been renewed efforts to reach an agreement on the Teesta River, a key issue for Bangladesh's agricultural sector (Islam, 2023). Both countries can benefit from joint river management, flood control, and hydroelectric projects, enhancing cooperation in water resource management.

**Challenges :** However, the delay in finalizing the Teesta River Agreement has been a significant source of frustration for Bangladesh. While India cites domestic political constraints, particularly opposition from the state of West Bengal, Bangladesh views the delay as a sign of India's reluctance to accommodate its interests (Hasan, 2023). Other rivers like the Feni and the Brahmaputra also present challenges due to competing water usage demands, pollution, and climate change impacts, which require comprehensive bilateral water-sharing frameworks.

### **Border Management and Migration**

The shared border between India and Bangladesh presents several management challenges, including illegal migration, human trafficking, and cross-border smuggling. The porous nature of the border has historically facilitated illegal crossings, leading to demographic changes in India's northeastern states, which has sometimes resulted in communal tensions and political disputes.

**Opportunities :** Efforts have been made to improve border management through the construction of fencing, joint patrols, and the use of technology for surveillance. In 2015, India and Bangladesh signed the Land Boundary Agreement (LBA), which successfully resolved longstanding border disputes by exchanging enclaves,

leading to greater border stability (Chowdhury, 2021). The agreement is a positive example of how contentious border issues can be resolved through diplomacy and mutual accommodation.

**Challenges :** Despite these improvements, challenges persist. Human trafficking, drug smuggling, and illegal migration continue to strain relations. Additionally, political rhetoric in India often highlights concerns about illegal Bangladeshi migrants, which can create friction between the two countries (Hossain, 2022). Effective border management requires continued cooperation, trust-building measures, and people-to-people contacts to foster goodwill and reduce mistrust.

### **Regional Connectivity and Geopolitical Considerations**

India and Bangladesh are strategically positioned in South Asia, and their cooperation is crucial for regional connectivity and economic integration. Both countries are members of regional organizations such as the South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC) and the Bay of Bengal Initiative for Multi-Sectoral Technical and Economic Cooperation (BIMSTEC).

**Opportunities :** The development of regional connectivity projects, such as the Bangladesh-Bhutan-India-Nepal (BBIN) Motor Vehicles Agreement, presents an opportunity for both countries to enhance trade, tourism, and people-to-people connectivity (Subramanian, 2023). India's "Act East" policy, which aims to connect India's northeast with Southeast Asia via Bangladesh, is another area of potential cooperation. Similarly, Bangladesh's aspiration to become a regional connectivity hub aligns with India's strategic objectives, fostering mutual benefits.

**Challenges :** However, geopolitical considerations pose challenges to this cooperation. Bangladesh's growing engagement with China, particularly in the Belt and Road Initiative (BRI), has raised concerns in India about Chinese influence in its neighborhood (Bhattacharjee, 2023). Balancing strategic interests while fostering regional cooperation will require careful diplomacy and a pragmatic approach from both nations.

### Conclusion

India-Bangladesh relations are at a crucial juncture, shaped by both opportunities and challenges. The historical bond between the two countries provides a strong foundation for cooperation, but contemporary issues such as trade imbalances, water disputes, border management, and geopolitical competition require nuanced handling. To maximize the opportunities and minimize the challenges, both countries need to continue building trust, fostering dialogue, and pursuing mutually beneficial partnerships in trade, security, water management, and regional connectivity.

Moving forward, a comprehensive and strategic approach that prioritizes economic integration, security cooperation, and people-to-people contacts will be essential in navigating the complexities of India-Bangladesh relations in the 21st century.

### Reference

- Barua, S. (2018). *Cross-border Migration: Challenges and Prospects for India-Bangladesh Relations*. New Delhi: Institute of South Asian Studies.
- Bass, G. J. (2013). *The Blood Telegram: Nixon, Kissinger, and a Forgotten Genocide*. New York: Alfred A. Knopf.
- Basu, S. (2021). *India-Bangladesh Trade Relations: Current Dynamics and Future Prospects*. *Journal of South Asian Studies*, 15(3).
- Bhattacharjee, J. (2023). *China's Growing Influence in Bangladesh: Implications for India*. *Asian Affairs*, 29(2).
- Bose, S. (2011). *Dead Reckoning: Memories of the 1971 Bangladesh War*. London: Hurst & Company.
- Chowdhury, A. (2021). *The India-Bangladesh Land Boundary Agreement: A Diplomatic Milestone*. *International Studies Review*, 24(1).
- Hasan, S. (2023). *Teesta Water Sharing: A Case of Competing Interests*. *Bangladesh Policy Review*, 5(2).
- Hossain, M. (2022). *Migration Issues in India-Bangladesh Relations: Challenges and Policy Responses*. *South Asia Monitor*, 11(4).
- India Exim Bank (2022). *Annual Report on India-Bangladesh Trade Relations*. New Delhi: India Exim Bank.
- Islam, M. (2023). *Transboundary Water Management between India and Bangladesh: Current Status and Future Directions*. *Journal of Water Policy*, 19(1).

- Muni, S. D. (2020). *India's Bangladesh Policy: A New Direction in Regional Diplomacy*. New Delhi: Manohar Publishers.
- Pant, H. V., & Dwivedi, S. (2021). *India and Bangladesh: Ties That Bind*. London: Routledge.
- Raghavan, S. (2013). *1971: A Global History of the Creation of Bangladesh*. Cambridge: Harvard University Press.
- Roy, S. (2021). *Security Cooperation between India and Bangladesh: An Emerging Paradigm*. *Strategic Analysis*, 43(3).
- Sahni, V. (2022). *India-Bangladesh Economic Relations: Navigating New Frontiers*. *Indian Economic Journal*, 70(2).
- Samad, T. (2022). *Rohingya Crisis and its Security Implications for South Asia*. *Journal of International Relations*, 10(3).
- Samaddar, R. (2020). *Political Transition in Bangladesh: Fractured Middle Class, Fragmented State*. New Delhi: Sage Publications.
- Subramanian, A. (2023). *Regional Connectivity in South Asia: The Role of India and Bangladesh*. *Global Policy Review*, 8(2).

# Prejudice in the Context of Caste and Sex: A Comparative Study

Dr. Vinay Kumar Singh\*

## Abstract

*This study was conducted to explore the effect of caste and sex on the prejudice. The sample consisted of 90 respondents from Rae-Bareilly district affiliated to Hindu religion whose age ranged from 20 to 45 years. An inherent factorial design "3x2" was formulated for the present study which facilitates to select equal respondents (15) in each cell. Prejudice Scale by Bharadwaj and Sharma (1990) was employed. The main findings of the two-way analysis of variance (ANOVA) are that neither main effect nor interaction effect of caste and sex show significant difference in prejudice towards Islam. It can be concluded that caste and sex, in present Indian society, have not been recognized as potent consideration in social life.*

**Keywords:** Prejudice, Religion, Caste, Sex

## Introduction

Prejudice refers to preconceived opinions, judgments, or attitudes toward individuals or groups without adequate knowledge or reason. These judgments are typically based on baseless or oversimplified beliefs (Turiel, 2007) about a group based on characteristics such as race, gender, religion, nationality, sexual orientation, or other identifying features (Bethlehem, 2015). Allport (1979) defined prejudice as a "feeling, favorable or unfavorable, toward a person or thing, prior to, or not based on, actual experience".

Prejudice can manifest in various forms, such as discrimination, stereotyping, and bigotry. It can lead to systemic inequality and social injustices, affecting not just interpersonal relationships but also broader social and institutional dynamics (Macklem, 2003; Dovidio, 2005; Anderson, 2010). According to Brewer (1999) prejudice isn't always about hating outsiders; it can arise when feelings like admiration, sympathy, and trust are kept only for those within our own circles.

---

\* Assistant Professor, Department of Psychology, Feroze Gandhi College, Rae-Bareilly (U.P.)

Tajfel (1969) explained that three cognitive processes categorization, assimilation, and the search for conceptual coherence play a significant role in the development of prejudice in an individual.

Stephan and Stephan (1996) also have identified three key factors realistic threats, value threats and intergroup anxiety that predict prejudice toward Mexican immigrants.

Devine et al. (1991) suggest that the source and internalization of personal standards play a critical role in how people respond to discrepancies in prejudice-related behavior. Low-prejudiced individuals are more likely to internalize egalitarian values, leading to specific feelings of compunction when they fall short of their standards, whereas high-prejudiced individuals may derive their standards from mixed societal messages, leading primarily to global discomfort. The study highlights the importance of internalized non-prejudiced values in reducing prejudice and suggests implications for developing interventions to promote consistent, non-prejudiced behavior.

Dovidio et al. (2005) revealed that people who follow "institutionalized religion" tend to have higher levels of prejudice and those who engage in "interiorized religion" are more likely to exhibit lower levels of prejudice. Chatterjee et al. (1972) and Singh et al. (1976) did not find significant caste difference in prejudices and attitudes. But Prasad (1972) reported that higher caste Hindus are more prejudiced than lower caste Hindus. In a study Dozo (2015) also did not find significant correlation between gender and prejudice.

### **Objectives:**

- The main objective of the present study was to examine the impact of caste and sex on the prejudice.

### **Hypotheses:**

1. General, OBC and SC/ST peoples will differ significantly with respect to their prejudice.
2. Male and female also will differ significantly with respect to their prejudice.

## **Method**

### **Sample and Design:**

The 90 respondents were selected from Rae-Bareilly district, affiliated to Hindu religion. The sample was classified on two bases, (1) three major caste categories, namely General, OBC and SC/ST; and (2) sex, namely, male and female. The notification by the State Government on caste was the operational criteria. Thus, a “3x2” factorial design was formulated for the present study which facilitates to select equal respondents (15) in each cell. Thus, 30 respondents (in each caste category) were randomly selected for three categories of caste i.e. General, OBC and SC/ST and 45 respondents for each sex groups i.e. male and female. The age of the respondents ranged from 20 to 45 years.

### **Measure:**

For assessing prejudice of respondents in regard to Islam religion, a 36 items “Prejudice Scale” developed and standardized by Bharadwaj and Sharma (1990) was used. Each item of the scale has five alternative answers from most agreeable to the least one and the subjects have to tick (√) at any one out of five alternatives. The coefficient of reliability has been found .69 and .94 by using test-retest and split-half method, respectively while theoretical and construct validity of the scale has been found .83 and .66, respectively.

### **Procedure:**

All the participants were contacted one by one on their respective places by researcher and were requested to participate in a survey research. After establishing good rapport, they were told that the purpose of this study is academic and their responses would be kept confidential. Participants were requested to read the instructions carefully and put queries, if any. They were also requested to put information about themselves on the title cover of the scale. The scale was scored as per instruction given in the manual.

### **Results**

The results obtained in the two-way analysis of variance (ANOVA) are given below:

**Table-1: Mean Difference as a Function of Caste**

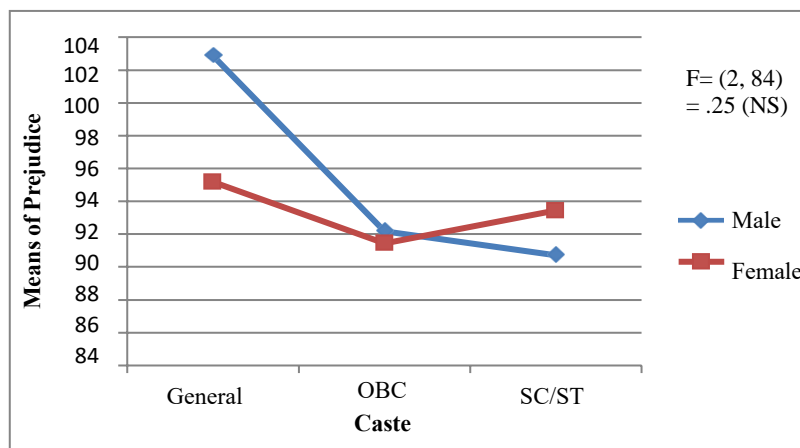
Variable	Caste			F (2, 84)	Remarks
	General (N=30)	OBC (N=30)	SC/ST (N=30)		
Prejudice	99.03	91.83	92.10	.59	NS

**Table-2: Mean Difference as a Function of Sex**

Variable	Sex		F (1, 84)	Remarks
	Male (N=45)	Female (N=45)		
Prejudice	95.27	93.38	.10	NS

Table-1&2 show the results of the main effect of caste and sex on prejudice. The mean value of General, OBC and SC/ST castes are 99.03, 91.83 and 92.10, respectively (Table-1). It indicates that people of General castes are more prejudiced towards Islam while OBC have least prejudice. But value of  $F = (2, 84) = .59$  is not statistically significant. This means the observed variations in prejudice among the General, OBC, and SC/ST castes are likely due to chance, rather than representing meaningful differences. Table-2 shows that mean value of male ( $M=95.27$ ) is slightly higher than female ( $M=93.38$ ) but value of  $F = (1, 84) = .10$  is not statistically significant. This means male and female do not differ in prejudice towards Islam.

**Figure-1: Mean Difference in the Perception of Prejudice as a Function of Caste and Sex**





In the case of interaction effects of caste and sex, the value of  $F = (2, 84) = .25$  is not statistically significant (Figure-1). But it indicates that male of General castes ( $M= 102.87$ ) is more prejudiced towards Islam than their female counterparts ( $M= 95.20$ ) while female of SC/ST castes ( $M= 93.47$ ) are more prejudiced than their male counterparts ( $M= 90.73$ ).

### Discussion

The primary objective of the study was to examine the impact of caste and sex on prejudice, specifically focusing on prejudice towards Islam within a sample from Rae-Bareilly district in India. The findings report that neither caste nor sex showed significant difference in prejudice. Thus, the findings of this study do not support the both proposed hypotheses. Further, the findings are in line with past researches that report a non-significant caste difference in prejudice and attitudes (Chatterjee et al., 1972; Singh et al., 1976) and non-significant correlation between gender and prejudice (Dozo, 2015).

The interaction effect between caste and sex also is not statistically significant. Although some trends are observed, such as General caste males exhibiting higher prejudice than their female counterparts and SC/ST females show higher prejudice than SC/ST males. These results suggest that these demographic factors might not be the primary drivers of prejudice in Indian society presents time.

The exploration of cognitive processes (Tajfel, 1969), internalization of personal standards (Devin et al., 1991) and the influence of religion (Dovidio et al., 2005) provides a comprehensive view of the factors contributing to prejudice and offers insights into how it can be reduced. To address prejudice, a combination of critical reflection, education, and a commitment to equity is required.

### References

- Allport, G. (1979). *The Nature of Prejudice*. Perseus Books Publishing, p. 6. ISBN 978-0-201-00179-2.
- Anderson, K. (2010). *Benign Bigotry. The Psychology of Subtle Prejudice*. Cambridge: Cambridge University Press.
- Bethlehem, D. W. (2015). *A Social Psychology of Prejudice*. Psychology Press. ISBN 978-1-317-54855-3.

- *Bharadwaj, Dr. R.L., & Sharma, Dr. H. (1990). Manual for Prejudice Scale (P-Scale). MAPAN, Bal Niwas, Taj Basai, Agra.*
- *Brewer, M. B. (1999). The Psychology of Prejudice: Ingroup Love and Outgroup Hate ?.*
- *Journal of Social Issues, 55(3).*
- *Chatterjee, S., Mukhrejee, M., Chakravarty, S. N., & Hassan M. K. (1972). Social prejudice and its Correlates among Hindu females. Tech. Report No.2/72, Indian Statistical Institute Calcutta.*
- *Devine, P. G., Monteith, M. J., Zuwerink, J. R., & Elliot, A. J. (1991). Prejudice with and without Compunction. Journal of Personality and Social Psychology, 60(6).*
- *Dovidio, J., Peter, G., & Laurie, R. (2005). On the Nature of Prejudice. Malden: Blackwell Publishing.*
- *Dozo, N. (2015). Gender Differences in Prejudice: A biological and social psychological Analysis. A thesis submitted for the degree of Doctor of Philosophy in The University of Queensland, Australia.*
- *Macklem, J. (2003). Beyond Comparison: Sex and Discrimination. New York: Cambridge University Press. ISBN 978-0-521-82682-2.*
- *Prasad, R. N. (1972). Some personal variants of caste prejudice among students.*
- *Behaviourometrics, 2.*
- *Singh, A. K., & Hassan, M. K. (1976). A comparative evaluation of psychological and sociological Correlates of prejudice. Journal of Indian Social and Psychological Studies, 2.*
- *Stephan, W. G., & Stephan, C. W. (1996). Predicting Prejudice. International Journal of Intercultural Relations, Vol. (20), Issues 3-4.*
- *Tajfel, H. (1969). Cognitive aspects of prejudice. Journal of Biosocial Science, Volume 1, Supplements S1: Biosocial Aspects of Race.*
- *Turiel, E. (2007). Commentary: The Problems of Prejudice, Discrimination and Exclusion.*
- *International Journal of Behavioral Development, ISSN : 0165-0254. 31(5).*

## Scientific Aptitude : A Review of Literature

*Mrs. Kirti Sharma\**

### *Abstract*

*Scientific aptitude refers to an individual's natural ability and inclination towards understanding and engaging with scientific concepts, principles, and methods. It encompasses skills like analytical thinking, problem-solving, curiosity, and the capacity to comprehend and apply scientific knowledge. Individuals with strong scientific aptitude often excel in fields like physics, chemistry, biology, and engineering etc. Now a days , in every walk of man's life, science is putting its hand. The mode of life on earth is changing rapidly with progress in science. So man has to adjust himself to this new atmosphere. A man without scientific aptitude finds it very difficult to adjust himself to this new situation.*

**Keywords :** *Science, Scientific Aptitude, Scientific Behaviour, Knowledge, Secondary School Students*

### **Introduction**

Science is interwoven with our day today life. One cannot survive and live successfully without science. So in order to enjoy material happiness, one must be acquired with adequate knowledge of science. The progress of nation depends upon the progress of science. It provides rapid economic development and high standards of living.

A man who has scientific mind live more happily and adjust to it nicely. It is the responsibility of the education to develop scientific aptitude among children that coming generation leads a happy life in the world of science spreading environmental awareness. One who is scientific minded and has aptitude for science is curious to solve problems curious to know things and raise significant questions with reference to observed phenomenon (T. Syed Mustaq 2007).

Scientific aptitude is one of the major outcomes of Science Education. It is endowed with an individual with its fullest for; he will be in a position to pursue science education efficiency with which he can climb the ladder of success with ease and effect. Considering the importance of scientific aptitude in all stages of human life, it is tried

---

\* *Assistant Professor, Department of Education, NSN PG College, Lucknow*

to identify the level of scientific aptitude possessed by the secondary level students, the age in which the scientific aptitude begins to take a concrete shape. This is also the age which decides the future educational and vocational aspirations in science and other allied areas (K S Anil Kumar 2007). Science education has an important part in developing understanding of concepts that underpin environmental issues, leading potentially to pro-environmental behaviour.

A lot of literature available attending the issue of Scientific Aptitude attaching a particular target group or jointly as well.

Dr. Arati Pravin kumar Patel (2019), Each and every research work suggests new direction for future researches and indicates limitation of that completed work. The present study is a humble effort to study Scientific Aptitude of students studying in secondary schools of Central Gujarat. This study is limited for students of Gujarati medium secondary schools of Central Gujarat so it cannot be applied to the whole universe. In spite of this fact, the present study will be useful to teachers and parents to know Scientific Aptitudes of children and to increase the Aptitudes at higher level. Then only this effort will be proved to be significant. This theses is like a small work conducted by the investigator. If there is any defect or imperfection, it is kindly requested to consider it pardonable.

Dr Sonali N Channawar (2018), A Study of Scientific Aptitude Among Government High School Students Of Raipur. This paper studied the level of scientific aptitude among the government boys and girls of high school. A sample of 100 students (50 girls and 50 boys) was selected through random sampling method from government high school of Raipur, Chhattisgarh state. For the data collection researcher used the Scientific Aptitude Test Battery (SATB) designed by Dr. k. K. Agrawal and Dr. Saroj Aurora was used. Mean, SD and t-test used for analyze the data. Finding of the study shows that the level of scientific aptitude is more in boys compare to girls of high school and the study also shows that there is significant difference in different area/part of scientific aptitude like Reasoning Test, Numerical ability and there is no significant difference between boys and girls in Scientific Information and science vocabulary test.

Elevenstone Synrema & Dr. Ibadani S. Syiemb (2018), Relationship Between Scientific Aptitude and Achievement in Science

Subject of Class IX Students in Ri Bhoi District of Meghalaya. The present study has elicited some important results that have implications upon the achievement in science subject among the secondary school students in Ri Bhoi District. The study has pointed out the relationship between scientific aptitude and achievement in science subjects. It means that the students who have more scientific aptitude are likely to achieve more than those who have less scientific aptitude. As the finding of the study revealed that Scientific aptitude and achievement in science subject are significantly correlated to each other, hence, it implies that putting the students together in such an environment which can help them increasing scientific aptitude by making them expose to scientific programmes and activities can further develop tendencies in them to learn science subject. The present study will also be useful to teacher to identify and improve the achievement of the student in science subject with low scientific by providing them good teaching in enhancing their achievement in science subject.

Gomati G. (2016), conducted this research study gives in detail the theoretical perspectives and research results concerned to Interest of Higher Secondary students in Chemistry and their Scientific Aptitude.

#### **Objectives:**

1. To find out the level of Scientific Aptitude of higher secondary students.
2. To find out the significant positive correlation, if any between interest of higher secondary students in chemistry and their scientific aptitude.

#### **Findings:**

1. The HS chemistry students in level of SA.
2. There is significant positive correlation b/w interest in chemistry & their SA among higher secondary students.

Vanraj P. Vyas (2014), Study of scientific aptitude of secondary schools students in relation to some variables. The present study is a humble effort to study scientific aptitude of students studying in secondary schools of Central Gujarat. This study is limited for

students of Gujarati medium Secondary Schools of central Gujarat So it cannot be applied to the whole universe. In spite of this fact, the present study will be useful to teachers and parents to know scientific aptitudes of children and to increase the aptitudes at higher level. Then only this effort will be proved to be significant. This theses is like a small work conducted by the Investigator.

Dr Rajeev Mukhopadhyay (2013) Studied in “Scientific aptitude- some psychometric considerations with special emphasis to aptitude in physics.” This paper is related to the broad study of scientific aptitude. Among different discipline in scientific aptitude in physics has become the area drawing increasing attention of counsellors and researchers.

Magare Jitendra Ratilal (2012) ‘A Study Of Scientific Aptitude of Tenth Class Pupils of Nashik District’ was done on students aged 14 to 16 years. The main objective of the study was to find out the present level of scientific aptitude possessed by the pupils of Marathi, English Medium aided and unaided schools studying in tenth class of Nashik District, Maharashtra. A total of 1000 pupils sample were chosen for the study.

Nataraj, P.N., and Manjula, G. (2012), conducted a study on scientific aptitude of high school students in relation to their achievement in science. In this study, the researchers have attempted to study the scientific aptitude of high school students in relation to their achievement in science. The investigation was carried out on 650, 9<sup>th</sup> standard students. The findings of the study on scientific aptitude and achievement in science shows that male and female, Hindu, Christian, and Muslim students do not differ significantly, While scientific aptitude and achievement in science between rural and urban high school students differ significantly. Also significant correlation is found between achievement in science and scientific aptitude of high school students.

Muhammad Aqeel Raza, and Ahmad Farooq Shah, (2011), This study analyzes the impact of favourite subject towards the Scientific Aptitude of the students at Elementary Level. The technique of Correlation was used for this purpose. The mean score in Scientific Aptitude test of students having science subject as a favourite subjects is 21.14 and mean score in the Scientific Aptitude test of students

having other than science subjects as a favourite subject is 16.97. So, at the time of admission in secondary classes in science education. Scientific Aptitude of the students should be seriously considered with other factors.

Tabrizi, Talib and Yaacob (2011) studied the relationship between creative thinking and anxiety among adolescent boys and girls in Tehran, Iran aged 12 to 15 years. The findings showed a strong negative correlation between creative thinking and anxiety among Iranian adolescent students in Tehran's secondary schools.

N B Jayalekshmi and B William Dharma raja (2011) Studied in "does creativity impact scientific aptitude of school children?" this research paper is related to the co-relation between creativity and scientific aptitude in standard VIII students on the basis of sex, nature of school, locality of residence, locality of school, type of school parental education and parental occupation.

Vasugi. K., and Padamakalavathy, K. (2009) conducted a study on scientific aptitude and achievement in science among high school students. The study was conducted (i) To study about scientific aptitude among high school students of Dindigul district. (ii) To determine the significant differences between scientific aptitude with variables like sex, locate, medium of instruction, type of school, educational qualification of parents of the students and their Income. (iii) To find out the relationship between the scientific aptitude and achievement in science among high school students of Dindigul district. The normative survey method was used to find out scientific aptitude and achievement in science among high school students of Dindigul District. The sample used for this study was randomly selected 200 high school students from Dindigul district. Major findings of the study were:

1. The scientific aptitude of high school students in Dindigul district is high.
2. The high school boys and girls significantly differ in their scientific aptitude.
3. The urban and rural high school students differ significantly in their scientific aptitude.
4. The English and Tamil medium students differ significantly in their scientific aptitude.

5. The high school students from matriculation and government aided school differ significantly in their scientific aptitude.
6. The high school students with educated parents and illiterate parents differ significantly in their scientific aptitude.
7. The student belonging to sufficient income status and deficit income status differ significantly in their scientific aptitude.
8. There is a significant positive high relationship between scientific aptitude and achievement in science.

K.S. Anil Kumar (2007), A study of cognitive styles scientific aptitude creativity and personality in relation to Science achievement of high average low and under achievers in secondary schools. The main objective of the present study was to measure the influence of cognitive styles, creativity, personality and scientific aptitude on the achievement in science of high, average, low and Underachievers of X standard students. The study was limited to X standard students of Tumkur and Madhugiri Educational Districts (State syllabus) and the result in their examination had lot of significance to the individual and to the school. The students need to put up an improved performance in the public examinations. Achievement test in science constructed by the researcher, helped them for revision and preparation of their exams, for better performance.

T. Syed Mustaq Ahmed (2007), Effect of scientific aptitude and scientific attitude on academic achievement of secondary school students in Science. In this study, Scientific Aptitude and Scientific Attitude highly influence Academic Achievement of IX Standard students in science. Therefore these variables to be considered as important factors in school Guidance and Counselling.

Akinyele Oyetunde Ariyo (2007) conducted a study on construction and Validation of general science aptitude, whose major purpose was to develop and validate a General Science Aptitude Test (GSAT) for junior secondary school graduate seeking admission into senior secondary school one in Nigeria. The specific objectives were to describe the various stages in the development and validation of GSAT and determine the psychometric properties of the instrument. The Pearson product Moment Correlation, Test difficult index, discriminative index and the Kuder Richardson 21 statistics were used for the analysis of results. The result of analysis shows that GSAT was



moderately difficult for the sampled pupils, while the instrument was found to be reliable since internal consistency was found to be 0.90. The inter-correlation among GSAT's sub scale was found to be substantial. GSAT is recommended for use in other part of world.

### Conclusion

Scientific pursuits demand qualities such as minute observation, scientific attitude of mind, persistence, perseverance, concentration of mind, accuracy of measurement, patience, logical objective and unprejudiced, respect for other opinions, respect for truth etc. These disciplinary qualities of mind if cultivated through the teaching of science, may be carried over and manifest in the general behaviour of the learner. This will prove useful for living as an efficient social individual in the society.

### Reference

- *Ahmed, T. Syed Mushtaq. (2007). Effect of Scientific Aptitude and Scientific Attitude on Academic Achievement of Secondary school students in Science. (Doctoral dissertation, Karnataka University, India). Shodhganga. <https://shodhganga.inflibnet.ac.in>*
- *Anil Kumar, K.S. (2007) A Study of Cognitive Styles, Scientific Aptitude, Creativity and Personality in Relation to Science Achievement of High, Average, Low and Underachievers in Secondary School. Ph.D. Thesis, Karnatak University, Dharwad.*
- *Arati Pravin kumar Patel. (2019). A Study of Scientific Aptitude of Secondary School Students In Context of Certain Variables. An International Peer-Reviewed Open Access Journal of Interdisciplinary Studies, 2(3). <https://www.gapinterdisciplinarity.org>*
- *Ariyo, Akinyele Oyetunde (2007). Construction and validation of a general science aptitude test (GSAT) for nigerian junior Secondary School Graduates, Ilorin J. Education, 27 August, 2007.*
- *Channawar N. S. (2018). A Study of Scientific Aptitude Among Government High School Students Of Raipur. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), 6(2). <https://www.ijcrt.org>*
- *Elevenstone Synrem, & Ibadani Syiem. (2018). Relationship Between Scientific Aptitude and Achievement in Science Subject of Class IX Students in Ri Bhoi District of Meghalaya. International Journal of Research and Analytical Reviews, 5(3). <http://ijrar.com>*

- Gomathi .G and Rrasul Mohaideen. S (2016). Interest of higher Secondary student in Chemistry and their scientific aptitude. In *Journal of Educational Research and Extension: Vol. 53(No.3)*. <http://www.srkvcoe.org>
- Magare, J.R. (2012). A study of scientific aptitude of tenth class pupils of Nashik district (Doctoral dissertation, Savitribai Phule Pune University, India). <https://shodhganga.inflibnet.ac.in>
- Mukhopadhyay, R. (2013). Scientific aptitude-some psychometric considerations with special emphasis to aptitude in physics. Mukhopadhyay, R. /*Educational Confab.2 (1)*.
- N.B. Jayalekshmi and B. William Dharma Raja (2011). Does Creativity Impact Scientific Aptitude Of School Children? *I-manager's Journal on Educational Psychology*, 4(4). <https://doi.org/10.26634/jpsy.4.4.1417>.
- Nataraj P.N. and Manjula G. (2012) A Study on Scientific Aptitude of High School Students in Relation to Their Achievement in Science. *International Recognized Multidisciplinary Research Journal*, Volume: II, Issue: IX, DOI: 10.9780/22307850.
- Raza, Muhammad Aqeel and Shah, Ahmad Farooq (2011) Impact of Favourite Subject towards the Scientific Aptitude of the Students at Elementary Level. *Pakistan Journal of Social Sciences (PJSS) Vol. 31, No. 1 (June 2011)*.
- Tabrizi, Talib & Yaacob (Dec, 2011) Relationship between Creative Thinking and Anxiety among Adolescent Boys and Girls in Tehran, Iran, *International Journal of Humanities and Social Science Vol. 1 No. 19*.
- Vyas, Vanraj P. (2014). Study of scientific aptitude of secondary school students in relation to some variables. Doctoral dissertation, Gujarat University, India. <https://shodhganga.inflibnet.ac.in>.

# **Critical analysis Economic Welfare and Development through Skill India Programme: A Study of Success Factors and Challenges**

*Lalita Yadav\**  
*Dr. Vidyanand Pandey\*\**

## **Introduction**

India is actually a young country, where approximately 65% of the population is under 35 years. This young population is the biggest strength of India, which can help in moving and develop the country. There is a capability of creativity and innovation in the youth, which helps them develop new ideas and solutions. India's youth can solve the various problems of the country using their creativity, such as:

- Improve education and health services.
- Promote innovation and entrepreneurship.
- Removal of social and environmental issues.
- Strengthening the country's economy.

The youth of India should be encouraged to develop their creativity and contribute to the development of the country.

India is a country with demographic dividend. Unemployment is a big problem in India. Skill India is an initiative to improve the physical and mental development of Indian youths so that the unemployment problem in the country can be reduced. Skill India is a multi skill project launched in March 2015. The main aim is to develop the talents of Indian Youths. Here more emphasis is given to value addition among youth who are jobless, school dropouts along with the educated ones. It emphasizes on the concept of job creation and social security by which the youth undertake responsibility and no youth remain idle and burden to the economy. Skill development idea helps youths to raise their confidence and improve their productivity. The Skill India concept provides support, training and guidance for all occupations like construction, textile, transportation, agriculture,

---

\* *Research Scholar, Department of Geography, Shridev Suman University, Uttarakhand*

\*\* *Assistant Professor, Department of Economics, Government College, Vidisha, M.P.*

weaving, handicraft, horticulture, fishing and various other sectors along with language and communication skills, life skills, and personality development skills, management skills including job and employability skills.

India is a country of continental significance, and poverty is a multi dimension phenomenon it is a greatest challenge to the mankind and the most critical being faced by any economy. Poverty is a multidimensional phenomenon and it's greatest challenge to the mankind. In India context, poverty is measured in terms of specified Poverty and Employments Generation is one of the most significant goals of growth approach since the initiation of planning in India. We will find that people with superior qualifications are doing which could be done by less qualified people. This results in under-utilization of capacity. We can find graduate engineering jobs which could be performed by diploma holders.

### **Research Design**

#### **Objectives of the Study**

The main objectives of the study are;

- To know the level of awareness about skill development programme.
- To know the problems of self employment.
- To give some suggestions & recommendations based on the findings of the study.

#### **Research Methodology**

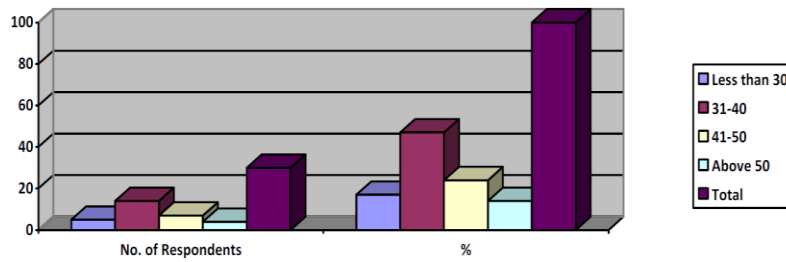
This research is based on the primary data and the secondary data. Primary data is collected through questionnaires to respondents and through telephonic interviews. The data is collected from 30 respondents from various places in and around Allahabad city. Random sampling is been used in selecting the samples for the study. Secondary data has been collected from websites & different research papers already published related to the topic.

**Data Analysis and Interpretations**

The data has been collected and interpreted in the following manner.

*Table 1: Age*

Age	No. of Respondents	%
Less than 30	5	17
31-40	14	47
41-50	7	24
Above 50	4	14
Total	30	100

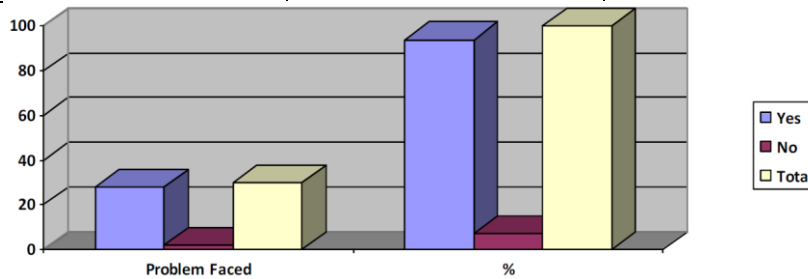


**Analysis and Interpretation**

Out of the total respondent's majority are school dropouts who have availed the benefit of Skill India.

*Table 2: Faces Unemployment Problems*

Problem Faced	Problem Faced	%
Yes	28	94
No	02	7
Total	30	100



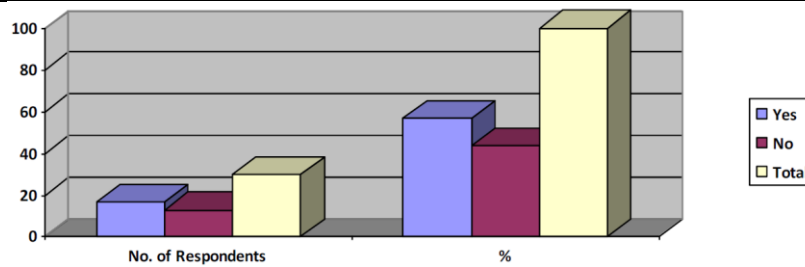
Source: Survey Data

**Analysis and Interpretation**

Majority of the respondents have faced unemployment problem.

*Table 3: Awareness of Skill India programme*

Awareness	No. of Respondents	%
Yes	17	57
No	13	44
Total	30	100



**Analysis and Interpretation**

The above figure shows that the skill India Campaign has motivated the surveyed respondents in several ways. Among those Desire to achieve something was type he first preference followed by Need for independence, Social Prestige, financial benefits and Leadership quality.

**Finding of the Study**

- About 45% of the respondents falling between the age group of 31-40 due to the Skill India concept and it is seen that majority respondents have availed the benefit.
- It is observed that, most of the respondents are below the It education and majority are school dropouts and had faced is unemployment problems which indicate how Government is unemployment problem.
- Majority (More than 50%) of the respondents were aware of the Skill Campaign due to various publicity schemes of Government
- According to survey, majority have undergone the skill development tram under different areas and benefited in their overall development. The popularity of the schemes and good response from the youth.

- The survey reveals that even after the training the respondents had faced major problems while setting up their own business, which need to be resting.
- Many respondents have motivated through Skill India Campaign and h encouraged others for self-employment.

### Some Suggestions

- Measures have to be taken in order to increase the participation of limits population in self-employment schemes covering all the age groups.
- Actions should be taken to minimize the school dropouts and to provide edustun in the best way possible.
- The awareness regarding the Skill India concept should still be increased through different Medias so that even the poorest sections of the society should benefited.

There are some major areas to study welfare challenges in India:

1. **Garbi and inequality:** Poverty and inequality in India is a major challenge, which the government has started several programs to overcome.
2. **Stemma and health:** Improve education and health services is another major challenge, which the government has started several schemes to remove.
3. **Bal labor and child rights:** Protecting child labor and child rights is an important challenge, which the government has made several law and plans to remove.
4. **Mill empowerment:** There is another major challenge to promote female empowerment and gender equality, which the government has started several schemes to overcome.
5. **Everyday and climate change:** Reducing the effects of environment and climate change is an important challenge, which has started several schemes to overcome. By studying these areas, it can help to better understand welfare challenges in India.

### Conclusion

The Skill India concept has achieved popularity all over the world appreciating initiative taken by the government of India. It's a great move towards developing India as developed country by motivating Indian talents and makes a bright future for society; concentrate more on job creation and social security, with this new app youth. Now it is time for youth to grab the opportunity & do not remain idle in the India can really stand on his feet.

As a result of massive unemployment there is poverty and increase in social evils like robbery, crime etc. The social consequences of the educated unemployed are quite serious. Similarly there may be clerks and typists with postgraduate qualifications where perhaps matriculates could do the work. This is because people with lesser qualifications (matriculates) are unable to find jobs so they go for higher education with the hope that they will be in a better position to qualify for the same jobs. Many thieves, pickpockets, smugglers, drug traffickers etc. take up these activities because they are unable to find gainful employment. The frustrations of unemployed youth can also lead to terrorism. The highly educated unemployed have anger against society for their state of affairs. They feel that if this system cannot meet their aspirations for getting proper jobs it should be destroyed. This leads them to take to organized violence against the state.

### References

- [https://en.wikipedia.org/wiki/Skill\\_India](https://en.wikipedia.org/wiki/Skill_India)
- <http://www.mapsofindia.com/my-india/society/skill-india-a-new-prog>
- <http://msde.gov.in/nationalskillmission.html>
- <http://www.nationalskillindiamission.in/>
- "Report the Experto Group to Review the Methodology for Measurement of Poverty Planning Commission, Govt. of India, 2014.
- M.H.Suryanarayana "Intra-State Economic Disparities: Karnataka and Maharashtra Economics & Political Weekly Val-xliv no 26 & 27, 2009.
- B. Indira et. al., "MNREGA: An Initiatives Poverty Alleviation through Indian Employment Research Journal of Extension Education Special Issue.



- <http://www.preservearticles.com>
- [www.jstor.org/stable/2752685](http://www.jstor.org/stable/2752685)
- <http://articles.economictimes.com>
- [https://en.wikipedia.org/wiki/Skill\\_India](https://en.wikipedia.org/wiki/Skill_India)
- [Mp://www.mapsofindia.com/my-india/society/skill-india](http://www.mapsofindia.com/my-india/society/skill-india) *in-a-new-programme-to-be launched.*
- <http://msde.gov.in/nationalskillmission.html>
- *yojna /kurukshetra and July 2923*
- [www.nationalskillindiamission.in/](http://www.nationalskillindiamission.in/)

# The Role of Environmental Awareness Ability on Aggression of College Students

Monika Ranjan\*

## Abstract

*Environmental awareness ability is important and essential aspect because its help to recognize the bad and good changes of our environment and we can protect our environment from the help of environmental awareness. The less and more environmental awareness ability also impacts our human psychology. There may be much cause for the aggressive behaviour but one reason for this could be less or more environmental awareness ability. The aim of the study was to find out the role of environmental awareness ability on aggression of government polytechnic college students of Kanpur. A total of 60 students (30 male and 30 female) participated for this research. Dr. Praveen Kumar Jha's Environmental awareness ability scale and Km. Roma Pal's Aggression scale were administered. For statistical analysis I used 2\*2 ANOVA. In present research I found that environmental awareness ability and gender factor both have a significant role on aggression. There is a significant difference between male and female student on aggression. In this way, high environmental awareness ability and low environmental awareness ability have a significant effect on aggression. Hence, female students are significantly better in aggression than male students and high awareness ability are significantly better in aggression than low awareness ability. Hence both the main effect was found significant but the interaction effect was found to be insignificant.*

**Keywords:** *Environmental awareness ability, Aggression, Gender and College students*

## Problem of the Study

To study the role of environmental awareness ability on aggression of government polytechnic college students of Kanpur, U.P.

## Introduction

### A. Environmental awareness ability:

We must first comprehend the environmental movement in order to define environmental consciousness. Environmentalism is an

---

\* *Research Scholar, Department of Psychology, STDPG College, Dr. RMLAU, Ayodhya, U.P.*

ideology that emphasizes how important it is for people to respect, safeguard, and maintain the natural environment from human-caused harm. Environmental awareness is a crucial aspect of the movement's success. We may start resolving the problems that endanger the physical environment by making others aware of how delicate and important it is.

**Promote Environmental Awareness:** You must ensure that you have a solid grasp of environmental concerns before you can start encouraging environmental awareness in your community. Read books and other resources, keep up with environmental news, and become knowledgeable about local concerns. If you have previously taken the effort to educate yourself, it will be much simpler to communicate to others about the environment.

There are several tools available to support environmental education and awareness, including books, articles, films, brochures, online courses, informative and inspirational seminars, group learning (inside or outside of the classroom), and articles. These are but a handful of the resources available to help you begin spreading environmental awareness. Selecting the environmental problem that most urgently appeals to you is an excellent way to guarantee that you will continue to participate. There seem to be an endless number of environmental challenges, and although each one is significant, it's simple to become overwhelmed. Aim to concentrate on only one problem at a time. You'll quickly realize that environmental challenges are all connected, and you'll identify your area of interest.

Some ways to be conscious of the surroundings are as follows:

**Energy preservation:** Lowering dependence on non-renewable energy sources and lowering energy expenses.

**Reusing:** Generating new goods by using waste and second hand resources in the production process.

**Decrease of waste:** Minimizing the quantity of items that contaminate landfills and the environment.

**Bolstering the laws :** Recognizing and endorsing laws intended to protect natural areas, lower greenhouse gas emissions, and implement renewable energy.

**Instruction:** People that get training can act more predictably and make decisions that are good for the environment.

**Development that is sustainable:** An idea that seeks to satisfy current wants without endangering the capacity of future generations to satisfy their own.

Being conscious of the environment is crucial because it increases people's commitment to preserving the environment and leaving it in a healthy state for next generations. It also safeguards the well-being and safety of all species on Earth.

**B. Aggression:**

Aggression is a term used in psychology to describe a variety of actions that have the potential to cause bodily or psychological harm to oneself, other people, or environment-based items. Intimidation focuses on causing bodily or psychological harm to another individual. While everyone has occasional episodes of hostility, excessive or pervasive aggression may indicate a physical disease, drug abuse disorder, or underlying mental health condition.

Aggression may be used for a variety of reasons, such as:

- Demonstrating hatred or rage
- Making a claim to authority
- Frightening or menacing
- Reaching an objective
- Declaring one's ownership
- Reacting to the terror
- In response to pain
- Competing with other people

**Signs of Aggression:** Anger or mere thoughts of injuring someone do not constitute signs of aggression, nor does inadvertently hurting someone. Aggressive behaviour is designed to inflict harm to someone who does not wish to be injured. Aggressive actions include:

- **Physical**, such as kicking, punching, beating, or stabbing someone. Physical hostility might sometimes take the shape of property damage.

- **Verbal**, which might involve shouting, teasing, and name-calling.
- **Relational**, meaning it is meant to do harm to the relationships of others. This might involve fabricating tales and circulating rumours about other people.
- **Passive-aggressive** behaviour includes things like backhanded compliments and neglecting someone at a social gathering. Typically, the goal of passive-aggressive behaviour is to make room for damage to happen to someone instead of really doing it.

Even while we typically associate violence with physical symptoms, psychological hostility may be just as harmful. Verbal, mental, and emotional aggressiveness includes things like intimidating or verbally berating someone else. Cyber bullying is an additional type of non-physical hostility that has the potential to seriously damage others.

**Types of aggression:** There are two primary categories of aggressiveness according to psychologists. Whether one is the aggressor or the victim, they are both harmful to the people who encounter them:

**1) Impulsive Aggression-** Strong emotions are a defining characteristic of impulsive aggressiveness, sometimes referred to as affective or reactive aggression. The amygdala, hypothalamus, and periaqueductal gray are the brain regions involved in the acute threat response system, which is activated by impulsive aggressiveness, particularly when it is brought on by anger.

This unplanned aggressive behaviour frequently happens in the heat of the moment. Impulsive aggressiveness is seen when you start berating and shouting at a driver who cuts you off in traffic.

**2) Instrumental Aggression-** Instrumental aggression, sometimes referred to as predatory aggression, is characterized by actions used to accomplish a greater objective. Instrumental aggressiveness is typically used as a means to a purpose and is frequently well thought out.

One instance of this kind of aggressiveness is injuring someone else during a heist. The attacker wants to get money, and hurting someone else is how he or she may do that.

**Objectives of the study:**

1. To find out significant role of environmental awareness ability and gender on aggression.
2. To find out significant differences between male and female students on aggression.
3. To find out significant role of male and female students on aggression.
4. To find out interaction effect between environmental awareness ability and gender on aggression.

**Hypothesis:**

**H<sub>01</sub>:** There will be no significant role of environmental awareness ability and gender on aggression.

**H<sub>02</sub>:** There will be no significant differences between male and female students on aggression.

**H<sub>03</sub>:** There will be no significant role of male and female students on aggression.

**H<sub>04</sub>:** There will be no interaction effect between environmental awareness ability and gender on aggression.

**Rational of the study:**

Environmental awareness ability is important concept of any individuals for healthy environment because understanding the environment's fragility and the need to conserve it is made easier with an understanding of the environment. It also enables us to see how our activities affect the environment and how we may change for the better in order to raise everyone's standard of living. It is essential for safeguarding the environment and avoiding negative effects on the natural world. Pollution and impairment to the health environment is a couple of the detrimental results of a lack of environmental understanding on protecting nature. We need to increase our awareness of the environment. Another variable is aggression, adolescents and young people who experience substantial environmental stress in their early years are more likely to exhibit violent and antisocial behaviour. Therefore, it is important to address

these environmental limitations and difficulties in order to support healthy outcomes for young people.

There has not been much research on environmental awareness ability and aggression together on polytechnic students. So I decided to conduct the research on these variables. In order to bridge the knowledge gap in this field and these variables.

### Methods

#### Variables:

- **Independent variable-** Environmental awareness ability and gender
- **Dependent variable-** Aggression

#### Samples:

In this present research, I selected 60 college students (30 male and 30 female students) from government polytechnic college Kanpur.

#### Instruments:

***Environmental awareness ability scale (Dr. Praveen Kumar Jha):*** This scale consists 51 items based on the five dimensions of environment as a whole- a.) cause of pollution, b.) conservation of soil forest, air etc. c.) energy conservation, d.) conservation of human health, e.) conservation of wild-life and animal husbandry. Each dimensions consists different number of items. 8 items are negatives items. This scale is two point scale from agree to disagree. Each agreed item carries the value of 1 mark and each disagree item carries zero mark but negative items are scored inversely. Three indices of reliability were determined. Split-half reliability was found 0.61, K-R method was found 0.84 and test-retest reliability was found 0.74 to 0.71. Validity of this scale was found 0.83 by author.

***Aggression scale (Km. Roma Pal):*** This scale consists 30 items. Each of the items has alternate answer (multiple choice) graded on five point scale on the positive dimension and a zero point on negative dimension. Two indices of reliability were determined. Split-half reliability was found 0.82 and test-retest reliability was found 0.78 by author. The language of this scale is Hindi.

**Procedure:**

For the present research, first I went to government polytechnic college Kanpur and I selected 30 male and 30 female students by quota sampling method. Firstly I administered the scale of environmental awareness ability on male & female college students and after scoring categories into high environmental awareness ability male & female students and low environmental awareness ability male & female students. After I administered the scale of aggression on 15 male students with high environmental awareness ability & 15 female students with high environmental awareness ability and 15 male students with low environmental awareness ability 15 female students with high environmental awareness ability. In this way I got the data for this research.

**Statistics:**

In this present research, 2\*2 ANOVA has been used to find out the significant role of environmental awareness ability and gender on aggression.

**Results:**

The result of this test showed in the table:

**Table no. 1**  
**Summary of ANOVA**

SOURCE	SS	Df	MS	F	P VALUE
<b>A- Gender</b>	1760.417	1	1760.417	20.12014**	>.01 S
<b>B-Environmental awareness ability</b>	6222.017	1	6222.017	71.11263**	>.01 S
<b>A*B</b>	88.81667	1	88.81667	1.015103	<.05 NS
<b>Within</b>	4899.733	56	87.49524		
<b>Total</b>	21042.23	59			

\*p<.05, \*\*p<.01



**Table no. 2**

HYPOTHESIS		ACCEPT/REJECT
H <sub>01</sub>	There will be no significant role of environmental awareness ability and gender on aggression.	Reject
H <sub>02</sub>	There will be no significant differences between male and female students on aggression.	Reject
H <sub>03</sub>	There will be no significant role of male and female students on aggression.	Reject
H <sub>04</sub>	There will be no interaction effect between environmental awareness ability and gender on aggression.	Accept

**Interpretation and Conclusion:**

Looking at the result, it is clear that both environmental awareness ability and gender factor have a significant role on aggression. There is a significant difference between male and female student on aggression. The F distribution show that at 1 df on the larger mean square and 56 df on the smaller mean square, F should be greater than 4.03 and 7.17 respectively to be significant at the 0.05 and 0.01 level. The obtained F (20.12) is clearly more significant at the 0.01 level. In this way, high environmental awareness ability and low environmental awareness ability have a significant effect on aggression. Here F should be 4.03 and 7.17 respectively to be significant at the 0.05 and 0.01 level; the obtained F (71.11) obviously this is more significant at the 0.01 level. Hence, female students are significantly better in aggression than male students and high awareness ability are significantly better in aggression than low awareness ability. Hence both the main effect was found significant but the interaction effect was found to be insignificant because here F (1.01) is not significant.

**References**

- Anderson, C. A., & Huesmann, L. R. (2003). *Human aggression: A social-cognitive view*. In M. A. Hogg & J. Cooper (Eds.), *The Sage handbook of social psychology*. Thousand Oaks, CA: Sage.

- *Baron, R. A., & Richardson, D. R. (1994). Human aggression (2nd ed.). New York, NY: Plenum Press.*
- *Berkowitz, L. (1993). Aggression: Its causes, consequences, and control. New York, NY: McGraw-Hill.*
- *Disinget, J.F. & Monroe, M.C. (1994). Defining Environmental Education. Environmental Education Toolbox Workshop Resource Manual. Ann Arbor, MI: National Consortium for Environmental Education and Training.*
- *Gupta, A. (1986). Study of attitude of teachers environmental education, M.B. Buch (ed.). Fourth Survey of Research in Education.*
- *Gunde R. V, Parit A. S. (2015), Environmental Awareness of the College Students with respect to Sex and Faculty. The international Journal of Indian Psychology, 2 (2).*
- *Jha, P. K. (1998). Manual for Environmental Awareness Ability Measure (EAAM), National Psychological Corporation, Agra, Delhi, Indian.*
- *Panth M. K., Verma P., & Gupta, M. (2015). The Role of Attitude in Environmental Awareness of Under Graduate Students, International Journal of Research in Humanities and Social Studies, 2 (7).*
- *Tedeschi, J. T., & Felson, R. B. (1994). Violence, aggression, and coercive actions. Washington, DC: American Psychological Association.*

## Spatio-Temporal Analysis of Cropping Intensity in Chitrakoot District

*Birendra Kumar Yadav\**

*Dr. Manoj Kumar\*\**

### *Abstract*

*For the vast majority of people living in rural areas, agriculture is the most important industry. The development of the district's economy as a whole depends on the productivity and sustainable expansion of agriculture. The cropping intensity of Chitrakoot District has been examined in this study. The findings show that the districts' average cropping intensity increased from 108.39 % in 2010 to 117.7 % in 2020. The introduction of HYVs seeds, improved irrigation systems, and increasing adaption of contemporary farming practices are the causes of this increase in cropping intensity. It has been also observed that high increase in irrigation intensity does not always lead to high cropping intensity. Hence, cropping intensity is the function of multiple factors.*

*Keywords: Irrigation Intensity, Cropping Intensity, District Economy, Contemporary Farming.*

### **Introduction**

Chitrakoot District has periodic droughts, and salinity of the soil. It is mostly a rain-fed region with tiny and marginal landholdings. Climate unpredictability and severe disasters undoubtedly reduce overall production. Major food crops like wheat, maize, barley, oilseeds have profited from the advent of innovative agricultural technologies. Thus, significant financial resources must be allocated to the development of new agricultural technology, research, and infrastructure in order to achieve and sustain food production. Crop distribution is also largely governed by the physio-climatic features of Eastern Uttar Pradesh. The selection and appropriateness of crops for cultivation mostly depend on the region's physio climatic features.

The ratio of agricultural outputs to inputs is used to calculate agriculture productivity. Approximately 90 % of people in Chitrakoot live in rural areas, with agriculture serving as the primary industry

---

\* Assistant Professor, Department of Geography, Baiswara Degree College, Raebareli

\*\* Assistant Professor, Department of Geography, Baiswara Degree College, Raebareli

(Census, 2011). Because of this, intensive cultivation—where more than 53.5% of the entire geographical area is under various cultivation—makes up the seeming dominance of agriculture in the region. Therefore, research into the various facets of agricultural production is essential.

The reasons and effects of the spatiotemporal shift in cropping intensity in Chitrakoot District is examined in this study.

### **Study Area**

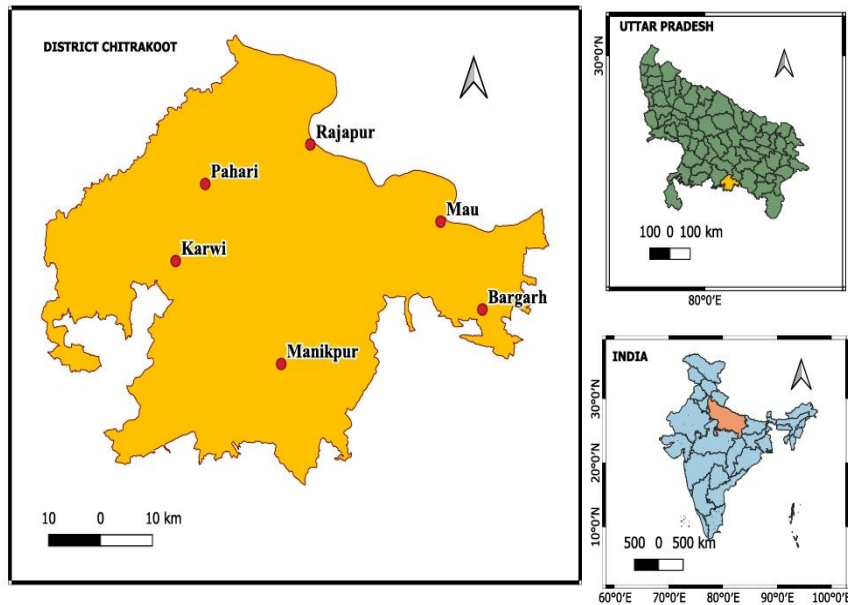
The southern region of Uttarakhand contains the 3388.97 sq. km Chitrakoot district. The districts of Fatehpur and Allahabad border the district on the north; the state of Madhya Pradesh borders it on the east, south-east, and south; and the tehsils of Naraini and Baberu of Banda (its parent district) border it on the west. The district's natural northern boundary is formed by the Yamuna River, while its western and northwestern boundaries are formed by the Baghain River.

Administratively, on May 13, 1997, the district of Chitrakoot was split off from Banda district, which was split into two tehsils, Karvi and Mau. The district's headquarters was located in Karvi, and it was further divided into five blocks, which are Plate I vis a vis Pahari, Karvi (Chitrakoot), Manikpur, Ramnagar, and Mau. The district consists of 650 settlements, of which 551 are inhabited.

According to the 2011 census, there were 9,91,730 people living in the district, of which 527721 (53.25%) were men and 464009 (46.78%) were women. There are 210400 people in the scheduled caste overall (26.23%). There are 315 people per square kilometre. Population growth is decennial at 12.8%. Geographically and topographically speaking, the district is made up of a high plateau known as "Patra." The district area mostly slopes from south-west to northeast. The three rivers that comprise the Chitrakoot district's drainage pattern are the Yamuna, Baghain, and Paisuni.

Since shallow/deep tube wells and dug wells account for 89.72% of net sown area in the district (district statistical statistics, 2008–09), ground water is the primary source of irrigation in that area. 10.28% of the land is irrigated by surface water resources via canals. The total area is 338797 hectares, of which 171227 ha (44.02%) are net sown. There are 26599 hectares (7.84%) of forest overall.

The Pahari block has the highest percentage of land used for farming (66.68%), while Ram Nagar block has the lowest percentage (37.79%). The total gross sown area is 182237 ha, of which 11010 ha have been seeded more than once. Main crops include Rabi and Kharif. The most significant crops are wheat, paddy, gram, jawar, barley and arhar.



*Location Map of Study Area*

### Data used and Methodology

The current study used cartography techniques to create spatio-temporal maps and used the Chitrakoot District Statistical Handbook, 2010 and 2020, for the agriculture data of Chitrakoot. Any region's agricultural growth is significantly influenced by the intensity of its cropping (Dutta, 2011). Growing several crops on the same piece of land in a single agricultural year is how the Cropping Intensity (CI) is calculated.

$$\text{Cropping Intensity (CI)} = (\text{Gross Cropped Area} / \text{Net Sown Area}) \times 100$$

Net sown area (NSA) is the area that has been farmed at least once during a reference year, according to data from the National Sample Survey Organization (NSSO) (Chand et al., 2011).

Net Sown Area for Crops depends on the physio-climatic diversities of the area which is intimately linked to the distribution of the net crop planted area. The agricultural area that is only planted with crops once a year is known as the net sown area. This section shows the total area planted with crops and orchards. The net sown area has shrunk as a result of increased industrialization and urbanization.

**Cropping Intensity:** The term "cropping intensity" refers to the state of all available resources, including capital, labour, land, and agricultural farm management. It is also a crucial component in determining agricultural production. The percentage of the total cropped area to the net sown area is used to compute the cropping intensity.

S. No.	Blocks	Irrigation Intensity (in%)		Changes in Irrigation Intensity (in%)	Cropping Intensity (In%)		Changes in Cropping Intensity
		2010	2020	2010-2020	2010	2020	2010-2020
1	Pahari	22.03	39.39	78.83	108.80	114.02	4.79
2	Karwi	32.39	64.33	98.61	109.43	115.62	5.65
3	Manikpur	26.92	81.94	204.38	109.98	113.24	3.23
4	Ramnagar	18.87	49.88	164.33	103.39	119.89	15.95
5	Mau	24.34	53.12	118.24	110.37	126.07	14.22
		24.91	57.73	132.87	108.39	117.7	8.76

*Source:* Based on the District Statistical Yearbook, 2010 & 2020

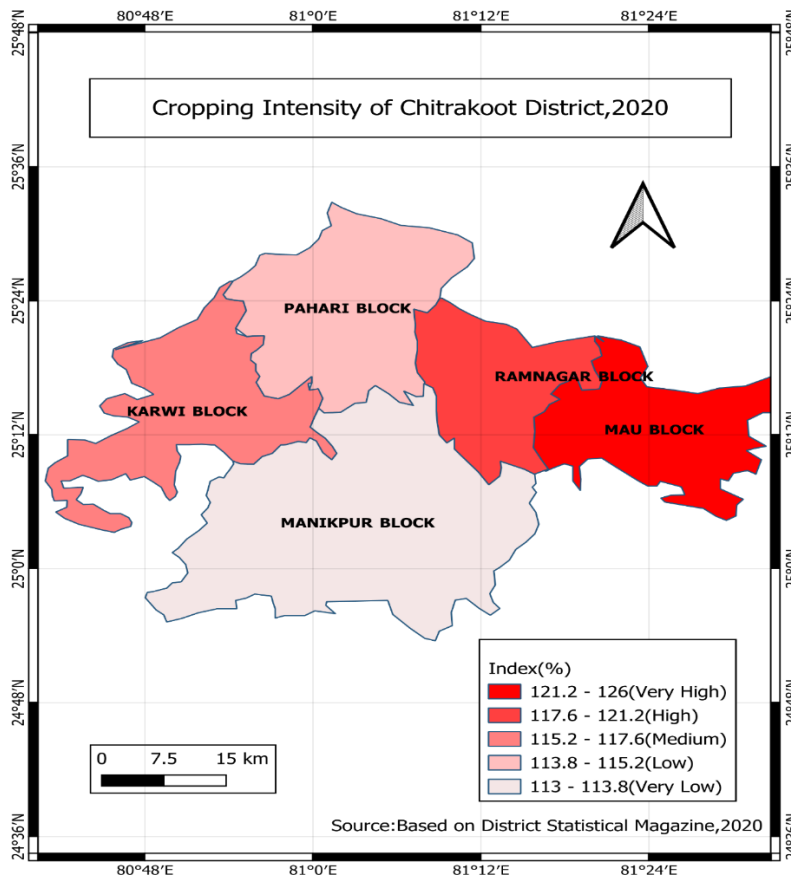
There is a linear relationship between the intensity of irrigation facilities in different blocks of Chitrakoot district with intensity of irrigation, cropping pattern, crop combination and level of agricultural productivity. There are several factors are responsible for high intensity of the cropping, Water availability and means of irrigation play an important role, the better management, water availability, infrastructure development and technological innovation may transform the agricultural scenario of the study area.

The percentage of cropping intensity varies highly within the Chitrakoot district.

Mau had the highest reported cropping intensity (126.07%), followed by Ramnagar (119.89%), Karwi (115.62%), Pahari

(114.02%), and Manikpur which recorded the lowest cropping intensity (113.24%).

According to an analysis of data from 2010 to 2020, the Ramnagar block reported the highest growth in cropping intensity, at 15.95 %. This was followed by Mau (14.22%), Karwi (5.65%), Pahari (4.79%), and Manikpur (3.23%).

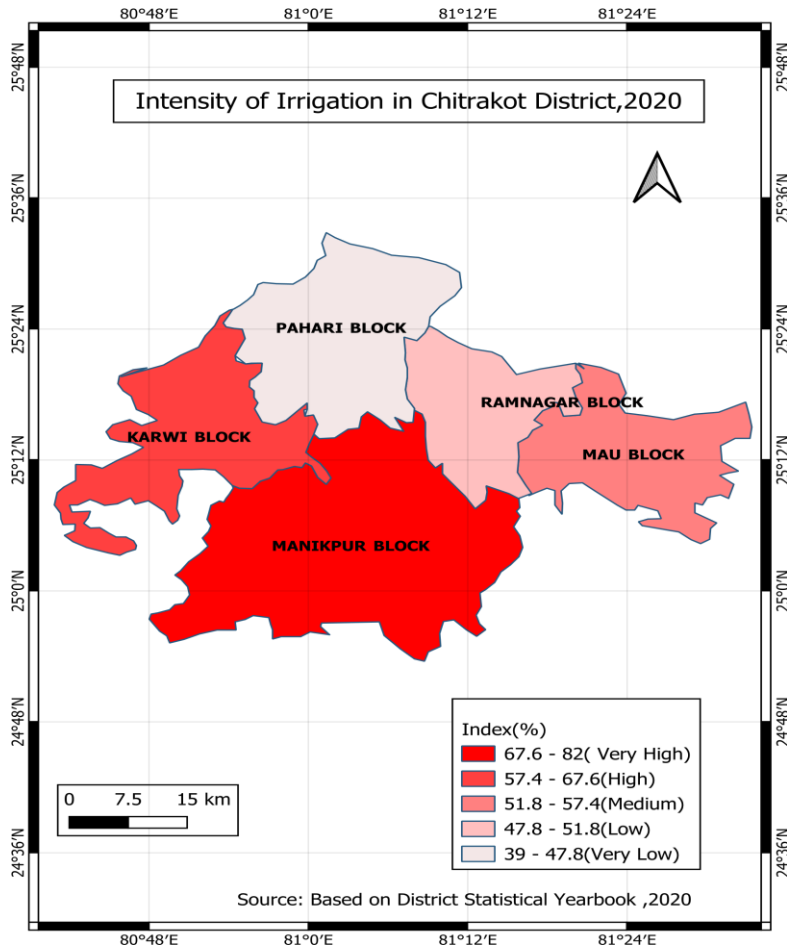


**Figure-1. Cropping Intensity in Chitrakoot District, 2020.**

### **Irrigation intensity in Chitrakoot District**

According to statistics from 2020, the Manikpur block in the Chitrakoot district has the highest recorded irrigation intensity, at 81.94%. This is followed by Karwi at 64.33%, Mau at 53.12%, Ramnagar at 49.88%, and Pahari at 39.39%.

The district's Manikpur block reported an increase in area of 204.38% during the course of ten years, followed by Ramnagar (164.33%), Mau (118.24%), Karwi (98.61%), and Pahari (78.83%).



**Figure-2. Irrigation Intensity in Chitrakoot District, 2020**

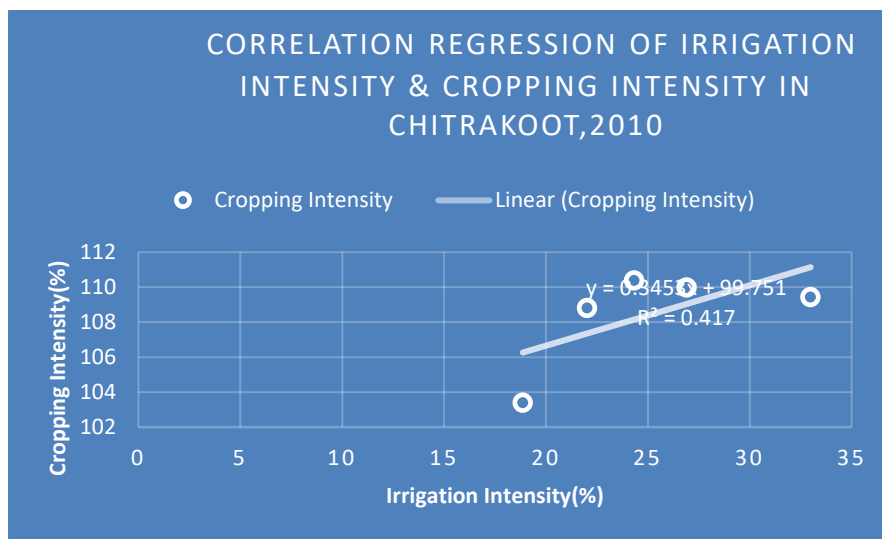
There is a linear relationship between the intensity of irrigation facilities in different blocks of Chitrakoot district with intensity of irrigation, cropping pattern, crop combination and level of agricultural productivity. There are several factors are responsible for high intensity of the cropping, Water availability and means of irrigation play an important role, the better management, water availability, infrastructure development and technological innovation may transform the agricultural scenario of the study area.



The percentage of cropping intensity varies highly within the Chittrakoot district.

Mau had the highest reported cropping intensity (126.07%), followed by Ramnagar (119.89%), Karwi (115.62%), Pahari (114.02%), and Manikpur which recorded the lowest cropping intensity (113.24%).

According to an analysis of data from 2010 to 2020, the Ramnagar block reported the highest growth in cropping intensity, at 15.95 %. This was followed by Mau (14.22%), Karwi (5.65%), Pahari (4.79%), and Manikpur (3.23%).



### **References**

1. Chand, R., Prasanna, P. L., & Singh, A. (2011). *Farm size and productivity: Understanding the strengths of smallholders and improving their livelihoods. Economic and Political Weekly*, 5 11.
2. Dayal, E. (1978). *A measure of cropping intensity. The Professional Geographer*, 30(3).
3. *District Statistical Handbook of Chittrakoot District, 2010&2020.*
4. Dutta MK. "Irrigation Potential of Agriculture in Assam". Concept Publishing company (P) Ltd., New Delhi (2011).
5. Karunakaran K R and Palanisami, K. *An Analysis of Impact of Irrigation on Cropping Intensity. Journal of Indian Economic Review, Delhi School of Economics* 33.2 (1998).

6. Mahajan K. *Agricultural Wages and NREGA: Exploring the myth*. *LIVE mint* (2012). 6. Patidar Bhurelal and Gupta Dinesh. *MNGERA- Issues and Challenges*. *Golden Research Thoughts* 2.3 (2012).
7. Rao CH Hanumantha. *Agriculture: Policy and Performance in Jalan Bimal (ed.) The Indian Economy: Problem and Prospect*, Penguin, New Delhi (1992).
8. Ramaswami Manikam. *NREGA: A real Trickle-Down*. *The Hindu* (2012).
9. Rath N. *Declining Cattle Population*. *Economic and Political Weekly* 50.28 (2015).
10. Hussain, Majid. *Agricultural Geography*.

## बांग्लादेश संकट और भारत पर प्रभाव

प्रो०(डॉ०) रजनीकांत पाण्डेय \*

### सारांश

इक्कीसवीं सदी का वर्तमान दशक अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं तथा विश्व राजनीति में प्रभावशाली राज्यों की अभूतपूर्व हस्तक्षेप का दशक बन रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय संगठनों की अपेक्षाकृत कम होती भूमिका, विश्व स्तर पर संरक्षणवादी रूझानों की पुनर्वापसी, दक्षिणपंथ के उभार तथा अनौपचारिक राजनीति की प्रासंगिकता इस दशक की सामान्य विशेषता बन गये हैं। ऐसे में दक्षिण एशिया में स्थित भारतीय उपमहाद्वीप विश्व राजनीति में सहज महत्वपूर्ण हो जाता है। भारत जैसे सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश की उपस्थिति उसके पड़ोसी देशों की राजनीति को प्रभावित करती है। इसी क्षेत्र में भारत चीन जैसी आर्थिक व सैनिक ताकत के साथ लम्बी सीमा साझा करता है। जिसकी प्रत्यक्ष प्रतिस्पर्धा संयुक्त राज्य अमेरिका और उसके सहयोगियों से है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल और मालदीव भारत के निकट पड़ोसी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्येताओं के लिए यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि इस तीसरे दशक के चार वर्षों में भारत के अलावा सभी पड़ोसी में सत्ता परिवर्तन हुआ है। श्रीलंका, पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यांमार और नेपाल में हुये सत्ता परिवर्तन असामान्य थे। विशेषकर श्रीलंका व बांग्लादेश में हुआ सत्ता परिवर्तन भारत ही नहीं पूरे विश्व के लिये आश्चर्य का विषय रहा। इन देशों में हुए परिवर्तन में महाशक्तियों की परोक्ष भूमिका सामने आई है। म्यांमार, श्रीलंका व मालदीव में जहाँ चीन रणनीतिकार समझा जा रहा है वही बांग्लादेश में हुये परिवर्तन में अमेरिकी भूमिका को स्वयं अपदस्थ प्रधानमंत्री खालिदा जिया ने रेखांकित किया है। व्यापक, अप्रत्याशित तथा असामान्य सत्ता परिवर्तनों ने भारत और उसके देशों के सम्बन्धों को प्रभावित किया है। भारतीय विदेश नीति उनके साथ सम्बन्धों को परिभाषित करने तथा संयोजन करने के नये चरण में पहुँच गई है। क्योंकि प्रत्येक छोटे-बड़े परिवर्तन का क्षेत्र पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है। चीन और अमेरिका की भूमिका भारतीय विदेश मंत्रालय को चिन्तित करने वाले होने चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोधपत्र में भारत व उसके पड़ोसियों के सम्बन्ध को पुनर्परिभाषित किया जायेगा तथा निष्कर्ष प्रस्तुत किये जायेंगे।

**संकेताक्षर :** सहयोग, संघर्ष, हस्तक्षेप, भू-राजनीति, विश्व व्यापार, अल्पसंख्यक, लोकतंत्र, विदेश नीति।

भारत विश्व का सबसे बड़ा देश और चौथी बड़ी अर्थव्यवस्था है। विश्व में क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से सातवाँ बड़ा देश सात देशों के साथ जमीनी सम्पर्क तथा दो देशों के साथ सीधे समुद्री सम्पर्क से जुड़ा है। अपनी भौगोलिक स्थिति, ऐतिहासिक विरासत तथा औपनिवेशिक अनुभवों के आधार पर इस पूरे

\* राजनीति विज्ञान विभाग, दी०द०उ० गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

क्षेत्र को भारतीय उपमहाद्वीप कहा जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में भारत सबसे बड़ा देश है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव सभी पड़ोसी देशों के उपर होता है। भारत के साथ पड़ोसी देशों के सम्बन्ध न केवल समकालीन विश्व-राजनीति, आन्तरिक परिस्थिति आर्थिक आकांक्षाओं से प्रभावित होते हैं बल्कि उनको दिशा देने में ऐतिहासिक घटनाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती हैं। भारत सहित कोई भी देश उसके प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाया है। स्वयं पाकिस्तान एवं बांग्लादेश का जन्म भारतीय भौगोलिक क्षेत्र के विभाजन के फलस्वरूप हुआ है। जबकि नेपाल, भूटान, श्रीलंका और अफगानिस्तान के साथ भारतीय नागरिकों के विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक व परम्परागत सम्बन्ध रहे हैं।

इक्कीसवीं सदी में भारत के पड़ोसी देशों की आन्तरिक व वाह्य नीतियों, घटनाओं में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। यह परिवर्तन लगातार घटित हो रहे हैं। इन घटनाओं का प्रभाव भारत पर होना स्वाभाविक है। विश्व राजनीति व विश्व अर्थव्यवस्था पर भी इसका प्रभाव निश्चित रूप से पड़ा है। समकालीन विश्व क्षेत्रीय घटनाओं तथा देशों के अन्दर घटित होने वाली राजनीति के प्रति पहले से अधिक संवेदनशील हुए हैं। इसलिए ऐसे परिवर्तनों के प्रति वैश्विक प्रतिक्रिया भी त्वरित दिखाई देती है। पड़ोसी देशों में हुए परिवर्तनों ने यह प्रदर्शित किया है कि देशों की आन्तरिक राजनीति में वाह्य प्रभाव मात्रात्मक रूप से बहुत बढ़ गया है साथ ही साथ व्यवस्था बनाये रखने तथा आन्तरिक व वाह्य अराजकता न उत्पन्न होने देने के प्रति परिवर्तन की शक्तियाँ व समूह भी जिम्मेदारीपूर्वक स्थित रहे।

हाल के हुए परिवर्तनों का भारत पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। भारत लम्बे समय से इस क्षेत्र में शान्ति और स्थिरता की समस्या से जूझ रहा है क्योंकि उसका सीधा और निर्णायक असर भारत की आन्तरिक स्थिति, विकास और स्थिरता पर पड़ता है। इसलिए भारत सदैव से पड़ोसियों के साथ शांतिपूर्ण व परस्पर सहयोग की नीति का सार्थक रहा है। स्वतंत्रता के बाद जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में बनने वाली पहली सरकार ने विश्व प्रसिद्ध भारतीय जीवन मूल्यों के ओत-प्रोत 'पंचशील सिद्धान्त' को विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्तों में स्थान दिया। इसने पड़ोसी देशों के साथ स्पष्ट व स्वीकार्य सम्बन्ध बनाने के रास्ते को प्रशस्त किया। भारत ने अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों को स्थायी और परस्पर लाभदायक बनाने के लिए उसके बाद भी प्रयास किया। नरसिम्हा राव सरकार (1991) के समय 'लुक ईस्ट पॉलिसी' तथा आई0के0 (1996) इसी उद्देश्य के अन्तर्गत अपनाई गई।

### नेबर हुड फर्स्ट पॉलिसी (2014)

केन्द्र में नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में बनने के बाद पड़ोसियों के साथ सम्बन्धों को और अधिक फलदायी, समृद्धकारी एवं संवेदनशील बनाने के लिए

नेबरहुड फर्स्ट पॉलिसी (2014) घोषित के साथ ही पूर्वी एशिया के साथ जीवन्त सम्बन्ध बनाने के लिए एक्ट ईस्ट पॉलिसी (2014) की घोषणा की। जहाँ एक्ट ईस्ट पॉलिसी का उद्देश्य दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के साथ अर्थिक और सामरिक सम्बन्धों को बढ़ाना था और इसके अन्तर्गत व्यापार सम्बन्धों को मजबूत करना, क्षेत्रीय सुरक्षा वार्ता में शामिल होना और आसियान के नेतृत्व वाली पहलों में हिस्सा लेते हुए भारत को प्रभावशाली और विकासपरक भूमिका लेना है।

किन्तु पड़ोसी देशों के सम्बन्ध में मोदी सरकार ने पृथक से एक पॉलिसी घोषित की जिसे सरकार ने नेबरहुड फर्स्ट पॉलिसी (2014) नाम दिया। इसका उद्देश्य 'दक्षिण एशियाई पड़ोसियों और हिंद महासागर क्षेत्र के देशों के साथ संबंधों की प्राथमिकता देना और मजबूत करना' है।

नेबरहुड फर्स्ट नीति के सिद्धांत सम्प्रभुता और क्षेत्रीय अखण्डता, परस्पर सम्मान और संवेदनशील, आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना, साझा समृद्धि, क्षेत्रीय एकीकरण के लिए सम्पर्क और लोगों के बीच आदान-प्रदान' शामिल है।

इसके अतिरिक्त बिम्सटेक (1997) ओरा (1997) तथा सार्क (1985) जैसे क्षेत्रीय संगठन भी भारत और उसके पड़ोसी देशों के बीच सहयोग, समन्वय और सम्बन्धों की निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

'प्रधानमंत्री मोदी ने भारतीय विदेश नीति में नया अध्याय जोड़ने का प्रयास किया है। मोदी ने विदेशी नीति को आदर्शपरक से यथार्थपरक बनाने का कार्य आरम्भ किया है। वैचारिक बध्यता से परे देश के विकास के लिए हर संभव प्रयास और विश्व के सभी बड़े छोटे राष्ट्रों के साथ सहयोग के नए मुद्दों की तरफ मोदी ने सराहनीय कार्य शुरू किया है।... प्रधानमंत्री मोदी ने शपथ ग्रहण समारोह के दिन से ही विदेशी संबंधों पर ध्यान देना शुरू कर दिया। अपने शपथ ग्रहण समारोह में दक्षेस के सभी नेताओं को आमंत्रित किया।... अपने पहले विदेश दौरे के लिए भूटान का चयन कर प्रधानमंत्री ने साफ संकेत दिए कि वे अपने पड़ोसी देशों के साथ संबंधों को बेहतर बनाने के लिए तत्पर हैं...(2016)<sup>2</sup>

विदेश नीति की यह निरन्तरता अभी तक बनी हुई है। भारत अपनी विदेश नीति ही नहीं आन्तरिक नीति में भी पड़ोसियों को एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में रखता आया है।

### **बांग्लादेश में परिवर्तन व भारत**

पांच अगस्त दो हजार चौबीस को व्यापक जनांदोलन के दबाव में बांग्लादेशी प्रधानमंत्री शेख हसीना को प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा।

शेख हसीना लम्बे समय से सत्ता में बनी हुई थी और उन्होंने बांग्लादेश को एक स्थिर सरकार दी थी। यह आश्चर्य माना जा रहा है कि शेख हसीना ने मात्र छः महीने पहले देश के आम चुनाव को भारी बहुमत से जीता था लेकिन आरक्षण के एक मुद्दे पर उन्होंने ना केवल बहुमत जनसंख्या को अपने विरुद्ध कर लिया बल्कि कुछ दिनों के भीतर देशव्यापी हिंसक प्रदर्शनों के बीच देश छोड़कर भारत में शरण लेने को मजबूर हुई।

शेख हसीना को भारत समर्थक राजनेता माना जाता रहा है। जबकि विपक्षी बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी (बी.एन.पी.) तथा जमात-ए-इस्लामी भारत के प्रति कठोर व आलोचनात्मक रुख वाले माने जाते रहे हैं। बांग्लादेश में शेख हसीना के इस तख्तापलट का वहाँ की आन्तरिक अराजकता से बचने के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री मोहम्मद युसुफ को अंतरिम सरकार का प्रमुख बनाया गया है जो प्रदर्शनकारियों सहित व्यापक जनमत को स्वीकार्य है।

बांग्लादेश की घटना का भारत के साथ उसके सम्बन्धों पर निर्णायक प्रभाव पड़ा है। हाल की घटनाओं का दोनों देशों के उपर पड़ने वाले असर का आकलन करते हुए विदेशी मामलों के विशेषज्ञ कमर आगा कहते हैं बीएपी न सिर्फ पाकिस्तान बल्कि चीन समर्थित भी है। वह इस्लामिक राजनीति की बात करता है और शेख हसीना के ना रहने पर वह भारत की बजाय पाकिस्तान और चीन की तरफ जाता हुआ दिखाई देगा।... कमर आगा कहते हैं "शेख हसीना चीन और भारत के बीच में संतुलन बनाकर रखती थीं, लेकिन अब इस संतुलन को होकर सवाल उठने शुरू हो गए हैं।"<sup>3</sup>

बांग्लादेश पिछले कुछ दशकों से भारत का विश्वसनीय व्यापारिक साझेदार रहा है। किंतु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण स्थिति भू-राजनीतिक विषयों को लेकर बनने वाली है। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में लम्बे समय से चरमपंथी और अलगाववादी सक्रिय रहे हैं। पूर्वोत्तर के राज्य एक पतले संकरे रास्ते से शेष भारत से जुड़े हैं। उस भौगोलिक स्थिति में बांग्लादेश की स्थिति महत्वपूर्ण हो जाती है। शेख हसीना के शासनकाल के दौरान उन्होंने पूर्वोत्तर राज्यों के साथ सम्पर्क मार्गों की सुविधा उपलब्ध कराया। पूर्वोत्तर के आतंकवादियों को बांग्लादेशी भूमि से मिलने वाला समर्थन बन्द किया और भारत पर चीन की रणनीतिक बढ़त की संतुलित किया। बांग्लादेश दक्षिण एशिया में भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी भी बना। पाँच अगस्त की घटना के बाद इसमें गुणात्मक परिवर्तन की सम्भावना व्यक्त की जा रही है। जिसमें चीन और पाकिस्तान की भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता। हॉल में जब बांग्लादेश के प्रति चीन की चरम प्रतिक्रिया थी। चीनी राजनय और कूटनीतिक क्षेत्र में बांग्लादेश को भारत के करीब जाते देश के रूप में माना

जा रहा था। ऐसे भी चीन की उस रणनीति को हानि पहुँचाने की सम्भावना व्यक्त की जा रही थी जिसके अन्तर्गत वह भारत को स्थलीय और सामुद्रिक दोनों ओर से घेरने की कोशिश में लगा हुआ है। वह पाकिस्तान, नेपाल के साथ-साथ श्रीलंका, मालदीव के साथ जीवन्त आर्थिक व सामरिक सहयोग को मूर्त रूप दे रहा है। ये सभी देश भारत के निकटस्थ पड़ोसी देश हैं और किसी भी क्षेत्रीय तनाव की स्थिति में भारत को गम्भीर रूप से प्रभावित कर सकते हैं।

पिछले दो दशक से बांग्लादेश भारत का महत्वपूर्ण आर्थिक सहयोगी और साझेदार बना हुआ है। इससे दोनों देशों को परस्पर लाभ हुआ है। 2009-2024 के शेख हसीना के कार्यकाल के दौरान बांग्लादेश की अर्थव्यवस्था की विकास दर लगभग छः दशमलव तीन प्रतिशत की औसत वार्षिक गति से बढ़ी है। 'भारत-बांग्लादेश के बीच वस्तुओं का दोतरफा व्यापार, शेष विश्व के साथ भारत के कुल वस्तु व्यापार की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ा है। 2023 में भारत के वैश्विक वस्तु व्यापार का मूल्य 2009 के मूल्य का 2.5 गुना था वहीं विपक्षी व व्यापार का आकार 5.5 गुना था 2009-2023 के बीच द्विपक्षीय वस्तु व्यापार का आकार 2.4 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 13.1 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया। बांग्लादेश को भारत का निर्यात भी शेष विश्व को उसके कुल निर्यात की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ा है।'<sup>4</sup>

इस प्रकार बांग्लादेश और भारत मजबूत आर्थिक सहयोगी बन गये। राजनैतिक उथल-पुथल और सत्ता परिवर्तन के बाद निश्चित रूप से बांग्लादेश और भारत का आर्थिक सम्बन्ध प्रभावित होगा। व्यापार, पर्यटन और चिकित्सा सभी क्षेत्रों पर घटना का तत्काल असर पड़ा है। लेकिन अगर सत्ता परिवर्तन से नीतियों में परिवर्तन किया जाता है तो सबसे अधिक प्रभाव कपड़ा और परिधान उद्योग पर पड़ने की आशंका व्यक्त की जा रही है। 'संकट के फैलने से कई भारतीय कम्पनियों के शेयर मूल्य में गिरावट आई हैं, जिनका देश के साथ मजबूत व्यापारिक संबंध है। इनमें एशियन पेंट्स, इमामी, मैरिको, पर्ल ग्लोबल इंडस्ट्रीज, डाबर, बेयर ग्रुप, बजाज ऑटो और टाटा मोटर्स जैसी भारतीय फर्म शामिल हैं। ये व्यवसाय बांग्लादेश से अपनी बिक्री और राजस्व की सम्भावनाओं के बारे में चिंतित हैं। इसी तरह, बांग्लादेश को सूती धागा निर्यात करने वाली भारतीय कपड़ा फर्म-रेडिमेड परिधान और परिधान आपूर्ति श्रृंखलाओं के लिए एक प्रमुख अपस्ट्रीम सामग्री आपूर्ति श्रृंखलाओं में शिथिलता के बारे में चिंतित है।'<sup>5</sup>

इस आशंका की पुष्टि भारतीय विदेश मंत्री के उस वक्तव्य से भी होती है जहाँ उन्होंने एक समाचार एजेंसी को कहा कि बांग्लादेश की घटनाओं का प्रभाव नकारात्मक हो सकता है। विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता रणधीर जायसवाल ने भी कहा कि बांग्लादेश में उथल-पुथल के कारण 'द्विपक्षीय परियोजनाएं

प्रभावित हुई है।' हाँलाकि कुछ राजनीतिक और आर्थिक का मानना है कि बांग्लादेश भारत आर्थिक सम्बन्ध दीर्घकाल में पुनः सकारात्मक दिशा पा लेगे क्योंकि दोनों अर्थव्यवस्थाओं की एक दूसरे की आवश्यकता है।

भारत की आंतरिक शांति के लिए भी आवश्यक है कि बांग्लादेश में एक मजबूत व शांति के लिए समर्पित सरकार का निर्माण हो। आज पूरे विश्व में इस्लामी अतिवादियों की गतिविधि का प्रसार हो रहा है जो आपसी बन्धुत्व की भावना पर देशों की आधिकारिक सीमाओं का अतिक्रमण करते हैं उन्हें मान्यता देने से इंकार करते हैं। बांग्लादेश में कट्टरपंथियों के प्रभाव में वृद्धि का सीधा असर भारत के पश्चिम बंगाल, असोम व अन्य छोटे सीमावर्ती राज्यों पर पड़ेगा। आन्तरिक समस्याओं के कारण भारत के मणिपुर तथा नागालैण्ड राज्य में पहले से विवाद चल रहा है तथा असोम के पृथक्तावादी पहले से बांग्लादेश में सहानुभूति पाते रहे हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि जल्दी से जल्दी बांग्लादेश में सामान्य संवैधानिक स्थिति बहाल हो।

### विवेचना

दक्षिण एशिया हमेशा से संवेदनशील क्षेत्र रहा है। इसकी संवेदनशीलता का बड़ा कारण इसकी बहुधार्मिक, बहुजातीय व बहुसांस्कृतिक स्थिति है जिसके कारण विभिन्न देश एक दूसरे के साथ गहराई से जुड़े हुए हैं। एक देश की घटना का दूसरे देश की घटना पर अवश्य प्रभाव पड़ता है। बांग्लादेश में हुए आंतरिक घटनाक्रम से भारत इसलिये चिंतित है क्योंकि इन घटनाओं का भारत पर बहुआयामी और दूरगामी असर पड़ना सुनिश्चित है। बांग्लादेश में लगभग आठ प्रतिशत हिन्दु अल्पसंख्यक निवास कर रहे हैं। वहाँ धार्मिक कट्टरपंथियों के आक्रमक होने से हिन्दू ही नहीं बौद्ध व ईसाई अल्पसंख्यकों के लिये जीवन असुरक्षित हुआ है। इसलिए भारत के लिए बहुत आवश्यक है कि बांग्लादेश में वह जल्दी शांति और राजनीतिक स्थायित्व को सम्भव बनाये। विश्व की महाशक्तियों में भी बांग्लादेश की घटना को लेकर चिन्ता है। क्योंकि इस संकट का केवल क्षेत्रीय सम्बन्ध नहीं है। चीन के बढ़ती क्षेत्रीय महत्वकांक्षाओं व विश्व राजनीति में अमेरिका की प्रतिक्रिया में उभरे रूस, ईरान, उत्तर कोरिया व समर्थक देशों के समूह ने विश्व राजनीति को गहराई तक प्रभावित किया है। बांग्लादेश में पूर्व स्थापित शेख हसीना सरकार ने समृद्धि और आर्थिक विकास के लिए सुव्यवस्थित प्रयास किये। पड़ोसियों से परस्पर विकास और विश्वास के सम्बन्ध बनाये। अमेरिका व यूरोप की महाशक्तियों के साथ-साथ चीन के साथ भी संतुलित सम्बन्ध बनाकर बांग्लादेश का तेजी से आर्थिक विकास किया। शेख हसीना के तख्तापलट के बाद इन परिस्थितियों में नकारात्मक परिवर्तन आता दिख रहा है जिसका सबसे बड़ा और सीधा असर भारत पर होता दिख रहा है। भारत को अमेरिका सहित अन्य बड़ी शक्तियों के साथ मिलकर बांग्लादेश में स्थायी, प्रगतिशील, लोकतांत्रिक सरकार के गठन के



लिए प्रयास करना चाहिए क्योंकि वह भारत के तात्कालिक तथा दीर्घकालिक हित में है। बांग्लादेश में आप भी बड़ी संख्या में भारत समर्थक राजनायिकों, बुद्धिजीवियों तथा रणनीतिकारों की उपस्थिति है। बांग्लादेश का आमजन भारत का महत्व समझना है। भारत नीति निर्माताओं का इन सबका उपयोग करना चाहिए।

### संदर्भ

1. <https://pwonlyias.com/hi/current-affairs/indias-neighborhood-watch-past-present-and-future/> दिनांक 02.09.2024 को देखा गया।
2. बिस्वाल; तपन (2016) अंतर्राष्ट्रीय संबंध (द्वितीय संस्करण) ओरियंट ब्लैक स्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद, पृ० 239।
3. <https://www.bbc.com/hindi/articles/cy844yx2kk90/> दिनांक 02.09.2024 को देखा गया।
4. <https://m.economictimes.com/news/economy/foreign-trade/turmoil-in-bangladesh-and-its-impact-on-india-bangladesh-trade-ties/articleshow/112797853.cms>
5. <https://www.isas.nus.edu.sg/> बांग्लादेश संकट भारत-बांग्लादेश आर्थिक संबंधों पर प्रभाव अभितेंदु पालित दिनांक 17 अगस्त 2024 को देखा गया।
6. गांगुली सुमित सम्पादक (2018) भारत की विदेश नीति पुनरावलोकन एवं संभावनाएं, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली।
7. अल्फोंस, के०जे० सम्पादक (2022) गतिमान भारत, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली (ई-बुक)।
8. प्रतिमा (2018) भारत-बांग्लादेश सम्बन्ध: बदलते परिप्रेक्ष्य उभरते आयाम, अंकिता पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

## क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों का आलोचनात्मक विश्लेषण

डॉ० दिवाकर त्रिपाठी \*

विद्याधर मिश्र \*\*

### सारांश

द्वितीय विश्वयुद्ध से उत्पन्न खतरे को देखते हुए ब्रिटिश सरकार को अपने एशियाई उपनिवेशों की सुरक्षा भी खतरे में दिखाई पड़ने लगी थी। प्रशान्त महासागर में जापान द्वारा युद्ध का एक नया मोर्चा खोल दिए जाने के फलस्वरूप परिस्थितियाँ अत्यन्त गम्भीर हो गई थी। दिसम्बर, 1941 में जापान ने अमेरिकी नौसैनिक अड्डे पर्ल हार्बर पर अचानक आक्रमण कर सबको आश्चर्य में डाल दिया था। जापानी सेनाएं शीघ्र ही शंघाई, स्याम, सिंगापुर, ब्रिटिश मलाया आदि को रौंदती हुई हिन्द महासागर तथा बंगाल की खाड़ी में प्रवेश कर चुकी थीं। बर्मा तथा अण्डमान द्वीप का भी पतन हो चुका था। ऐसी विषम परिस्थिति में ब्रिटिश सरकार युद्ध में भारतीयों का सहयोग चाहती थी। अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट तथा चीनी प्रधानमंत्री च्यांग काई शेक ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल पर, भारत के लोगों से सहयोग प्राप्त करने हेतु उन्हें कुछ रियायतें देने के लिए दबाव बनाया। अतः चर्चिल ने हाउस ऑफ कॉमंस के एक सदस्य सर स्टेफर्ड क्रिप्स को भारतीय नेताओं से बातचीत करने के लिए मार्च, 1942 में भारत भेजा। क्रिप्स ने डोमिनियन स्टेट्स, संविधान सभा का निर्माण, अल्पसंख्यकों तथा अन्य समुदायों के हितों के संरक्षण समेत कई प्रस्ताव रखे जो भारत के किसी भी दल को उपयुक्त नहीं लगे। कांग्रेस, मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा सहित सभी पक्षों ने क्रिप्स के प्रस्तावों को विभिन्न कारणों से अस्वीकार कर दिया। क्रिप्स अपने कार्यों में असफल होकर अन्ततः 12 अप्रैल, 1942 को इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गए।

**संकेताक्षर :** स्टेफर्ड क्रिप्स, चर्चिल, रूजवेल्ट, च्यांग काई शेक, एमरी, लिनलिथगो, मौलाना आजाद, जवाहरलाल नेहरू, डोमिनियन, विश्वयुद्ध, ब्रिटेन, अमेरिका, बर्मा, जापान, चीन, कांग्रेस, मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा, रक्षामन्त्री, पर्ल हार्बर, संविधान सभा।

### प्रस्तावना

1 सितम्बर, 1939 को द्वितीय विश्वयुद्ध आरम्भ हो गया। अंग्रेजी सरकार ने भारतीय विधान मण्डल से परामर्श किए बिना ही भारत की ओर से युद्ध की घोषणा कर दी। 14 सितम्बर, 1939 को हुई कांग्रेस कार्यकारिणी ने इसके विरोध में एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें कहा गया कि भारत की ओर से

\* असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, डॉ० राम मनोहर लोहिया अक्व विश्वविद्यालय, अयोध्या, उ.प्र.

\*\* असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास, राजकीय महिला महाविद्यालय, खलीलाबाद, सन्त कबीर नगर, उ.प्र.

युद्ध और शान्ति का निर्णय भारतीय लोग ही करेंगे। हम किसी ऐसे युद्ध से न तो सम्बन्धित हो सकते हैं और न ही उसमें सहयोग दे सकते हैं जो साम्राज्यवादी नीतियों पर आधारित हो। समिति ने ब्रिटिश सरकार से माँग की कि वह युद्ध के उद्देश्य, लोकतन्त्र और साम्राज्यवाद पर अपनी नीतियाँ स्पष्ट करे।

मई, 1940 में नेविले चेम्बरलेन के स्थान पर विंस्टन चर्चिल, ब्रिटेन के प्रधानमंत्री बने और भारत सचिव जेटलैण्ड के उत्तराधिकारी बने एल.एस. आमरी। चर्चिल, उदारवादी दल के प्रमुख साम्राज्यवादी राजनीतिज्ञ थे जो किसी भी कीमत पर भारत पर ब्रिटिश अधिकार को कम करने अथवा छोड़ने को तैयार नहीं थे। क्रिप्स के भारत भेजे जाने का सबसे बड़ा कारण यह था कि विश्वयुद्ध में ब्रिटेन की स्थिति डावाँडोल हो रही थी। जून, 1940 में अंग्रेजी सेना को फ्रांस में करारी हार मिली थी और जर्मनी ने फ्रांस को घुटने टेकने के लिए बाध्य कर दिया था। ऐसी परिस्थिति में भारतीय नेताओं का समर्थन पाने के लिए वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने 8 अगस्त, 1940 को एक प्रस्ताव रखा जिसमें वाइसराय की कार्यकारिणी का विस्तार कर भारतीयों को उसमें शामिल करने तथा एक 'युद्ध परामर्शदात्री समिति' के गठन की बात कही गयी थी। इसमें प्रादेशिक स्वशासन तथा भारत के लोगों द्वारा अपना संविधान स्वयं बनाने सहित कई अन्य प्रस्ताव भी थे। किन्तु कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों ने अलग-अलग कारणों से इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया था।

### अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ब्रिटिश सरकार की नीतियों पर प्रकाश डालना है। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय भारतीय नेताओं से बात करना ब्रिटिश सरकार की मजबूरी थी। परन्तु, साथ ही वह भारत के लोगों को किसी प्रकार की रियायत न देने के अपने इरादे पर भी दृढ़ थी। फिर भी, अपने को न्यायपूर्ण दिखाने के लिए उसने सर स्टेफर्ड क्रिप्स को भारतीय नेताओं से बातचीत करने के लिए दिल्ली भेजा। इस शोधपत्र के द्वारा यह दर्शाना है कि औपनिवेशिक सरकार कभी भी अपने उपनिवेश के निवासियों के हित की बात सोच भी नहीं सकती। उसका एकमात्र उद्देश्य उपनिवेशों का आर्थिक शोषण करना ही होता है।

### शोध-पद्धति

प्रस्तुत शोधपत्र हेतु शोधकर्ता की शोधपद्धति ऐतिहासिक, समालोचनात्मक और विश्लेषणात्मक रही है। ज्ञात तथ्यों तथा पूर्ववर्ती लेखकों के विचारों तथा भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के समय लिखे गए ग्रन्थों का अध्ययन कर उनसे प्राप्त सामग्री का संचयन और उनका विश्लेषण किया गया

है। शोध अध्ययन का सबसे महत्वपूर्ण घटक, अध्ययन की सामग्री और विषयवस्तु होती है। इस विषय के अध्ययन हेतु प्राथमिक स्रोत के रूप में ब्रिटिश सरकार के समय पर समय पर जारी किए गए आदेश तथा भारतीय बुद्धिजीवियों द्वारा लिखे गए विवरण प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। द्वितीयक स्रोत के रूप में अनेक भारतीय और अन्य लेखकों के अध्ययन और कार्य भी उपलब्ध हैं। प्रस्तुत शोध में इन सबका सम्यक् उपयोग किया गया है।

### साहित्यावलोकन

“क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों का आलोचनात्मक विश्लेषण” विषय पर किए गए इस शोध का उद्देश्य तथा शोध पद्धति का विवरण प्रस्तुत करते हुए इस विषय पर लिखे गए साहित्य का अवलोकन, विश्लेषण और मूल्यांकन किया गया है। स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान उपलब्ध आदेशों, विवरणों एवं संस्मरणों तथा विभिन्न भारतीय नेताओं की जीवनीयों हमारे अध्ययन की प्रमुख स्रोत सामग्री हैं। सरदार वल्लभभाई पटेल के सचिव रहे वी.पी. मेनन की दो पुस्तकें ‘द ट्रांसफर ऑफ पॉवर इन इण्डिया’ तथा ‘इंटीग्रेशन ऑफ द इण्डियन स्टेट्स’ मौलाना अबुल कलाम आजाद की ‘इण्डिया विन्स फ्रीडम’ डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की जीवनी ‘इण्डिया डिवाइडेड’ को प्राथमिक स्रोत के रूप में प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त द्वितीयक स्रोत के रूप में ‘द हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ द इण्डियन पीपल, खण्ड-11’ (डॉ० आर.सी. मजूमदार द्वारा सम्पादित तथा भारतीय विद्या भवन, मुम्बई द्वारा प्रकाशित) ‘आधुनिक भारत का इतिहास’ (रामलखन शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित), भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष (बिपिन चन्द्र द्वारा सम्पादित तथा हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित), आधुनिक भारत: 1885-1947 (सुमित सरकार द्वारा लिखित तथा राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित) तथा आधुनिक भारत का इतिहास (डॉ० जगन्नाथ प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ-266001 द्वारा प्रकाशित) आदि सामग्री का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया है।

### क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों का आलोचनात्मक विश्लेषण

1941 के मध्य से द्वितीय विश्वयुद्ध में महत्वपूर्ण बदलाव आ गया। धुरी शक्तियों ने यूगोस्लाविया, यूनान और एजियन सागर के द्वीपों में सफलता प्राप्त की। दिसम्बर, 1941 में विश्वयुद्ध में एक अप्रत्याशित मोड़ आया। जापान ने धुरी राष्ट्रों की ओर युद्ध में सम्मिलित होने की घोषणा की और 7 दिसम्बर, 1941 को उसने अमेरिकी नौसेनिक अड्डे ‘पर्ल हार्बर’ पर भयंकर आक्रमण किया जिसमें अमेरिका के लगभग 2000 नौसैनिक मारे गए तथा उसका

नौसैनिक अड्डा तबाह हो गया। इस प्रकार प्रशान्त महासागर में भी विश्वयुद्ध आरम्भ हो गया। जापान ने एक के बाद दूसरे पूर्वी एशिया और दक्षिण-पूर्व-एशिया के देशों पर अधिकार करना शुरू कर दिया। 08 दिसम्बर, 1941 को जापानी सेना ने शंघाई और स्याम पर अधिकार कर लिया तथा वे ब्रिटिश मलाया में पहुँच गईं। 15 फरवरी, 1942 को सिंगापुर का पतन हो गया। फरवरी, 1942 तक जापानी नौसेना हिन्द महासागर और बंगाल की खाड़ी में पहुँच चुकी थी। मलाया को जीतने बाद जापानी सेनाओं ने 7 मार्च को रंगून पर भी अधिकार कर लिया और बर्मा में प्रवेश कर गयीं। 23 मार्च को अण्डमान द्वीपसमूह भी जापानी आधिपत्य में आ गया। यह माना जा रहा था कि जापानी सेनाएं शीघ्र ही मणिपुर के रास्ते भारत में प्रवेश करेंगी और भारत से अंग्रेजों को बाहर खदेड़ देंगी।

ऐसी स्थिति में चर्चिल ने अनुभव किया कि भारतीय नेताओं का सहयोग प्राप्त करना नितान्त आवश्यक था। जापानी आक्रमण की गुरुता से भारत में उदारवादी नेता पूरी तरह परिचित थे। 03 फरवरी, 1942 को उदारवादी नेता तेज बहादुर सप्रू ने 15 गैर-पार्टी सदस्यों से हस्ताक्षरित एक पत्र चर्चिल को भेजा जिसमें कहा गया कि भारत में एक उदार राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की जाय और शीघ्र ही भारत को क्राउन के प्रति उत्तरदायी एक डोमिनियन स्टेटस प्रदान किया जाय।

ब्रिटेन के सहयोगी राष्ट्र भी भारतीय जनता के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करने के लिए उस पर दबाव बना रहे थे। इनमें प्रमुख थे—अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट, चीन के प्रधानमन्त्री च्यांग काई शेक और आस्ट्रेलिया के प्रधानमन्त्री जॉन कर्टिन। 9 फरवरी, 1942 को च्यांग काई शेक दिल्ली पहुँचे। 11 फरवरी को मौलाना अबुल कलाम आजाद और जवाहरलाल नेहरू उनसे मिले। अपनी वार्ता के दौरान च्यांग काई शेक ने कहा कि “परतन्त्र देश को स्वतन्त्रता दो तरीके से ही मिल सकती है। पहला, तलवार के बल पर विदेशियों को अपने देश से निष्कासित करके और दूसरा, शान्तिपूर्ण तरीके से। दूसरे तरीके में अधिक समय लग सकता है, इसकी रपतार धीमी होगी और जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाय, स्वराज के कई स्तरों से गुजरना होगा।” उन्होंने चर्चिल से पत्र व्यवहार किया और उनसे प्राप्त उत्तर के क्रम में कहा कि यदि भारतीय नेतृत्व बुद्धिमत्ता से कार्य करे तो उसे युद्ध के बाद स्वतन्त्रता मिल सकती है। भारत से जाते समय च्यांग ने ब्रिटिश सरकार से अपील की कि वह जितनी जल्दी हो सके भारत को राजनीतिक शक्ति प्रदान करे। अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रेंकलिन डी. रूजवेल्ट ने जापानी समस्या की गम्भीरता को समझा और उन्होंने ब्रिटिश प्रधानमन्त्री विंस्टन चर्चिल को, इस विषय को लेकर, भारत के विषय में अपनी नीतियों पर पुनर्विचार करने के लिए लिखा। 4 मार्च, 1942 को चर्चिल ने रूजवेल्ट को लिखा कि वे युद्ध के बाद भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य

की स्थिति देने पर विचार कर रहे हैं। 10 मार्च को रूजवेल्ट ने चर्चिल को एक लम्बा जवाबी टेलीग्राम भेजा।

रूजवेल्ट के दबाव में आकर 11 मार्च को चर्चिल ने ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में घोषणा की कि "युद्ध मन्त्रिमण्डल ने सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया है कि हाउस ऑफ कॉमंस के सदस्य और अभी हाल ही में सरकार में शामिल हुए सर स्टेफर्ड क्रिप्स, जो 'युद्ध कैबिनेट' के सदस्य भी हैं, भारत जाकर स्वयं निजी विचार विमर्श से भारतीय नीतियों पर अपने आपको सन्तुष्ट कर इस निर्णय से लोगों को अवगत कराएंगे। यह निर्णय न्यायपूर्ण और अन्तिम होगा और अभीष्ट मन्तव्य प्राप्त कर लेगा।" चर्चिल ने घोषणा में आगे कहा कि जापानी खतरे को देखते हुए हमारा विचार है कि सभी भारतीय, जापानी संकट का मिलकर सामना करें। इस एक-सदस्यीय मिशन का गठन क्लीमेण्ट एटली के नेतृत्व में गठित एक विशेष समिति की सलाह पर किया गया था। समिति के सदस्यों में एमरी, साइमन और क्रिप्स शामिल थे। राष्ट्रपति रूजवेल्ट, क्रिप्स मिशन के कार्यों और उसके भविष्य के बारे में अत्यधिक रुचि ले रहे थे। इसीलिए उन्होंने क्रिप्स मिशन की गतिविधियों की जानकारी लेने तथा उसकी भारतीय नेताओं से हुई वार्ता की प्रगति जानने के लिए कर्नल लुई ए. जॉनसन को अपने व्यक्तिगत प्रतिनिधि के रूप में दिल्ली भेजा। यद्यपि जॉनसन की आधिकारिक रूप से कोई स्थिति नहीं थी फिर भी उन्होंने सभी वार्ताओं में एक शान्ति-दूत के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।<sup>2</sup>

सर स्टेफर्ड क्रिप्स 22 मार्च, 1942 को हवाई जहाज से दिल्ली पहुँचे। अगले ही दिन उन्होंने अपना प्रस्तावित मसौदा (Draft Declaration) वाइसराय की कार्यकारी परिषद् के समक्ष रख दिया। प्रस्तावित मसौदे के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार थे—

1. भारत में पूर्ण उत्तरदायी स्वशासन की स्थापना के लिए एक नया भारतीय संघ बनाया जाय जिसे एक डोमिनियन राज्य का पूर्ण दर्जा प्राप्त हो।
2. युद्ध का संकट समाप्त होते ही एक संविधान निर्मात्री संस्था का गठन किया जाय।
3. ब्रिटिश सरकार नए संविधान को स्वीकार करने और लागू करने के लिए दो शर्तों पर वचन देती है। पहला, यदि कोई राज्य संघ द्वारा बनाए गए संविधान को स्वीकार नहीं करता है तो उसे उसी प्रक्रिया से अपना संविधान स्वयं बनाने की आजादी होगी और इस प्रान्तीय संविधान को संघ के द्वारा बनाए गए संविधान के बराबर की स्थिति प्राप्त होगी। इसी प्रकार भारतीय रियासतें भी नए संघीय संविधान को

स्वीकार या अस्वीकार कर सकती हैं। अस्वीकरण की स्थिति में उनके सन्धि की शर्तों पर पुनिर्विचार किया जाएगा।

4. दूसरी स्थिति में, ब्रिटिश सरकार तथा संविधान निर्मात्री संस्था के बीच एक सन्धि के मसौदे पर चर्चा की जाएगी जिसमें ब्रिटिश सरकार से भारतीयों को उत्तरदायित्व के पूर्ण हस्तांतरण के समय उठने वाले सम्भावित मामले, विशेष रूप से, ब्रिटिश सरकार द्वारा पूर्व में किए गए प्रजातीय तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों की संरक्षा से सम्बन्धित विषय शामिल होंगे।
5. जब तक नए संविधान का निर्माण नहीं हो जाता है, तब तक विश्वयुद्ध को देखते हुए सुरक्षा के मामलों में ब्रिटिश सरकार का पूर्ण नियन्त्रण रहेगा। भारत के सैनिक, नैतिक और भौतिक संसाधनों को संगठित करने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी भारत सरकार की होगी जो इन संसाधनों को भारत की जनता के सहयोग से जुटाएगी। इस कार्य के लिए ब्रिटिश सरकार, भारत के प्रमुख वर्गों के लोगों का तुरन्त और प्रभावशाली ढंग से राष्ट्रमण्डल और संयुक्त राष्ट्र के कार्य में योगदान चाहती है।<sup>3</sup>

क्रिप्स के प्रस्ताव के दो भाग थे। दीर्घकालीन प्रस्ताव में युद्ध के बाद भारतीय संघ के लिए एक संविधान सभा के गठन का प्रस्ताव था। यह संविधान सभा डोमिनियन स्टेट्स की होगी तथा समस्त शक्तियों का उपभोग कर सकेगी।<sup>4</sup> इसे यह निर्णय लेने का अधिकार होगा कि वह ब्रिटिश कॉमनवेल्थ का भाग रहेगी अथवा नहीं। अल्पकालीन प्रस्तावों में, युद्धकाल में वाइसराय की कार्यकारिणी परिषद् का गठन किया जाएगा जो पूर्णतः भारतीय सदस्यों वाली होगी। इसी समय वाइसराय लिनलिथगो ने त्यागपत्र की धमकी दी थी, किन्तु चर्चिल ने उन्हें समझाया कि “दुर्भाग्यपूर्ण अफवाहों, प्रचार और अमरीका के सामान्य दृष्टिकोण को देखते हुए शुद्ध रूप से नकारात्मक रवैया अपनाना असम्भव होगा और क्रिप्स मिशन इस बात का प्रमाण होगा कि हमारी नीयत साफ है.....। यदि भारतीय दल इसे अस्वीकार कर देते हैं..... तो दुनिया के सामने हमारी ईमानदारी सिद्ध हो जाएगी” ..... (लिनलिथगो को चर्चिल का पत्र, 10 मार्च 1942)।<sup>5</sup>

भारत आने से पहले ही स्टेफर्ड क्रिप्स ने वाइसराय लिनलिथगो को लिखा था कि वे कांग्रेस के नेताओं के अलावा मुस्लिम लीग, भारतीय रियासतों के राजाओं, हिन्दू महासभा और सिन्ध प्रान्त के प्रधानमंत्री खान बहादुर अल्लाह बक्श से भी मिलना चाहेंगे। अल्लाह बक्श ने अभी हाल में ही दिल्ली में आयोजित राष्ट्रवादी मुसलमानों के एक सम्मेलन की अध्यक्षता की थी।<sup>6</sup> इस समय मौलाना अबुल कलाम आजाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष थे।

क्रिप्स मिशन जब तक भारत में रहा, गाँधीजी पृष्ठभूमि में ही रहे। किन्तु कांग्रेस की ओर से बातचीत करने वाले जवाहरलाल नेहरू और मौलाना आजाद ने पूरे समय अनुच्छेद 5 के तत्काल परिवर्तन सम्बन्धी प्रावधानों पर ही ध्यान केन्द्रित रखा।

यहाँ इस तथ्य पर विचार करना रोचक है कि ब्रिटिश सरकार ने इतने सारे भारतीय दलों के प्रतिनिधियों से सलाह क्यों करना चाहती थी। यह अच्छी तरह से ज्ञात था कि कांग्रेस सम्पूर्ण देश के बहुत बड़े भाग के लोगों का प्रतिनिधित्व कर रही थी। मुस्लिम लीग सरकार के सहयोग से भारत के मुसलमानों में अपना प्रभाव बढ़ा रही थी। शेष दलों और समुदायों के प्रतिनिधि केवल सरकार द्वारा पोषित ही थे। इतने सारे दलों को वार्ता के लिए बुलाने का एक ही उद्देश्य था कि वह कांग्रेस के समक्ष एक प्रतिभार स्थापित कर सके। ब्रिटिश सरकार विश्व के अन्य राष्ट्रों को यह दिखाना चाहती थी कांग्रेस ही एकमात्र ऐसी पार्टी नहीं थी जो सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व कर रही थी। इसके द्वारा वह कांग्रेस पर दबाव बनाने का कार्य भी कर रही थी।

29 मार्च 1942 को क्रिप्स, कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना आजाद से मिले। उन्होंने अपना प्रस्ताव मौलाना आजाद को दिया। इसमें वाइसराय की वर्तमान कार्यकारिणी परिषद् (Executive Council) को भंग कर एक नई कार्यकारिणी परिषद् के गठन की बात कही गयी थी। यह नई परिषद् कांग्रेस और अन्य दलों के नामित सदस्यों से बनायी जानी थी। नई परिषद् युद्धकाल तक कार्य करेगी। जैसे ही युद्धजनित संकट समाप्त होगा, ब्रिटिश सरकार भारतीय स्वतन्त्रता के विषय पर विचार करेगी। प्रस्ताव का मुख्य आशय यह था कि ब्रिटिश सदस्यों के बहुमत वाली कार्यकारिणी परिषद् में सभी सदस्य भारतीय होंगे। ब्रिटिश अधिकारी, सचिव के पद पर बने रहेंगे तथा सरकार के स्वरूप में भी कोई बदलाव नहीं होगा। वार्ता के दौरान स्टेफर्ड क्रिप्स ने यह स्पष्ट किया कि नई परिषद् में वाइसराय की स्थिति, संयुक्त राज्य (UK) में सम्राट की तरह, एक सांविधानिक प्रमुख जैसी होगी और वाइसराय सांविधानिक प्रमुख होने के नाते परिषद् की सलाह का मानने के लिए बाध्य होगा। प्रस्तावित नई परिषद्, ब्रिटिश कैबिनेट की तरह शक्तियों का प्रयोग करेगी, न कि वाइसराय। 'इण्डिया ऑफिस' के बारे कहा गया कि उसका अस्तित्व बना रहेगा और भारत सचिव (Secretary of State for India) की स्थिति अन्य डोमिनियन राज्यों की तरह 'डोमिनियन सचिव' (Dominion Secretary) की होगी। इसी दिन क्रिप्स ने एक प्रेस कांफ्रेंस भी की और उसके समक्ष अपने प्रस्तावों को रखा।

कांग्रेस कार्य समिति (Congress Working Committee) की बैठक 29 मार्च से 11 अप्रैल तक दिल्ली में चली। इस बैठक में क्रिप्स के प्रस्तावों पर विचार विमर्श किया गया। गाँधीजी, क्रिप्स प्रस्तावों के शुरु से ही विरोधी थे।



उनका कहना था कि भारत किसी भी स्थिति में युद्ध के पक्ष में शामिल नहीं हो सकता। जब वे पहली बार क्रिप्स से मिले तो क्रिप्स ने उन्हें बताया कि 'युद्धकाल में कांग्रेस द्वारा सरकार का सहयोग इस आधार पर किया जाएगा कि वाइसराय की कार्यकारिणी परिषद् का पूर्णतः भारतीयकरण कर दिया जाएगा और युद्ध के बाद भारत को स्वतन्त्रता दे दी जाएगी।' यह प्रस्ताव कांग्रेस के नेताओं से सलाह के बाद ही तैयार किया गया था जिसमें गाँधीजी स्वयं शामिल थे। गाँधीजी ने कहा कि युद्धकाल में सरकार का समर्थन करने का इस प्रकार का कोई प्रस्ताव हमें याद नहीं है। इस पर क्रिप्स बहुत उदास हुए। जवाहरलाल नेहरू, यूरोप और एशिया की घटनाओं को लेकर अत्यधिक परेशान थे और विभिन्न राष्ट्रों के लोकतन्त्र के भाग्य को लेकर चिन्तित भी थे। उस समय भारतीयों में ब्रिटिश शासन के खिलाफ ऐसा माहौल बन गया था कि वे अपनी बात को खुलकर सामने नहीं रख सके। कांग्रेस कार्य समिति के अन्य नेता युद्ध के विषय में अपना स्वतन्त्र विचार रखने में असमर्थ थे और वे गाँधीजी की ओर नेतृत्व के लिए देख रहे थे, सिवाय सी. राजगोपालाचारी के। उनके विचार स्पष्ट थे लेकिन उन्हें महत्व नहीं दिया गया।

दो दिनों तक कांग्रेस कार्य समिति में क्रिप्स के प्रस्तावों पर चर्चा होती रही। परन्तु कोई निष्कर्ष नहीं निकल सका। अतः मौलाना आजाद ने विभिन्न मुद्दों पर कार्यसमिति को स्पष्टीकरण देने के लिए 1 अप्रैल, 1942 को क्रिप्स को पुनः बुलाया। इस बार की मीटिंग में क्रिप्स के भाव बदले हुए थे। वाइसराय और उसकी कार्यकारिणी परिषद् के अधिकारों और कर्तव्यों को लेकर उन्होंने कहा कि वाइसराय, परिषद् की सलाह पर कार्य करेगा लेकिन परिषद् का निर्णय लेने का अधिकार असीमित नहीं होगा। वाइसराय की वर्तमान प्रास्थिति कानून में संशोधन किए बिना परिवर्तित नहीं की जा सकती है। फिर भी, वाइसराय सांविधानिक प्रमुख के रूप में अपना कार्य करेगा। इस प्रकार, मौलाना आजाद और क्रिप्स के बीच हुई पहली बातचीत के दौरान दिए गए वक्तव्य स्पष्ट थे जो अब बदले हुए थे। कांग्रेस के नेताओं पर अपना प्रभाव जमाने के लिए या भारत सरकार के नए सुझाव प्राप्त होने पर या फिर लंदन स्थित 'युद्ध कैबिनेट' के दबाव में आकर या इन तीनों के संयुक्त प्रभाव के कारण क्रिप्स की धारणा बदली होगी। क्रिप्स, अल्लाह बक्श से भी मिले लेकिन कोई उल्लेखनीय विमर्श नहीं किया गया।

2 अप्रैल को कांग्रेस कार्य समिति की बैठक हुई जिसमें मौलाना आजाद ने स्पष्ट किया कि—

1. ब्रिटिश कैबिनेट युद्ध के दौरान भारत को स्वतन्त्रता देने में खतरा महसूस कर रही है और युद्धकाल में भारत को आजादी नहीं मिलेगी।

2. युद्ध की परिस्थितियों को देखते हुए और विशेषकर अमेरिकी दबाव के चलते ब्रिटेन की भारत के प्रति अपनायी गयी नीतियों में थोड़ा परिवर्तन आया है। यहाँ तक कि चर्चिल भी यह सोच रहे थे कि भारत को युद्ध के दौरान स्वेच्छा से ब्रिटेन की सहायता करने का एक अवसर दिया जाना चाहिए। इसी कारण से उन्होंने पूर्णतः भारतीय लोगों की कार्यकारिणी परिषद् के निर्माण की बात कही थी जिसे ज्यादा से ज्यादा अधिकार दिए जाएंगे। परन्तु, कानूनी तौर पर परिषद् एक 'परिषद्' ही होगी न कि 'कैबिनेट'।
3. व्यावहारिक अर्थों में वाइसराय, परिषद् के प्रति उदारता अपना सकता था और उसकी सलाह को मान सकता था। परन्तु, वास्तविक रूप में परिषद्, वाइसराय की सहायक ही होगी, न कि कैबिनेट। और अन्तिम उत्तरदायित्व वाइसराय का होगा, न कि परिषद् का।
4. निर्णय लेने का अन्तिम अधिकार वाइसराय का होगा।
5. जहाँ तक भविष्य का प्रश्न है, युद्ध की समाप्ति पर ब्रिटेन, भारत के मामले पर नए सिरे से विचार करेगा। परन्तु, युद्ध के बाद भारत की स्वतन्त्रता की कोई गारण्टी नहीं है।
6. युद्ध की समाप्ति के बाद यह सम्भावना है कि ब्रिटेन में नई सरकार बने जो कि भारतीय मामलों पर नए सिरे से सहानुभूतिपूर्वक विचार करे। परन्तु, इस विषय पर अभी से कोई प्रस्ताव नहीं रखा जा सकता।
7. निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि यदि कांग्रेस द्वारा क्रिप्स के प्रस्तावों स्वीकार कर लिया जाता है तो भारत के भविष्य के बारे में, युद्ध समाप्त होने के बाद भी, निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

कांग्रेस कार्य समिति में क्रिप्स प्रस्तावों पर लगातार चर्चाएं हो रहीं थी। गाँधीजी इन प्रस्तावों के पूरी तरह से विरोध में थे। जवाहरलाल नेहरू लोकतन्त्र के विषय को लेकर उसके स्वीकार करने के पक्ष में थे। मौलाना आजाद का मत था कि यदि युद्ध के बाद भारत की स्वतन्त्रता की गारण्टी दी जाय तो वे प्रस्ताव स्वीकार कर सकते हैं। युद्धकाल में वाइसराय की परिषद् वास्तविक शक्ति का प्रयोग कर सके और उसकी स्थिति कैबिनेट की तरह हो तथा वाइसराय केवल सांविधानिक प्रमुख की भूमिका निभाए।

साम्प्रदायिक समस्या के मुद्दे पर क्रिप्स ने कहा कि युद्ध के बाद प्रान्तों यह अधिकार होगा कि वे नए भारत संघ में शामिल हों अथवा नहीं। इस निर्णय पर गाँधीजी क्रिप्स से बहुत नाराज हुए और उन्होंने उनके प्रस्ताव

को पूरी तरह से टुकरा दिया। देशी रियासतों के राजाओं को भी भारत संघ में शामिल होने या न होने का विकल्प दिया गया था। यह स्थिति भी नए संघ के लिए समस्या खड़ी करने वाली थी। सर सिकन्दर हयात खान इसी समय क्रिप्स से मिले और साम्प्रदायिक समस्या पर चर्चाएं की। सिकन्दर हयात खान का मत, क्रिप्स के मत से मेल खाता था। उनका मानना था कि प्रान्तों के भारत संघ में शामिल होने या न होने का विषय किसी एक सम्प्रदाय का विषय नहीं है वरन् पूरे प्रान्त से जुड़ा विषय है। विलय का प्रश्न आने पर राज्य, भारत संघ में ही शामिल होना पसन्द करेंगे।

क्रिप्स के आग्रह पर जवाहरलाल नेहरू और मौलाना आजाद तत्कालीन कमाण्डर-इन-चीफ वेवेल से 04 अप्रैल, 1942 को मिले। वेवेल, नई भारतीय कार्यकारिणी परिषद् के अधिकारों के सवालों पर कोई स्पष्ट जवाब देने में असमर्थ थे। अपनी भारत यात्रा के दौरान क्रिप्स लगातार प्रधानमन्त्री चर्चिल के सम्पर्क में बने रहे और कम से कम तीन बार उनसे वार्ताएं की। वे 'युद्ध कैबिनेट' तथा वाइसराय से भी लगातार सलाह लेते रहे तथा भारतीय नेताओं के साथ हुई प्रगति की रिपोर्ट उन्हें देते रहे थे।

अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट के व्यक्तिगत प्रतिनिधि जॉनसन के सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद 10 अप्रैल, 1942 को वार्ता असफल हो गयी। कांग्रेस कार्य समिति ने सर्वसम्मति से क्रिप्स प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया और उसी दिन क्रिप्स को यह सूचना दे दी गयी। इन प्रस्तावों को अस्वीकार करने के तीन प्रमुख कारण थे। पहला, ब्रिटिश सरकार पर पूर्व के अनुभवों को देखते हुए आँखें बन्दकर विश्वास नहीं किया जा सकता था। दूसरा, विश्वयुद्ध में ब्रिटेन के हालात लगातार खराब हो रहे थे और यह विश्वास किया जा रहा था कि जर्मनी और जापान के सामने उसकी पराजय हो सकती है और युद्ध के बाद वह दयनीय स्थिति में पहुँच सकता है। लोगों की सामान्य मनोधरणा एक सारगर्भित कहावत के द्वारा स्पष्ट की जा रही थी, जिसे गलत तरीके से गाँधीजी के नाम के साथ जोड़ दिया गया, कि वह (क्रिप्स प्रस्ताव) एक डूबते हुए बैंक का उत्तरतिथीय चेक (Post-dated cheque on a crashing bank) था।<sup>17</sup> इन दोनों मनोवैज्ञानिक कारणों के अलावा एक तीसरा कारण यह था कि क्रिप्स प्रस्तावों में देश के विभाजन की पृष्ठभूमि पूरी तरह से तैयार कर दी गई थी जिसे मुस्लिम लीग के अलावा सभी दलों ने अस्वीकार कर दिया था। भारत के आगामी आभासी बँटवारे के अलावा जो विषय सबसे ज्यादा आपत्तिजनक था वह यह था कि देशी राज्यों के भाग्य का निर्णय वहाँ के शासक करेंगे न कि आम जनता।

हिन्दू महासभा ने घोषित किया कि भारत अविभाज्य और अखण्ड राष्ट्र है। इसलिए वह ऐसे किसी भी प्रस्ताव का पक्ष नहीं लेगी जिसमें किसी भी

रूप या स्वरूप में भारत के राजनीतिक बँटवारे की बात कही गई हो। लिबरल पार्टी ने भी विभाजन के मुद्दे पर क्रिप्स के प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। कांग्रेस कार्य समिति द्वारा क्रिप्स प्रस्तावों को अस्वीकार करने की घोषणा के साथ ही उसी दिन मुस्लिम लीग ने भी इस आधार पर प्रस्तावों को अस्वीकार किया कि इसमें पाकिस्तान के निर्माण की स्पष्ट घोषणा नहीं की गई है। भारत के दलित वर्ग, सिक्ख, एंग्लो-इण्डियन, भारतीय ईसाइयों तथा श्रमिक नेताओं द्वारा भी अपने-अपने परिरक्षण की माँग को अपर्याप्त मानते हुए क्रिप्स के प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया।

सबसे बड़ी समस्या धारा 5 के प्रस्तावों को लेकर थी जिसमें वाइसराय की कार्यकारिणी में भारतीय सदस्यों के दायित्वों और अधिकारों को लेकर थी। केन्द्रीय सरकार के गठन होने की स्थिति में उसके स्वरूप को लेकर कांग्रेस और क्रिप्स में मतभेद था। कांग्रेस इसे सभी शक्तियों से सम्पन्न कैबिनेट का दर्जा देना चाहती थी जिसे आरम्भ में क्रिप्स ने स्वीकार कर लिया था लेकिन बाद में वे अपनी बात से मुकर गए।

उस समय सामान्य धारणा यह थी कि क्रिप्स मिशन के असफल होने का एक बड़ा कारण चर्चिल का प्रतिक्रियावादी दृष्टिकोण था। यह धारणा अमेरिका के विदेश विभाग से प्राप्त एक गोपनीय दस्तावेज के प्रकाश में आने पर संपुष्ट हो गई है। जॉनसन के प्रयासों से भारत के रक्षा मन्त्री की स्थिति और कार्यों को लेकर कांग्रेस, क्रिप्स, वाइसराय, कमाण्डर-इन-चीफ, नेहरू और आजाद में समझौते को लेकर सर्वसम्मति बन गई थी। एक समझौते का सूत्र बनाया गया जिसके अनुसार कोई भारतीय प्रतिरक्षा विभाग का प्रभारी होता और ब्रिटिश सेनापति मैदानी कार्रवाइयों पर नियन्त्रण रखता तथा युद्ध विभाग का प्रमुख होता जिसके प्रकार्य सुनिश्चित होते। किन्तु तब तक वाइसराय लिनलिथगो और सेनापति वेवेल यह सोचकर चिन्तित हो उठे कि क्रिप्स, कांग्रेस को अधिक शक्तियाँ प्रदान कर रहे हैं और उन्होंने अन्तिम क्षण में चर्चिल के साथ मिलकर समझौते में बाधा डाल दी।<sup>8</sup> चर्चिल ने प्रस्तावों के मूल मसौदे से एक इंच भी हटने से इनकार कर दिया और कहा कि क्रिप्स को भेजे गए मूल प्रस्तावों में किसी तरह का संशोधन नहीं किया जा सकता।<sup>9</sup> जैसा कि बाद में जॉनसन ने कहा कि "लन्दन, कांग्रेस के द्वारा अस्वीकृति चाह रहा था।" जॉनसन ने लिखा कि 'न तो चर्चिल, न ही वाइसराय और न ही वेवेल चाहते थे कि क्रिप्स मिशन सफल हो। वास्तव में वे इसे असफल बनाने के लिए दृढ़-संकल्पित थे।

11 अप्रैल, 1942 को चर्चिल ने रूजवेल्ट को तार द्वारा यह सूचना दी कि क्रिप्स के प्रयास भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के द्वारा अस्वीकार कर दिए गए हैं और यह कि ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीयों का सहयोग पाने के लिए पूरा

प्रयास किया गया था। उसी दिन रूजवेल्ट ने चर्चिल को एक लम्बे सन्देश के माध्यम से बताया कि क्रिप्स का भारत से वापस आने का कार्यक्रम स्थगित कर दिया जाय और एक प्रयास पुनः किया जाय। क्योंकि मुझे नहीं लगता कि भारतीय नेता इस तरह का कोई प्रस्ताव अस्वीकार कर देंगे जिसमें उनकी अपनी सरकार की स्थापना के साथ ही युद्ध के बाद आजादी की बात कही गई हो। उन्होंने भारत में एक राष्ट्रीय सरकार के गठन की बात दोहराई। इसके जवाब में चर्चिल ने कहा कि क्रिप्स भारत छोड़ चुके हैं और उनका प्रयास असफल हो चुका है।

### निष्कर्ष

12 अप्रैल, 1942 को सर स्टेफर्ड क्रिप्स, भारत से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गए।<sup>10</sup> वे 21 दिनों तक भारत में रहे। उन्होंने कांग्रेस, मुस्लिम लीग और अन्य दलों के प्रतिनिधियों से वार्ता करने के साथ ही भारतीय रियासतों के राजाओं के संघ के प्रतिनिधियों से भी बातचीत की थी। क्रिप्स मिशन की असफलता से देश में निराशा और रोष की लहर पैदा हुई। क्रिप्स का इतनी शीघ्रता से भारत छोड़ना भी लोगों को कम समझ आ रहा था। भारतीयों का मानना था कि चर्चिल ने क्रिप्स को अमेरिका और चीन के दबाव में भारत भेजा था। उनका उद्देश्य भारत को किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता देना नहीं था। जैसा कि, चार वर्ष बाद, 12 दिसम्बर, 1946 को हाउस ऑफ कॉमंस में दिए गए अपने एक भाषण में उन्होंने कहा कि "हिज मैजिस्टी की सरकार सर स्टेफर्ड क्रिप्स को उनके अपने अनुसार सहायता देने के लिए तैयार नहीं है।"<sup>11</sup> चर्चिल को विश्व के अन्य देशों में यह सिद्ध करना था कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भारत के लोगों का सही प्रतिनिधित्व नहीं कर रही थी, और यह कि, भारतीयों में आपसी फूट के कारण उन्हें सत्ता का हस्तांतरण नहीं किया जा सकता। इस पूरे घटनाचक्र का परिणाम यह रहा कि गाँधीजी का अब अंग्रेजी सरकार से पूरी तरह से मोहभंग हो गया। जापानी खतरे को देखते हुए उन्होंने अंग्रेजों से तुरन्त भारत छोड़ने की अपील की और कहा कि भारत को उसके भाग्य पर छोड़ दिया जाय। यह प्रस्ताव न मानने पर शीघ्र ही एक बड़े जन-आन्दोलन की बात की गई। अन्ततः अगस्त 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन आरम्भ हो गया।

### संदर्भ

1. Azad, Maulana Abul Kalam : *India Wins Freedom*, Orient BlackSwan Private Limited, Himayatnagar, Hyderabad-500029, Telangana, India, First published 1988, Reprinted 2022, p. 42
2. Majumdar, R.C. (General Editor) : *The History and Culture of The Indian People, Volume XI 'Struggle for Freedom'*, Bhartiya Vidya Bhavan, Kulpati K.M. Munshi Marg, Mumbai-400007, p. 637

3. Majumdar, R.C. (General Editor) : *Ibid*, p. 638
4. Menon, V.P. *Integration of the Indian States*, Orient BlackSwan Private Limited, Himayatnagar, Hyderabad-500029, Telangana, India, First Published 2014, Reprinted 2023, p. 135
5. सरकार, सुमित : *आधुनिक भारत, 1885-1947*, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, पहला छात्र संस्करण-1993, आठवीं आवृत्ति : 2001, पृ० 406
6. Azad, Maulana Abul Kalam : *Ibid*, pp. 48-49
7. Majumdar, R.C. (General Editor) : *Ibid*, p. 639
8. सुमित सरकार : वही, पृ० 407
9. Majumdar, R.C. (General Editor) : वही, पृ० 639
10. Menon, V.P. *The Transfer of Power in India*, Orient BlackSwan Private Limited, Himayatnagar, Hyderabad-500029, Telangana, India, First Published 1957, Reprinted 2021, p. 135
11. Menon, V.P. *The Transfer of Power in India* : *Ibid*, p. 136

## भारत में लैंगिक न्याय का संवैधानिक और न्यायिक परिप्रेक्ष्य : एक अध्ययन

डॉ. मुकेश कुमार वर्मा \*

### सारांश

लैंगिक न्याय, एक मूलभूत पहलू है, जिसे भारतीय संविधान में समानता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रावधानों के माध्यम से स्थापित किया गया है। संविधान अनुच्छेद 14, 15 और 16 के तहत लैंगिक समानता की गारंटी देता है, साथ ही राज्य को राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के तहत सभी के लिए सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने का निर्देश भी देता है। यद्यपि, भारत में सच्चे लैंगिक न्याय को प्राप्त करना सांस्कृतिक मानदंडों और कार्यान्वयन अंतराल के कारण महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। भारतीय न्यायपालिका ने लैंगिक अधिकारों की रक्षा और संवर्द्धन के लिए संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करते हुए ऐतिहासिक निर्णयों और न्यायिक सक्रियता के माध्यम से लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य, शायरा बानो बनाम भारत संघ और नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ जैसे मामले लैंगिक-आधारित भेदभाव को संबोधित करने के लिए न्यायपालिका के सक्रिय दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते हैं। इन प्रगतियों के बावजूद, सामाजिक दृष्टिकोण और प्रवर्तन बाधाएँ प्रगति में बाधा डालती रहती हैं। यह शोध पत्र भारत में लैंगिक न्याय को बढ़ावा देने वाले संवैधानिक और न्यायिक पहलुओं की खोज करता है और लैंगिक समानता के संवैधानिक दृष्टिकोण को साकार करने में आने वाली चुनौतियों को केंद्रित कर उनके यथासंभव समाधानों पर प्रकाश डालता है।

**संकेताक्षर :** लैंगिक न्याय, भारतीय संविधान, न्यायिक सक्रियता, समानता, सांस्कृतिक बाधाएँ आदि।

लैंगिक न्याय सभी लिंगों के साथ निष्पक्ष और न्यायसंगत व्यवहार को संदर्भित करता है, जो अधिकारों, अवसरों और संसाधनों तक समान पहुँच सुनिश्चित करता है। भारतीय संदर्भ में, लैंगिक न्याय देश के सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने से गहराई से जुड़ा हुआ है, जहाँ ऐतिहासिक और प्रणालीगत असमानताएँ लंबे समय से लैंगिक संबंधों को प्रभावित करती रही हैं। कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज और असमान वेतन जैसी भेदभावपूर्ण प्रथाएँ महिलाओं और लैंगिक अल्पसंख्यकों की स्थिति को कमजोर करती रहती हैं। इसलिए, लैंगिक न्याय इन अन्यायों को ठीक करने और एक समतापूर्ण समाज प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जहाँ सभी व्यक्ति, लिंग की परवाह किए बिना,

\* सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान

अपनी पूरी क्षमता का एहसास कर सकें। लैंगिक न्याय की खोज न केवल एक सामाजिक दायित्व है, बल्कि भारत में एक संवैधानिक जनादेश भी है।

### संवैधानिक संरचना

देश के सर्वोच्च कानून के रूप में भारतीय संविधान समाज के सभी वर्गों में समानता और न्याय को बढ़ावा देने के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करता है। लैंगिक न्याय एक समावेशी और समतावादी भारत के संवैधानिक दृष्टिकोण का एक मूलभूत घटक है। संविधान के निर्माताओं ने महिलाओं और अन्य हाशिए पर पड़े लिंगों द्वारा सामना किए जाने वाले ऐतिहासिक नुकसानों को पहचाना और उनके कल्याण को बढ़ावा देने और उनके अधिकारों की रक्षा करने के लिए प्रावधानों को शामिल किया। संविधान समानता, गैर-भेदभाव और कानूनों के समान संरक्षण के सिद्धांतों को मुख्य मूल्यों के रूप में स्थापित करता है जो लैंगिक न्याय की दिशा में राष्ट्र की प्रगति का मार्गदर्शन करते हैं। अनुच्छेद 14, 15 और 16 जैसे प्रमुख संवैधानिक प्रावधान कानून के समक्ष समानता प्रदान करते हैं और लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकते हैं। इसके अतिरिक्त, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 39) राज्य द्वारा यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर जोर देते हैं कि पुरुषों और महिलाओं को विशेष रूप से आजीविका और वेतन के मामलों में समान अधिकार और अवसर प्राप्त हों। साथ में, ये प्रावधान लैंगिक न्याय को बढ़ावा देने और यह सुनिश्चित करने के लिए एक मजबूत कानूनी ढाँचा स्थापित करते हैं कि राज्य लैंगिक-आधारित भेदभाव और असमानता को खत्म करने की दिशा में सक्रिय रूप से काम करे।

### लैंगिक न्याय के लिए संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान एक व्यापक कानूनी ढाँचा तैयार करता है जो समानता और गैर-भेदभाव के सिद्धांतों को कायम रखता है। कई संवैधानिक प्रावधान सीधे लैंगिक न्याय को संबोधित करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि लिंग की परवाह किए बिना व्यक्तियों के अधिकार और अवसर संरक्षित और प्रोत्साहित किए जाते हैं। संविधान न केवल कानून के समक्ष समानता की गारंटी देता है, बल्कि राज्य पर लैंगिक-आधारित असमानताओं को समाप्त करने की दिशा में सक्रिय रूप से काम करने का कर्तव्य भी बोध करवाता है।

**अनुच्छेद 14 : समानता का अधिकार :** अनुच्छेद 14 भारतीय संविधान की आधारशिला है, जो सभी नागरिकों को "कानून के समक्ष समानता" और "कानूनों के समान संरक्षण" की गारंटी देता है। यह अनुच्छेद लैंगिक न्याय के लिए आधारशिला बनाता है क्योंकि यह अनिवार्य करता है कि राज्य भारत के क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानूनों के समान



संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। यह अनुच्छेद सुनिश्चित करता है कि लिंग की परवाह किए बिना सभी व्यक्तियों के साथ कानून की नज़र में समान व्यवहार किया जाता है और लिंग के आधार पर भेदभाव करने वाले किसी भी कानून को संवैधानिक उल्लंघन के आधार पर चुनौती दी जा सकती है। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 14)

**अनुच्छेद 15 : भेदभाव का निषेध :** अनुच्छेद 15 स्पष्ट रूप से लिंग सहित विभिन्न आधारों पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। अनुच्छेद का पहला खंड कहता है कि राज्य किसी भी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। यह प्रावधान लैंगिक न्याय के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं और अन्य लैंगिक अल्पसंख्यकों द्वारा सामना किए जाने वाले प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भेदभाव को संबोधित करता है। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 15(3) में यह प्रावधान है कि इस अनुच्छेद में कोई भी बात राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने से नहीं रोकेगा। यह राज्य को महिलाओं के उत्थान और सुरक्षा के उद्देश्य से सकारात्मक कार्रवाई और नीतियां शुरू करने में सक्षम बनाता है, जैसे शिक्षा और रोजगार में आरक्षण। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 15)

**अनुच्छेद 16 : सार्वजनिक रोजगार में अवसर की समानता :** अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार के मामलों में समानता के सिद्धांत को पुष्ट करता है। यह अनुच्छेद अनिवार्य करता है कि धर्म, जाति, जाति, लिंग, वंश, जन्म स्थान या निवास के आधार पर सार्वजनिक रोजगार में कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। यह राज्य को महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले ऐतिहासिक नुकसान को ठीक करने के लिए सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण के प्रावधान करने का अधिकार भी देता है। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 16)

**राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत : अनुच्छेद 39 :** राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत, हालांकि गैर-न्यायसंगत हैं, शासन में राज्य के लिए महत्वपूर्ण दिशानिर्देश प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 39, विशेष रूप से, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में लैंगिक न्याय पर जोर देता है। अनुच्छेद 39 के खंड (ए) में कहा गया है कि राज्य अपनी नीति को इस तरह निर्देशित करेगा कि पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधनों का अधिकार हो। खंड (डी) पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन का आदेश देता है। ये सिद्धांत रोजगार और आय वितरण में लैंगिक समानता के लिए संवैधानिक प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 39)

**अनुच्छेद 42 : काम की न्यायसंगत और मानवीय स्थितियों और मातृत्व राहत के लिए प्रावधान :** अनुच्छेद 42 राज्य को काम की न्यायसंगत और मानवीय स्थितियों को सुनिश्चित करने और मातृत्व राहत के लिए प्रावधान

करने का निर्देश देता है। यह प्रावधान कार्यबल में महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकताओं को स्वीकार करता है, विशेष रूप से प्रसव के संबंध में, और यह अनिवार्य करता है कि राज्य उचित कानूनों और नीतियों के माध्यम से समर्थन और सुरक्षा प्रदान करे। कार्यस्थल में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से मातृत्व लाभ और श्रम कानून इस अनुच्छेद में अपना संवैधानिक आधार पाते हैं। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 42)

**अनुच्छेद 243डी और 243टी : स्थानीय निकायों में आरक्षण :** संविधान (73वां और 74वां संशोधन) ने पंचायतों (अनुच्छेद 243डी) और नगरपालिकाओं (अनुच्छेद 243टी) में महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण के प्रावधान किए। ये संशोधन सुनिश्चित करते हैं कि स्थानीय निकायों में कुल सीटों में से कम से कम एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हों, जिसमें अध्यक्ष का पद भी शामिल है। यह प्रावधान जमीनी स्तर पर महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण और भागीदारी को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। (भारतीय संविधान अनुच्छेद 243डी, 243टी)

### लैंगिक न्याय एवं ऐतिहासिक निर्णय

भारतीय न्यायपालिका ने लैंगिक समानता की रक्षा और उसे बढ़ावा देने के लिए संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करके लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभिन्न ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से, सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने यह सुनिश्चित किया है कि संवैधानिक अधिकारों को बरकरार रखा जाए, विशेष रूप से उन मामलों में जहां लिंग आधारित भेदभाव या हिंसा मुद्दा था। इन निर्णयों ने न केवल कानूनी मिसाल कायम की है, बल्कि भारत में लैंगिक न्याय को बढ़ाने के उद्देश्य से नीतियों के विकास को भी प्रभावित किया है।

**विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) :** विशाखा निर्णय एक ऐतिहासिक निर्णय है, जो कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न को संबोधित करता है। इस मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को संबोधित करने के लिए विशिष्ट कानून की अनुपस्थिति को मान्यता दी और इस कानूनी शून्य को भरने के लिए दिशा-निर्देश निर्धारित किए। "विशाखा दिशा-निर्देश" के रूप में जाने जाने वाले इन दिशा-निर्देशों ने नियोक्ताओं को यौन उत्पीड़न के खिलाफ निवारक उपाय करने का निर्देश दिया और शिकायतों को संबोधित करने के लिए एक रूपरेखा स्थापित की। यह निर्णय कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 को आकार देने में महत्वपूर्ण था। (विशाखा बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 1997 एससी 3011 I)

**शायरा बानो बनाम भारत संघ (2017) :** शायरा बानो मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने तत्काल ट्रिपल तलाक (तलाक-ए-बिद्दत) की प्रथा को असंवैधानिक घोषित किया। याचिकाकर्ता, शायरा बानो ने इस प्रथा की वैधता को चुनौती दी, जो मुस्लिम पुरुषों को अपनी पत्नियों को तुरंत और एकतरफा तलाक देने की अनुमति देती है। न्यायालय ने माना कि ट्रिपल तलाक मनमाना है और संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 के तहत मुस्लिम महिलाओं के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है। इस ऐतिहासिक फैसले के कारण मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 लागू हुआ। (शायरा बानो बनाम भारत संघ, (2017) 9 एससीसी 1.)

**नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018) :** नवतेज सिंह जौहर निर्णय एक ऐतिहासिक फैसला था, जिसने भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को खत्म करके भारत में समलैंगिकता को अपराध से मुक्त कर दिया, जो सहमति से बनाए गए समलैंगिक संबंधों को अपराध मानता था। सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि धारा 377 अनुच्छेद 14, 15 और 21 के तहत समानता, गोपनीयता और सम्मान के संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन करती है। यह निर्णय भारत में स्ट्रटज्फ+ व्यक्तियों के अधिकारों को स्वीकार करते हुए लिंग और यौन अभिविन्यास न्याय सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। (नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, (2018) 10 एससीसी 1.)

**जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ (2018) :** इस मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 497 को खत्म कर दिया, जो व्यभिचार को अपराध मानती थी। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि यह कानून असंवैधानिक है क्योंकि यह संविधान में निहित समानता और सम्मान के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। फैसले में माना गया कि धारा 497 महिलाओं को उनके पतियों की संपत्ति मानती है और लैंगिक रूढ़ियों को मजबूत करती है। व्यभिचार को अपराध की श्रेणी से बाहर करके न्यायालय ने वैवाहिक संबंधों में व्यक्तिगत स्वायत्तता और समानता के महत्व पर जोर दिया। (जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ, (2018) 2 एससीसी 189।)

**राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (एनएएलएसए) बनाम भारत संघ (2014) :** एनएएलएसए मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को "तीसरे लिंग" के रूप में मान्यता दी और संविधान के तहत उनके मौलिक अधिकारों की पुष्टि की। न्यायालय ने सरकार को ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को कानूनी मान्यता प्रदान करने और उनके कल्याण के लिए सकारात्मक कार्रवाई नीतियों को लागू करने का निर्देश दिया। यह ऐतिहासिक फैसला ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों को आगे बढ़ाने, शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा तक उनकी पहुँच सुनिश्चित करने में सहायक था। (राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ, (2014) 5 एससीसी 438।)

**इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन बनाम केरल राज्य (2018) :** सबरीमाला मामले के रूप में लोकप्रिय इस फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने केरल के सबरीमाला मंदिर में मासिक धर्म की आयु (10-50 वर्ष) की महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध को हटा दिया। न्यायालय ने माना कि यह प्रतिबंध संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 25 और 26 के तहत महिलाओं के समानता और धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों का उल्लंघन करता है। इस फैसले ने इस बात पर जोर दिया कि पितृसत्ता और भेदभाव में निहित प्रथाओं को धर्म की आड़ में उचित नहीं ठहराया जा सकता। (इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन बनाम केरल राज्य, (2018) 11 एससीसी 1।)

ये ऐतिहासिक न्यायिक फैसले भारत में लैंगिक न्याय को आकार देने में न्यायपालिका की भूमिका को प्रदर्शित करते हैं। न्यायपालिका ने भेदभावपूर्ण प्रथाओं को चुनौती देने और समानता को बढ़ावा देने के लिए संवैधानिक प्रावधानों की सक्रिय रूप से व्याख्या की है। इनमें से प्रत्येक मामले ने लैंगिक न्याय की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जो भारत में लैंगिक समानता की विकसित होती समझ को दर्शाता है।

### लैंगिक न्याय एवं न्यायपालिका की भूमिका

न्यायपालिका, विशेष रूप से भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने लैंगिक अधिकारों को बनाए रखने के लिए संविधान और कानूनों की व्याख्या करके लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। न्यायिक सक्रियता के माध्यम से, न्यायालयों ने विधायी अंतराल को भरने, लिंग आधारित भेदभाव को संबोधित करने और यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाया है कि मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाए। भारतीय न्यायपालिका ने बार-बार लैंगिक पूर्वाग्रह को समाप्त करने और समानता को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर जोर दिया है, जिससे सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख अभिकरण के रूप में कार्य किया जा सके।

### न्यायिक सक्रियता एवं लैंगिक न्याय

न्यायिक सक्रियता से तात्पर्य न्यायपालिका द्वारा सार्वजनिक मुद्दों को संबोधित करने में ली गई सक्रिय भूमिका से है, विशेष रूप से जब व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका या तो चुप हों या अप्रभावी हों। लैंगिक न्याय के क्षेत्र में, न्यायिक सक्रियता महिलाओं और अन्य हाशिए पर पड़े लोगों के अधिकारों के दायरे का विस्तार करने में सहायक रही है, जो संविधान में निहित समानता की भावना को बनाए रखने के लिए कानूनों की शाब्दिक व्याख्या से परे है। सर्वोच्च न्यायालय ने विशिष्ट कानून की अनुपस्थिति में भी लैंगिक अधिकारों की रक्षा के लिए अक्सर संवैधानिक सिद्धांतों का आह्वान किया है। यह

महिलाओं के अधिकारों, LGBTQ+ अधिकारों और लैंगिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों से जुड़े मामलों में विशेष रूप से स्पष्ट है। न्यायिक सक्रियता ने न केवल प्रगतिशील निर्णयों को जन्म दिया है, बल्कि विधायिका को लैंगिक न्याय को बढ़ावा देने वाले कानून बनाने के लिए भी मजबूर किया है।

### महत्वपूर्ण मामले एवं लैंगिक न्याय

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) विशाखा मामले में, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए दिशा-निर्देश जारी करके सर्वोच्च न्यायालय ने विधायी भूमिका निभाई। यह निर्णय न्यायिक सक्रियता का उदाहरण है, क्योंकि कार्यस्थल पर उत्पीड़न को संबोधित करने वाले किसी विशिष्ट कानून की अनुपस्थिति में न्यायालय ने महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए कदम उठाया। कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 के अधिनियमित होने तक विशाखा दिशा-निर्देश लागू रहे, जो लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में न्यायपालिका के सक्रिय रुख को दर्शाता है। (विशाखा बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 1997 एससी 3011) शायरा बानो बनाम भारत संघ (2017) शायरा बानो मामले में सुप्रीम कोर्ट का फैसला पर्सनल लॉ के मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप का एक ऐतिहासिक उदाहरण है। तत्काल ट्रिपल तलाक की प्रथा को असंवैधानिक घोषित करके, न्यायालय ने मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की और लैंगिक समानता और न्याय के सिद्धांतों की पुष्टि की। यह फैसला महिलाओं के खिलाफ भेदभाव करने वाले पर्सनल लॉ को सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। (शायरा बानो बनाम भारत संघ, (2017) 9 एससीसी 1) लक्ष्मी बनाम भारत संघ (2014) महिलाओं के खिलाफ एसिड हमलों की बढ़ती घटनाओं के जवाब में, सुप्रीम कोर्ट ने लक्ष्मी मामले में निर्देश जारी किए। (लक्ष्मी बनाम भारत संघ, (2014) 4 एससीसी 427।) वी. रेवती बनाम भारत संघ (1988) इस मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड संहिता की धारा 497 की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा, जो व्यभिचार को अपराध मानती है। हालांकि, बाद के एक फैसले (जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ, 2018) में, कोर्ट ने अपना रुख पलटते हुए व्यभिचार को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया और इसे सहमति देने वाले वयस्कों के बीच एक निजी मामला माना। इस बदलाव ने लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने और पितृसत्तात्मक मानदंडों को खत्म करने में न्यायपालिका के विकसित होते नजरिए को प्रदर्शित किया। (जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ, (2018) 2 एससीसी 189।) महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर नारायण मर्दिकर (1991) इस मामले में एक पुलिस अधिकारी शामिल था जिसने एक महिला का यौन उत्पीड़न किया था और उसके चरित्र पर सवाल उठाकर अपने कृत्य को उचित ठहराने का प्रयास किया था। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि महिला की जीवनशैली या पिछले आचरण से इतर, उसे निजता का अधिकार है और

उसके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए। इस फैसले ने संविधान के तहत महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा की पुष्टि की। (महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर नारायण मर्दिकर, एआईआर 1991 एससी 207।) गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक (1999) इस मामले ने हिंदू अल्पसंख्यक और संरक्षकता अधिनियम, 1956 के कुछ प्रावधानों की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी, जिसमें माना गया था कि पिता एक नाबालिग बच्चे का प्राकृतिक अभिभावक है। सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि माता-पिता दोनों प्राकृतिक अभिभावक हैं, जो माता-पिता के अधिकारों में लैंगिक समानता पर जोर देता है। इस फैसले ने आगे स्थापित किया कि व्यक्तिगत कानून समानता की संवैधानिक गारंटी को खत्म नहीं कर सकते। (गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक, (1999) 2 एससीसी 228।)

उपर्युक्त मामले दर्शाते हैं कि न्यायिक सक्रियता ने भारत में लैंगिक अधिकारों को बनाए रखने में कैसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संविधान की व्यापक व्याख्या करने और लैंगिक भेदभाव को संबोधित करने की न्यायपालिका की इच्छा लैंगिक न्याय को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण रही है। सक्रिय उपाय करके, न्यायालयों ने न केवल व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा की है, बल्कि व्यापक सामाजिक और विधायी परिवर्तन भी किए हैं।

### लैंगिक न्याय एवं चुनौतियाँ

हालाँकि भारत ने संवैधानिक प्रावधानों और न्यायिक हस्तक्षेपों के माध्यम से लैंगिक न्याय की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की है, फिर भी ऐसी कई चुनौतियाँ हैं जो वास्तविक लैंगिक समानता की प्राप्ति में बाधा डालती हैं। ये चुनौतियाँ गहरी सांस्कृतिक और सामाजिक मानदंडों के साथ-साथ लैंगिक न्याय से संबंधित कानूनों के कार्यान्वयन में अंतराल में निहित हैं। इन बाधाओं को संबोधित करना यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है कि लैंगिक न्याय के लिए कानूनी ढाँचा महिलाओं और लैंगिक अल्पसंख्यकों के जीवन में ठोस सुधार में तब्दील हो।

**सांस्कृतिक और सामाजिक बाधाएँ :** भारत में सांस्कृतिक और सामाजिक मानदंडों ने लंबे समय से लैंगिक संबंधों को प्रभावित किया है, जो अक्सर असमानता और भेदभाव को बढ़ावा देते हैं। समाज के विभिन्न पहलुओं में व्याप्त पितृसत्ता, लिंग के आधार पर व्यक्तियों को सौंपी गई भूमिकाओं और जिम्मेदारियों को निर्धारित करना जारी रखती है। इसका लैंगिक न्याय पर गहरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि ये मानदंड लैंगिक भूमिकाओं, संसाधनों तक पहुँच और अधिकारों के प्रयोग की धारणाओं को आकार देते हैं।

**लैंगिक भूमिकाएँ और रूढ़ियाँ** : पारंपरिक लैंगिक भूमिकाएँ, जो पुरुषों को कमाने वाला और महिलाओं को देखभाल करने वाला बताती हैं, भारतीय समाज पर हावी हैं। ये रूढ़ियाँ सार्वजनिक जीवन और आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी को सीमित करती हैं, जिससे उनकी अधीनता मजबूत होती है। उदाहरण के लिए, समान रोजगार के अवसरों की कानूनी गारंटी के बावजूद, कई महिलाओं को घरेलू कर्तव्यों को पूरा करने की सामाजिक अपेक्षाओं के कारण कार्यस्थल पर बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

**महिलाओं के खिलाफ हिंसा** : दहेज, बाल विवाह और ऑनर किलिंग जैसी सांस्कृतिक प्रथाएँ महिलाओं के खिलाफ हिंसा को बढ़ावा देती हैं और उनकी अधीनस्थ स्थिति को मजबूत करती हैं। कानूनी प्रतिबंधों के बावजूद, ये प्रथाएँ अक्सर सामाजिक स्वीकृति और कानून के अपर्याप्त प्रवर्तन के कारण बनी रहती हैं। लैंगिक आधारित हिंसा लैंगिक न्याय प्राप्त करने में एक बड़ी बाधा बनी हुई है, क्योंकि यह महिलाओं की स्वायत्तता और गरिमा को कमजोर करती है।

**LGBTQ+ अधिकार और सामाजिक कलंक** : नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018) के फैसले में समलैंगिकता को अपराध से मुक्त करने के बावजूद, भारत में LGBTQ+ समुदाय को भेदभाव और कलंक का सामना करना पड़ रहा है। गैर-विषमलैंगिक पहचानों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण काफी हद तक नकारात्मक बना हुआ है, जो लैंगिक अल्पसंख्यकों के लिए अधिकारों और अवसरों तक पहुँच को सीमित करता है। सामाजिक बहिष्कार, रोजगार में भेदभाव और LGBTQ+ व्यक्तियों के खिलाफ हिंसा आम बात है, जो लैंगिक न्याय के लिए लगातार सांस्कृतिक बाधाओं को दर्शाती है। (जर्नल ऑफ सोशल रिसर्च, 2020)

**कार्यान्वयन अंतराल** : भले ही भारत में लैंगिक न्याय के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा है, लेकिन लैंगिक न्याय से संबंधित कानूनों के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण अंतराल हैं। ये अंतराल अपर्याप्त संसाधनों, राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और सत्ता संरचनाओं में बदलाव के प्रति प्रतिरोध के संयोजन के कारण उत्पन्न होते हैं। कानूनी प्रावधानों और उनके प्रवर्तन के बीच का अंतर व्यवहार में लैंगिक न्याय प्राप्त करने के लिए एक बड़ी चुनौती है।

**अपर्याप्त प्रवर्तन तंत्र** : घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न और बाल विवाह से संबंधित कई लैंगिक न्याय संबंधी कानून, खराब प्रवर्तन से ग्रस्त हैं। उदाहरण के लिए, घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005, हालांकि अपने प्रावधानों में व्यापक है, लेकिन कानून प्रवर्तन कर्मियों के अपर्याप्त प्रशिक्षण, महिलाओं में जागरूकता की कमी और सहायता सेवाएँ प्रदान करने के लिए अपर्याप्त बुनियादी ढाँचे के कारण कार्यान्वयन में चुनौतियों का सामना करता है।

**भ्रष्टाचार और नौकरशाही की अक्षमताएँ :** कानून प्रवर्तन एजेंसियों के भीतर भ्रष्टाचार और नौकरशाही की अक्षमताएँ खराब कार्यान्वयन की समस्या को और बढ़ा देती हैं। महिलाओं और लैंगिक अल्पसंख्यकों को अक्सर न्याय पाने में देरी का सामना करना पड़ता है और कुछ मामलों में, उनकी शिकायतों को अधिकारियों द्वारा गंभीरता से नहीं लिया जाता है। यह कई लोगों को लैंगिक आधारित अपराधों की रिपोर्ट करने से हतोत्साहित करता है, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें बचाने के उद्देश्य से बनाए गए कानूनों का कम प्रवर्तन होता है।

**जागरूकता और शिक्षा :** आम जनता में लैंगिक न्याय से जुड़े कानूनों के बारे में जागरूकता की कमी एक गंभीर चुनौती बनी हुई है। कई महिलाएँ अपने कानूनी अधिकारों से अनजान हैं या सामाजिक-आर्थिक बाधाओं के कारण कानूनी संसाधनों तक पहुँचने में असमर्थ हैं। कानूनी साक्षरता कार्यक्रम, जो इस अंतर को पाटने के लिए आवश्यक हैं, अक्सर अपर्याप्त होते हैं या जमीनी स्तर पर प्रभावी ढंग से लागू नहीं होते हैं।

**न्यायिक देरी :** भारतीय न्यायिक प्रणाली पर मामलों का एक बड़ा बोझ है, जिससे लैंगिक न्याय से जुड़े विवादों के समाधान में काफी देरी होती है। यह देरी न केवल पीड़ितों की पीड़ा को बढ़ाती है बल्कि कानून के निवारक प्रभाव को भी कमजोर करती है। उदाहरण के लिए, यौन उत्पीड़न और घरेलू हिंसा के मामलों को सुलझाने में अक्सर सालों लग जाते हैं, जिससे कई लोग कानूनी सहारा लेने से हतोत्साहित होते हैं। (इंडियन लॉ रिव्यू, 2021)

इन सांस्कृतिक और सामाजिक बाधाओं को दूर करना, साथ ही कार्यान्वयन में अंतराल को पाटना, भारत में लैंगिक न्याय की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण है। जबकि कानूनी ढांचा लागू है, सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने, प्रवर्तन तंत्र को मजबूत करने और लिंग-न्याय से संबंधित कानूनों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए ठोस प्रयासों की तत्काल आवश्यकता है। ये कदम लैंगिक न्याय की संवैधानिक गारंटी को सभी लिंगों के लिए जीवित वास्तविकताओं में बदलने के लिए आवश्यक हैं।

**भारत में लैंगिक न्याय को मजबूत करने के लिए, निम्नलिखित उपायों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए :**

**कानूनों के कार्यान्वयन को बढ़ाना :** लैंगिक न्याय से संबंधित कानूनों के कार्यान्वयन में मौजूदा अंतराल को दूर करना महत्वपूर्ण है। लैंगिक संवेदनशीलता पर केंद्रित प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से कानून प्रवर्तन एजेंसियों को मजबूत करना, सहायता सेवाओं (जैसे आश्रय और हेल्पलाइन) के लिए बुनियादी ढाँचे में सुधार करना, और न्यायिक और पुलिस प्रणालियों के



भीतर जवाबदेही तंत्र को बढ़ाना कानूनों के बेहतर प्रवर्तन को सुनिश्चित कर सकता है।

**कानूनी साक्षरता और जागरूकता कार्यक्रम :** महिलाओं और हाशिए पर पड़े लिंगों के बीच लिंग-न्याय से संबंधित कानूनों के बारे में जागरूकता बढ़ाना व्यक्तियों को उनके अधिकारों का दावा करने के लिए सशक्त बनाने के लिए आवश्यक है। कानूनी साक्षरता कार्यक्रम, विशेष रूप से ग्रामीण और वंचित क्षेत्रों में, लोगों को उनकी कानूनी सुरक्षा के बारे में शिक्षित कर सकते हैं और उन्हें निवारण की तलाश करने के लिए संसाधन प्रदान कर सकते हैं। सरकारी निकायों, नागरिक समाज संगठनों और शैक्षणिक संस्थानों के बीच सहयोग इन जागरूकता अभियानों को प्रभावी ढंग से चलाने में मदद कर सकता है।

**सामाजिक सुधार और वकालत :** लैंगिक न्याय के लिए सांस्कृतिक और सामाजिक बाधाओं को दूर करने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जिसमें शैक्षिक सुधार, मीडिया वकालत और सामुदायिक जुड़ाव शामिल हैं। स्कूल के पाठ्यक्रमों में लैंगिक समानता को बढ़ावा देना, मीडिया में हानिकारक लैंगिक रूढ़ियों को चुनौती देना और लैंगिक मुद्दों के बारे में सामुदायिक संवाद को बढ़ावा देना सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने में मदद कर सकता है। इसके अतिरिक्त, जमीनी स्तर की वकालत और महिला आंदोलनों को लिंग-संवेदनशील नीतियों के लिए दबाव बनाना जारी रखना चाहिए और लैंगिक अधिकारों की रक्षा के लिए संस्थानों को जवाबदेह बनाना चाहिए।

**न्यायिक पहुंच का विस्तार :** न्यायपालिका को लैंगिक न्याय को बनाए रखने में अपनी सक्रिय भूमिका जारी रखनी चाहिए। लैंगिक-संबंधित मामलों के लिए विशेष फास्ट-ट्रैक अदालतों की स्थापना, मामलों का समय पर समाधान सुनिश्चित करने और कानूनी कार्यवाही में पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण अपनाने के माध्यम से न्यायिक पहुंच का विस्तार न्यायिक हस्तक्षेपों के प्रभाव को मजबूत कर सकता है। न्यायपालिका को उभरते लैंगिक अधिकारों की रक्षा के लिए संवैधानिक प्रावधानों की व्यापक व्याख्या करने में भी सतर्क रहना चाहिए, विशेष रूप से LGBTQ+ अधिकारों के विकसित संदर्भ में।

इन उपायों के माध्यम से, भारत अपने सभी नागरिकों के लिए लैंगिक न्याय के संवैधानिक दृष्टिकोण को साकार करने के करीब पहुंच सकता है। संरचनात्मक चुनौतियों का समाधान करना, कानूनों के प्रवर्तन को बढ़ाना और सामाजिक मानदंडों को अधिक लैंगिक समानता की ओर ले जाना यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है कि संविधान के वादे सभी लिंगों के लिए एक जीवंत वास्तविकता बन जाएं।

### निष्कर्ष

भारत में लैंगिक न्याय की यात्रा समानता, गैर-भेदभाव और मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की संवैधानिक गारंटी में गहराई से निहित है। भारतीय संविधान, अपने विभिन्न प्रावधानों जैसे अनुच्छेद 14, 15, 16 और 39 के माध्यम से एक मजबूत कानूनी ढांचा स्थापित करता है जिसका उद्देश्य लैंगिक समानता को बढ़ावा देना और व्यक्तियों को लिंग के आधार पर भेदभाव से बचाना है। न्यायपालिका ने विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997), शायरा बानो बनाम भारत संघ (2017), और नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018) जैसे ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से इन संवैधानिक गारंटियों की व्याख्या और विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। न्यायिक सक्रियता में संलग्न होकर, न्यायालयों ने न केवल लैंगिक अधिकारों की रक्षा की है, बल्कि लैंगिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप विधायी सुधारों को भी बाध्य किया है। इन प्रगतियों के बावजूद, वास्तविक लैंगिक न्याय को साकार करने में महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं। पितृसत्तात्मक मानदंडों में गहराई से निहित सांस्कृतिक और सामाजिक बाधाएँ लैंगिक समानता की दिशा में प्रगति को सीमित करती रहती हैं। इसके अतिरिक्त, लैंगिक न्याय से संबंधित कानूनों के कार्यान्वयन में अंतराल महिलाओं और लैंगिक अल्पसंख्यकों के लिए अधिकारों की प्रभावी सुरक्षा और न्याय तक पहुँच में बाधा डालते हैं। जबकि कानूनी ढाँचा अच्छी तरह से स्थापित है, लैंगिक न्याय प्राप्त करने के मार्ग को प्रवर्तन, सामाजिक परिवर्तन और जागरूकता में निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है।

### संदर्भ

1. चैलेंजेज इन इम्प्लीमेंटिंग जेंडर जस्टिस लॉज इन इंडिया, इंडियन लॉ रिव्यू, वॉल्यूम 8, न. 2, 2021, पृ० 125-140
2. स्ट्रेंथेनिंग जेंडर जस्टिस इन इंडिया: लीगल फ्रेमवर्क एंड इम्प्लीमेंटेशन स्ट्रेटेजीज, जेंडर एंड लॉ रिव्यू, वॉल्यूम 15, न. 3, 2022, पृ० 89-105
3. जेंडर इक्वलिटी एंड कल्चरल नॉर्म्स : एन एनालिसिस ऑफ़ दी इंडियन कॉन्टेक्स्ट, जर्नल ऑफ़ सोशल रिसर्च, वॉल्यूम 12, न. 4, 2020, पृ० 45-60
4. भारत का संविधान। भारत सरकार, 1950
5. <https://legislative.gov.in/constitution-of-india>
6. विशाखा बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर 1997 एससी 3011
7. शायरा बानो बनाम भारत संघ, (2017) 9 एससीसी 1
8. नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, (2018) 10 एससीसी 1

9. जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ, (2018) 2 एससीसी 189।
10. राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ, (2014) 5 एससीसी 438
11. इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन बनाम केरल राज्य, (2018) 11 एससीसी 1
12. लक्ष्मी बनाम भारत संघ, (2014) 4 एससीसी 427
13. गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक, (1999) 2 एससीसी 228
14. महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर नारायण मर्दिकर, एआईआर 1991 एससी 207.

## स्वामी विवेकानन्द के स्त्री सम्बन्धी विचार

डॉ० आनन्द कुमार पाण्डेय \*

प्रो०(डॉ०) रजनीकांत पाण्डेय \*\*

स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारतीय कालखण्ड में धर्म, समाज और संस्कृति को समग्रता से प्रभावित करने वाले सन्यासी पुरुष हैं। वे भारतीय पुनर्जागरण के प्रतीक पुरुष हैं जिन्होंने अपने विचार और व्यवहार से जहाँ एक ओर भारतीयों के भीतर परम्परा को लेकर आत्मविश्वास पैदा किया वही दूसरी ओर परम्परा के रूढ़, प्रतिक्रियावादी और अनुत्पादक अंशों को छोड़कर आधुनिकता के उन हिस्सों को अपनाने की वकालत की जो समाज, संस्कृति और मानस को जीवन्त बनाते हैं। भारतीय इतिहास में ऐसे उदाहरण दुर्लभ हैं जहाँ किसी व्यक्तित्व ने स्वयं की आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ समाज के बहुआयामी भौतिक विकास और लोगों के मानसिक स्थिति को मजबूत बनाने की दिशा में एक साथ काम किया हो। स्वामी विवेकानन्द सम्पूर्ण भारतीय चरित्र को प्रतिबिम्बित करते हैं। वे पारलौकिक सत्ता के प्रति समर्पण को समाज और उसकी समस्याओं से अलग-थलग रखने की गतिविधि नहीं मानते। उनके विचार और दर्शन में दोनों एक सूत्र में गुथे हैं। भारतीय समाज को वह एक समाजशास्त्री की भाँति देखते हैं जिसमें यथार्थ का तटस्थ आकलन और उसकी समस्याओं के समाधान को लेकर भूल्यात्मक किन्तु तटस्थ दृष्टिकोण भी है। सकारात्मक दृष्टि उनकी शक्ति थी। उन्होंने हर किस्म की सकारात्मकता को स्वीकार किया देश और काल से उपर उठकर सम्पूर्ण मानव जाति की अच्छाई को उन्होंने सबके लिए उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा। पश्चिम उनके लिए घृणा का विषय नहीं था बल्कि पूरब और पश्चिम की सभ्यता के बीच उन्होंने मानवीय संवेदना को दो उपलब्धियों के रूप में देखते हैं। मानवीय समाज की इन दो प्रतिरूपों की सकारात्मकता को स्वामी विवेकानन्द के विचार और चिन्तन में प्रतिबिम्बित होती है। समाज के वंचित तबकों को लेकर स्वामी विवेकानन्द विशेष रूप से संवेदनशील हैं। यह उनके चिन्तन का अनिवार्य हिस्सा है। स्त्रियाँ इसी वंचित तबके का हिस्सा हैं। भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति विशिष्ट है। उनकी यह विशिष्टता पश्चिम ही नहीं अन्य एशियाई समाजों की तुलना में भी है। इस विशिष्टता के विषय में स्वामी विवेकानन्द के मौलिक विचार हैं। यह विचार न केवल विश्लेषण में मौलिक है बल्कि समस्याओं के समाधान में भी यथार्थपरक, गम्भीर आलोचनात्मक और मानवीय है।

\* असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय महाविद्यालय, बस्ती (उ.प्र.)

\*\* राजनीति विज्ञान विभाग, दी०द०उ० गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

### प्राचीन हिन्दू धार्मिक ग्रंथों में नारी चित्रण

भारत में हिन्दू बहुसंख्यक है और यह धर्म विश्व के प्राचीनतम धर्मों में एक है। हिन्दूओं के पास दार्शनिक गम्भीरता और गठन चिन्तन के साथ बहुत से धार्मिक ग्रंथ हैं। इसमें सर्वाधिक प्रतिष्ठित धार्मिक ग्रंथों में मनुस्मृति है। मनुस्मृति की विशिष्टता इसमें तथ्य में निहित वह एक साथ धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक ग्रंथ है। विधिशास्त्र की यह उत्कृष्ट रचना हिन्दू जनमानस को गहराई से प्रभावित करती है। इसकी रचना—काल ईसा से पूर्व की मानी जाती है किन्तु इसका प्रभाव आज भी है। हिन्दू समाज किसी भी पक्ष में मनुस्मृति को छोड़कर प्रामाणित चर्चा नहीं की जा सकती है। मनुस्मृति में महिलाओं के विषय में पर्याप्त और गम्भीर चर्चा की गई है। यह महिलाओं के विषय में हिन्दू शास्त्रीय दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व भी करता है। मनुस्मृति में स्त्रियों को सामाजिक संरचना के अनिवार्य अंग के रूप में महत्व प्रदान किया गया है। परिवार के अनिवार्य अंग के रूप में उसकी स्थिति, अधिकार और कर्तव्य का विस्तार से वर्णन किया गया है। मनुस्मृति में महिलाओं का केन्द्रित चित्रण मिश्रित रूप में है। जहाँ एक ओर उसे परिवार का आधार, सभी प्रकार की भूमिकाओं में अनिवार्य तथा पुरुष की सहधर्मिणी माना गया है वहीं दूसरी ओर उसे पुरुष के नियन्त्रण और निर्देशन में जीवन व्यतीत करने का विचार भी व्यक्त किया गया है। मनुस्मृति के प्रथम अध्याय के बतिसवें श्लोक में स्त्री को सृष्टि की रचना में बराबर की भूमिका रखने वाला माना गया है।

द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमर्धेन पुरुषोऽभवत् ।  
अर्धेन नारी तस्यै च विराज मसृजत्प्रभुः ॥

(वे ब्रह्मा अपने अपने शरीर के दो भाग करके आधे भाग से पुरुष तथा आधे भाग से स्त्री हो गये, और उसी स्त्री में 'विराट' संज्ञक पुरुष की सृष्टि की। वही उन्होंने मनुस्मृति के नौवें अध्याय के चौथे श्लोक में नारी को आजीवन किसी पुरुष के अधीन रहने का विचार व्यक्त किया है।

कालेऽदाता पिता वाच्यो वाच्यश्रानुपयन्यतिः ।  
मृते भर्तरि पुत्रस्तु वाच्यो मातुररक्षिता ॥

(अर्थात् स्त्री की रक्षा बचपन में पिता करता है, युवास्था में पति करता है और वृद्धावस्था में पुत्र करते हैं स्त्री स्वतंत्र रहने के योग्य नहीं है।)

हिन्दूओं के एक अन्य प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में भी स्त्रियों के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये हैं जिससे हिन्दू जनमानस के विचार प्रभावित दिखता है।

स्वयं वैदिक काल में बहुत से स्त्री मनीषियाँ थी जिन्होंने वैदिक ऋचाओं की रचना की। यह दर्शाता है कि प्राचीन भारत में महिलाओं को अपना विकास करने की पर्याप्त स्थिति उपलब्ध थी। हाँलाकि उनकी संख्या कम है किन्तु उनकी उपस्थिति महत्वपूर्ण मानी जानी चाहिए।

ऋग्वेद (3/43/4) में कहा गया है जायेदस्तम् (पत्नी ही घर है) ऋग्वेद में ही स्त्री को अषाढा (अजेय) सयाना (विजयिनी) सहस्त्रवीर्या (प्रबल पराक्रमी) अस्पत्ना तथा सपत्नहनी (शत्रुनासिका) जयन्ती (विजेत्री) इत्यादि कहा है। ऋग्वेद एवं अर्थ वेद में स्त्री सेना का वर्णन है।<sup>1</sup>

महाभारत के उमामहेश्वर संवाद में अध्याय 146 में भगवान शिव उमा से कहते हैं... आत्मा में ना तो स्त्रीत्व है न पुरुषत्व कर्म प्रकार से जाति प्रकार बनता है। पौरुष कर्म वाली स्त्री अगले जन्म में पुरुष बनती है। स्त्री भाव पुरुष अगले जन्म में प्रमदा बनता है।<sup>2</sup> इस प्रकार सैद्धांतिक स्तर पर स्त्री पुरुष के भेद को लगभग सभी धर्मग्रंथों में अस्वीकारा गया है। प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। हाँलाकि यह सत्य कि पितृसत्तात्मक समाज में पुरुष समाज में सभी भूमिकाओं में प्रथम था किन्तु स्त्रियों की दशा ही नहीं थी वह सामाजिक और धार्मिक कार्यों में पुरुष के बराबर महत्व रखती थी। बाद के दिनों में विशेषकर राजनीतिक शक्ति पर विदेशी आक्रमणकारियों के अधिकार के बाद स्थिति बदतर हुई।

### स्त्रियों के संबंध में विचार

भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में स्त्रियों से पृथक किया उन्हें बाहर करके किया गया कोई भी चिंतन और व्यवहार मानवीय समाज और उसकी जटिलता के विषय में कोई यथार्थवादी विचार उपलब्ध नहीं करा सकता। स्वामी विवेकानंद ने भारत की स्त्रियों की स्थिति पर विचार व्यक्त किये हैं। उनके यह विचार लिखो वार्तालापों को तथा अन्य व्यक्तियों के साथ पत्राचार में प्रकट होते हैं। इन विचारों में गंभीरता, सांतत्य और तर्कपूर्ण निष्कर्ष हैं। पूर्वाग्रहों, रुढ़िवादिता और संकीर्णता से मुक्त उनके विचार स्त्री की समस्या को समझने तथा उसके समाधान के लिए महत्वपूर्ण दृष्टिकोण उपलब्ध कराते हैं।

स्वामी विवेकानंद भारतीय नारी की उदान्त चित्रण करते हैं विदेश में 'भारतीय नारी—प्राचीन, मध्यकालीन और वर्तमान' विषय पर भाषण देते हुए उन्होंने कहा है कि 'भारत में नारी ईश्वर की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है और उसका सम्पूर्ण जीवन इस विचार से ओत-प्रोत है कि वह माँ है और पूर्ण माँ बनने के लिए उसे पतिव्रता रहना आवश्यक है उन्होंने कहा है कि भारत में किसी भी माँ ने अपने बच्चे का परित्याग नहीं किया और किसी को भी विपरीत सिद्ध करने की चुनौती दी।'<sup>3</sup>

इस प्रकार स्वामी विवेकानंद भारतीय नारी को उच्च आदर्शात्मक स्थान प्रदान करते हैं। यह नैतिक मूल्यांकन उन्हें गुणात्मक श्रेणी प्रदान करता है। भारतीय नारियों की स्थिति का समर्थन स्वामी विवेकानंद संशयहीन होकर प्रत्येक स्थिति में करते हैं।

यूनिटेरियन चर्चा में दिए अपने दूसरे भाषण में स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि धार्मिक ग्रंथों में स्त्रियों को बहुत आदर के दृष्टिकोण से देखा गया है। प्राचीन भारत में स्त्रियों को ऋषि-मनीषी से होने का अधिकार प्राप्त था उसमें उचित स्तर की आध्यात्मिकता होती थी हिन्दू माँ भाव की पूजा करते हैं और सन्यासियों को भी अपने मां के सामने अपने मस्तक से पृथ्वी का स्पर्श करना पड़ता है। पातिवृत्य का बहुत सम्मान होता था।<sup>4</sup>

स्वामी विवेकानंद को स्त्री सम्बन्धी विचार हिन्दू धर्मग्रन्थों और प्राचीन हिन्दू परम्परा के आधार पर निर्मित हुए हैं जिन्हें लेकर स्वामी जी के मन में प्रशंसा भाव है यह प्रशंसा स्त्री के आदर्शों के प्रति समर्पण जीवन में भौतिक आकर्षणों को कमतर मानने की भारतीय परम्परा का निर्वहन करने तथा त्याग को अपना अनिवार्य गुण बना लेने के कारण है। इसमें स्वामी विवेकानंद गौरवान्वित होते हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दू को मातृत्व के सिद्धांत की उपासना करने की शिक्षा दी जाती है। माता पत्नी से बढ़कर होती है। मां पवित्र होती है।<sup>5</sup> यह भाव को वे समाज और देश के यथार्थ से भी जोड़ते हैं जो स्वामी विवेकानंद के विचारों की विशेषता है। उन्होंने एक जगह लिखा कि तुम्हारे देश का उद्धार उसकी स्त्रियों के ऊपर निर्भर करता है। स्वामी विवेकानंद स्त्री में नैतिक गुणों के उच्च स्तर और उसके आचरण को पवित्र मानते हैं। उसकी यह पवित्रता आदर्शात्मक अवस्था नहीं है बल्कि वह सामान्य भारतीय नारी को इसी रूप में चित्रित करते हैं उनके चिन्तन में न केवल नारी आदर्शों को जीती हुई प्राणी है बल्कि उसके प्रति शेष समाज का व्यवहार भी संतुलित, संयमित और आदरपूर्ण है। उन्होंने स्त्री और स्वाधीनता को एक दूसरे का अनिवार्य माना है। यह न केवल स्वयं में स्वतंत्रता के साथ पूर्ण होती है बल्कि या विवाह के 'पवित्र कर्म' को संपन्न करके पुरुष की अपूर्णता या अधूरेपन को दूर करती है। विवेकानंद अपने लिखित साहित्य एवं संभाषणों में भारतीय स्त्री के उदार, नैतिक गुणयुक्त जीवन और व्यवहार की बारद्वार चर्चा करते हैं 'हिंदू स्त्रियाँ बहुत ही अध्यात्मिक और धार्मिक होती हैं। कदाचित संसार की सभी महिलाओं से अधिक यदि हम उनकी सुंदर विशेषताओं की रक्षा कर सकें और साथ ही उनका बौद्धिक विकास भी कर सकें तो भविष्य की हिंदू नारी संसार की आदर्श नारी होगी।'<sup>6</sup> स्पष्ट है कि वे भारतीय स्त्रियों का आदर्शवादी चित्रण करते हैं। ऐसा चित्रण करते हुए वे नारियों की व्यावहारिक स्थिति से अपरिचित नहीं हैं। विवेकानंद को यह पता था कि भारतीय महिलाओं को समाज में द्वितीयक स्थिति का सामना करना पड़ता है। घर, सम्बन्धों, सार्वजनिक स्थानों तथा

समाज में उन्हें कई प्रकार अत्याचार व भेदभाव का सामना करना होता है। किन्तु वे भारतीय महिलाओं के आदर्श रूप का अपने विचारों से स्थापित करते हुए इस सच्चाई को प्रतिष्ठित करना चाहते थे कि महिलाओं को द्वितीय या हीन स्थिति में देखना या रखना मूल भारतीय चरित्र नहीं है। यह भारतीय सभ्यता और संस्कृति में बाहर से आई बुराई है जिसका भारतीय जनमानस के मूलतत्त्वों में स्थान नहीं है। ब्रुकलिन एथिकल एशोसिएशन के तत्वधान में हिस्टोरिकल सोसाइटी हाल में 'संसार को भारत की देन विषय भाषण देते हुए स्वामी विवेकानंद विधवाओं की स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा था कि 'एक समय था, जब लोग अंध धार्मिक थे, विधवाएँ थी जो आग में कूद जाती थी और अपने पति की मृत्यु पर ज्वाला में भस्म हो जाते थी। हिंदुओं को इससे विश्वास नहीं था पर उन्होंने इसे रोका नहीं।'<sup>7</sup>

उपरोक्त वक्तव्य के अंतिम लाइन को महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट कहा कि भारतीयों को सती प्रथा जैसी सामाजिक बुराई पर विश्वास नहीं था। उनका दोष केवल इतना है कि उन्होंने इसे समाप्त करने के लिए अपनी ओर से कोई प्रयास नहीं किया। हाँलाकि यह सामाजिक बुराई और अत्याचार था किन्तु इसमें भी भारतीयों ने स्त्री श्रेष्ठता और आदर्श प्रतिष्ठित किया और इन नारियों में संत समझते हुए उनके स्मारक निर्मित किये। इस प्रकार यह माना जा सकता है कि भारतीय जनमानस आदेशानुसार है।

### मातृत्व और सतीत्व की संकल्पना

स्त्रियों के सम्बन्ध में दिए गए स्वामी विवेकानन्द के विचारों में नारीत्व और सतीत्व की उनकी संकल्पना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके बिना उनके नारी सम्बन्धी विचारों को समझ नहीं जा सकता और ना ही कोई सम्यक निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है। हाँलाकि स्वामी जी ने शीर्षक के साथ ही संकल्पना को कही भी प्रस्तुत नहीं किया है किन्तु जहाँ कही भी उन्होंने अपने नारियों के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किए हैं वह स्पष्ट अंतर्निहित भाव के रूप में नारीत्व की उनकी संकल्पना और सतीत्व के उनके विचार स्पष्ट हो जाते हैं। इसे सबसे अधिक स्पष्टता पैसाडेना, कैलिफोर्निया, अमेरिका के शेक्सपियर क्लब हाउस में भारतीय नारी विषय उनके भाषण में प्राप्त होती है। भारतीय नारी को दिया गया यह उनका प्रतिनिधि भाषण है। जो उनके विचारों की कुंजी है। इतना ही महत्व ब्रुकलिन स्टैडर्ड यूनियन 21 जनवरी 1895 ई0 को दिए गए भाषण का भी है जो भारतीय नारियों की स्थिति को लेकर दिया गया। इन दोनों के आधार स्वामी जी के विषयक विचार में जिन दो संकल्पनाओं अध्येताओं की दृष्टि स्थित होती है वह 'नारीत्व' और 'सतीत्व' को लेकर उनके विचार हैं। स्वामी विवेकानंद के अनुसार नारीत्व और सतीत्व भारतीय नारी के प्राणतत्व है। इसको उनके अस्तित्व, उनकी विशेषता और उसके समाज में



महत्ता का आधार मानना चाहिए। भारतीय नारी को इस स्वभाव में समझा जा सकता। स्वामी विवेकानंद ने भारतीय नारी के विभिन्न अवस्थाओं तथा भूमिकाओं के परीप्रेक्ष्य में उसकी व्याख्या की है और भारतीय नारी के सामान्य स्वरूप को इन्हीं व्याख्याओं के साथ रेखांकित किया। वे नारी की व्याख्या में मां की भूमिका और स्थिति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। 'भारत माँ परिवार का केन्द्र और हमारा उच्चतम आदर्श है। वह हमारे लिए ईश्वर के प्रतिनिधि हैं, क्योंकि ईश्वर ब्रह्मांड की मां है। एक नारी ऋषि ने यह सबसे पहले ईश्वर की एकता प्राप्त किया और इस सिद्धांत को वेदों की प्रथम ऋचनाओं में कहा। हमारा ईश्वर सगुण और निर्गुण दोनों है। निर्गुण पुरुष है और सब रूप में नारी है।<sup>8</sup> नारी को सगुण ईश्वर के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए वह नारीत्व की विशेषताओं पर विचार करते हैं। उनके अनुसार नारीत्व का आदर्श रूप 'मां' है। यह भारतीय संस्कृति और मौलिक विशेषता है। पश्चिम में नारी को 'पत्नी' के रूप में देखा गया। जबकि भारतीय संस्कृति में 'मां की भूमिका' में वह केंद्र में स्थापित है मां की महत्ता केवल जन्म देने के कारण नहीं है। उसके अतुलनीय महत्त्व का कारण सतीत्व है। यह सतीत्व है मां अर्थात् स्त्री को ईश्वर की कोटी में खड़ा करता है। स्वामी विवेकानंद इसे भारतीय सभ्यता, संस्कृति और दर्शन का केन्द्र मानते हैं। सतीत्व मां का और इस मां की संतान होने के कारण हमारी शक्ति है। 'मेरा और प्रत्येक अच्छे हिंदू का विश्वास है कि मेरी मां शुद्ध और पवित्र थी और इसलिए मैं जो कुछ हूँ उस सब के लिए उसका ऋणी हूँ।'<sup>9</sup>

स्वामी विवेकानंद स्त्रीत्व है मातृत्व के विभाजनीय विचार पर दृढ़ थे। वे कहते हैं 'भारत में स्त्री जीवन के आदर्श का आरंभ और अन्त मातृत्व में ही होता है प्रत्येक हिंदू के मन में 'स्त्री' शब्द का उच्चारण से मातृत्व का स्मरण हो आता है और हमारे यहां ईश्वर को मां कहा जाता है।<sup>10</sup> फिर आगे वह कहते हैं कि 'भारतवर्ष में स्त्रीत्व मातृत्व का ही बोधक है मातृत्व में महानता स्वार्थशून्यता, कष्ट-सहिष्णुता और क्षमा शीलता का भाव निहित है पत्नी तो छाया की तरह पीछे चलती है उसे माता के जीवन का अनुकरण करना पड़ता है, यही उसका कर्तव्य है। किन्तु माता प्रेम का आदर्श होती है। वह परिवार का शासन करती है उस पर अधिकार रखती है।'<sup>11</sup> स्वामी विवेकानंद के अनुसार माँ की स्थिति न केवल संपूर्ण भारतीयों के लिए सर्वाधिक सम्मानजनक और श्रद्धेय है बल्कि यह स्त्री के लिए यह महत्वपूर्ण स्थिति है। प्रत्येक स्त्री सर्वोच्च सम्मान मातृरूप में ही प्राप्त करती है। सतीत्व इसको स्थायीत्व प्रदान करता है। सतीत्व का साकार और मूर्त रूप भारतीय माँ है।

स्वामी विवेकानंद ने स्त्री के पत्नी और बेटी जैसी भूमिका पर भी विचार किया है किन्तु उसे माता की तुलना में क्रमशः द्वितीयक और तृतीयक स्थान प्रदान किया है। उन्होंने माता के रूप में स्त्री को अध्यात्मिक श्रेष्ठता ही नहीं

बल्कि सामाजिक उच्चता भी प्रदान की है। भारत में स्त्री के सभी भूमिकाओं का सम्मान है किन्तु जब स्त्री मां रूप में होती है तो तब वह अन्य भूमिकाओं पर श्रेष्ठता पाती है। पश्चिमी देशों में स्त्री की स्थिति की तुलना करते हुए स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि पश्चिमी देशों में स्त्री के पत्नी रूप को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यह श्री भारत के उलट है भारत में मां और मातृत्व श्रेष्ठ है और पुरुष ही नहीं स्त्री ही अन्य सभी भूमिकाएं उसके अधीन है। एक प्रकार से वह हिन्दू धर्म व सभ्यता कि केन्द्र बन जाती है। 'पश्चिम में स्त्री पत्नी है वहाँ पत्नी रूप में है स्त्रीत्व का भाव केंद्रित है। किन्तु भारत में जनसाधारण समस्त स्त्रीत्व को मातृत्व में ही केन्द्रीयभूत मानते हैं। पाश्चात्य देशों में ग्रह की स्वामिनी और शासिका पत्नी है। भारतीय ग्रहों में घर की स्वामिनी और शासिका माता है। पाश्चात्य ग्रह में यदि माता को भी, तो उसे पत्नी के अधीन रहना पड़ता है क्योंकि घर पत्नी का है। हमारे घरों में माता सदैव रहती हैं और पत्नी अनिवार्य तथा उसके अधीन होती है। आदर्शों की इस भिन्नता पर ध्यान दीजिए।<sup>12</sup>

स्वामी विवेकानंद ने विभिन्न जगहों पर दिए भाषणों में यह आग्रह किया है कि पश्चिमी को 'मातृत्व' को केन्द्रीय स्थान देना चाहिए। पश्चिम का व्यक्तिवाद ऐसा करने से उन्हें रोकता है।

### स्त्री और कुरीतियाँ

स्वामी विवेकानंद स्त्री सम्बन्धी विचार में आदर्श को लेकर सतर्क और आग्रही होने के साथ भारतीय स्त्री की व्यवहारिक कठिनाइयों और उन कुरीतियों के प्रति सजग भी हैं जिनका सामना स्त्रियों करना पड़ता है। घरों में होने वाले अत्याचार, बाल विवाह, विधवा विवाह संपत्ति के उत्तराधिकार के प्रश्न सभी को लेकर विवेकानंद सचेत थे। उन्होंने भारतीय स्त्री को लेकर चली आ रही कुरीतियों को दूर करने का वैचारिक प्रयास किया। यह प्रयास शास्त्र सम्मत था। उन्होंने शास्त्रों और धार्मिक विधि-विधानों में उन जगहों की पहचान की जहाँ स्त्री-पुरुष समानता के साक्ष्य मिलते हैं और अपने तर्कों के साथ उन्हें सामने रखा। उन्होंने कहा कि हिंदू धर्म की मान्यता है कि विवाह होने के उपरान्त ही पुरुष पूर्ण होता है।<sup>13</sup> धार्मिक ग्रंथों में उसको आदर की दृष्टि से देखा गया है। भारत में स्त्रियाँ ऋषि-मनीषी हुआ करती थी। पूर्व पश्चिम के मानदण्ड से याचना उचित नहीं हिन्दू माँ भाव की पूजा करते हैं और सन्यासियों को भी अपनी मां के सामने मस्तक से पृथ्वी करना पड़ता है। भारत में अमेरिका की भाँति स्त्री के केवल सौंदर्य या यौवन को महत्व नहीं दिया जाता बल्कि उसके मातृत्व को समाज के केंद्र में रखा जाता है।

पर्दा प्रथा को वह मूल भारतीय परम्परा नहीं मानते हैं। उनके अनुसार विधर्मियों के कारण स्त्रियों को पर्दे की कठोर प्रथा का पालन करना पड़ा

क्योंकि भारतीय नारियों के लिए सतीत्व केंद्रीय भाव है। इससे वह किसी भी दशा में समझौता नहीं कर सकती। बाल विवाह और विधवाओं का बचाव उन्होंने भिन्न तर्कों से किया। उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर देते हुए कहा कि यह गलत है कि बाल विधवाओं के प्रति किसी प्रकार का अपमानजनक या बुरा व्यवहार किया जाता है। "मैं सारे भारत में घुमा हूँ, पर मुझे ऐसे दुर्व्यवहार का एक भी उदाहरण नहीं मिला, जिसका उल्लेख किया गया है। एक समय था, जब लोग अंध धार्मिक थे, विधवाएँ भी, जो आग में कूद जाती थीं और अपने पति की मृत्यु पर ज्वाला में भस्म हो जाती थीं। हिंदुओं को इसमें विश्वास नहीं था, पर उन्होंने इसे रोका और जब अंग्रेजों ने भारत पर नियंत्रण प्राप्त किया तभी इसका अंतिम रूप में वर्जन हुआ। ये नारियाँ संत समझी जाती थीं और अनेक दिशाओं में उनकी स्मृति में स्मारक बने हुए हैं।<sup>14</sup>

इसका सीधा अर्थ है पर्दा प्रथा और विधवाओं द्वारा आत्मदाह, दोनों को स्वामी विवेकानंद धर्म सम्मत रिवाज न मानकर तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति का परिणाम मानते हैं। यह भारतीय परंपरा में दबाव से आई विसंगति मात्र समझी जा सकती है। भारतीयों का दोष इतना मात्र है कि उन्होंने इसे दूर करने का अपनी ओर से प्रयास नहीं किया इसके विपरीत उन्होंने नारी की दैव छवि से प्रभावित होकर उसके इस कृत्य को भी पूजनीय बना दिया।

भारत में नारियों के जो बुरी स्थिति है उसके पीछे दार्शनिक या वैचारिक स्थिति को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। भारतीय नारियों की बुरी स्थिति और समाज में आई कुरीतियों के पीछे सामाजिक व आर्थिक कारण थे। स्वामी विवेकानंद इसकी पहचान करते हुए कहते हैं कि नारियों की द्वितीयक स्थिति पीछे एक पृथक और विशिष्ट पुरोहित वर्ग का उदय है जिससे भारत ही नहीं प्राचीन रोम और यूनान की सभ्यता में स्त्री पुरुष की बराबरी खत्म हो गई। 'पहले यह सेमेटिक रक्तावली असीरियन जाती थी जिसने इस सिद्धांत की घोषणा की थी यह लड़कियों को विवाहित होने पर भी, ना कोई हक नहीं और न कोई अधिकार है। ईरानीयों ने बेबिलोनिया के इस विचार को विशेष गहराई के साथ हृदयगम किया और उनके द्वारा यह रोम और यूनान में पहुंचाया गया और नारी की स्थिति का सभी स्थानों पर पतन हुआ।<sup>15</sup>

स्वामी विवेकानंद महिलाओं के द्वितीय और गैर बराबरी वाली स्थिति का जिम्मेदार विवाह की प्रणाली में परिवर्तन भी मानते हैं जिसमें मात्रकेन्द्रीक परिवार की जगह पितृकेन्द्रित परिवार अस्तित्व में आये। इसके कारण पर्दाप्रथा और विधवा विवाह का निषेध हुआ जबकि भारतीय समाजिक पहले ऐसा नहीं था और इसी के साथ जुड़ा तीसरा कारण व्यक्तित्व पवित्रता का विचार भी है। जिसमें पवित्रता को नारियों की जिम्मेदारी बना दिया गया। सभी धर्मों ने इसका समर्थन किया। पुरुष वर्गस्व बढ़ाने के साथ धर्म नारियों के शोषण का हथियार

बन गया। भारत में नारियों के विषय में विशुद्ध हिंदू दृष्टि लागू होने की जगह पाश्चात्य परम्परा आक्रमणकारी प्रभाव और आधुनिक दृष्टिकोण लागू हो गया है। जिसके कारण यह माँ के रूप में नारी केंद्रित समाज पुरुष केंद्रित होने के साथ-साथ भोग के प्रति आकर्षित हो गया। भोग भारतीय समाज का मूल लक्षण नहीं है। इसलिए इसके लिए भारतीय संस्कृति को जिम्मेदार नहीं माना जा सकता है।

### विवेचन

उन्नीसवीं शताब्दी में हिन्दू नवजागरण के प्रमुख व्यक्तित्व हैं। उन्होंने हिन्दू जीवन और दर्शन पर विस्तार से चर्चा की और अपने छोटे से जीवन काल में साम्राज्यवाद वर्ग के दौर में, जिसमें साम्राज्यवादियों के धर्म और संस्कृति को श्रेष्ठ बताने का सामान्य चलना था, प्राचीन हिन्दू संस्कृति को अद्वितीय सकारात्मक और मानवीय पक्ष की आत्मविश्वास पूर्वक चर्चा की। भारतीय स्त्रियों के लिए औपनिवेशिक काल विभिन्न कठिनाइयों का समय था। लेकिन स्वामी विवेकानंद तत्कालीन समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक वातावरण के बीच आध्यात्मिक और मानसिक सशक्तिकरण के रास्ते हिन्दू महिलाओं में आशा का संचार किया। नारी उस समय में सार्वजनिक जीवन ही नहीं ज्ञान और विमर्श के दायरे में बाहर थी। हिन्दू नवजागरणों के नायकों के समक्ष दो प्रमुख चुनौतियां थी। पहला ईसाई या पश्चिम द्वारा जा रही आलोचना थी, जिसे ब्रिटिश शासकों का प्रत्यक्ष या परोक्ष समर्थन हासिल था और दूसरी चुनौती स्वयं हिंदू धर्म के भीतर से आ रही है। हिंदुओं का एक तब का इस युग में रूढ़िवादियों के साथ धार्मिक परंपराओं और मान्यताओं को जारी रखना चाहता था। स्वामी विवेकानन्द ने बहुत कुशलता से दोनों चुनौतियों का सामना किया। विशेष रूप से स्त्रियों को लेकर पाश्चात्य आलोचना और हिन्दू रूढ़िवाद का प्रत्युत्तर देते हुए मानवीय सदगुणों समानता स्वतंत्रता के सार्वभौमिक और सर्वकालिक मूल्यों के साथ हिन्दू ग्रंथ हो संस्कृति की व्याख्या की जिसमें नारी का स्थान पुरुषों के बराबर था। प्राचीन हिन्दू समाज के सकारात्मक पक्ष की व्याख्या तत्कालीन समय में उन भारतीयों का मानसिक संबल बढ़ाने में सफल रहे जो तार्किक स्तर पर की जा रही है पाश्चात्य आलोचना का जवाब दे रहे थे।

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द के स्त्री सम्बन्धी विचार का बहुपक्षीय महत्व है या महत्व इसलिए भी है कि यह आज भी नारियों को लेकर बचने वाली किसी भी राय, विमर्श या दृष्टिकोण अनिवार्य पक्ष है। इसके महत्व को औपनिवेशिक भारत से लेकर आज तक की परिस्थिति में भी अनुभव किया जा सकता है। स्वामी विवेकानंद खुले मन और निष्पक्ष बुद्धि से भारतीय स्त्रियों की दशा पर विचार किया। वे स्त्रियों को लेकर भारतीय जनमानस के दुराग्रह और

पश्चिम में की गई सकारात्मक पहलओं के प्रति भी सचेत थे। 'इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेकानेक अमेरिकी स्त्रियों की उच्च बौद्धिक उपलब्धियां और उनकी स्वतंत्रता की सदुपयोग की प्रशंसा कि उन्होंने उनकी सवाधीनता की तुलना घर की चारदीवारी में बंद रहने वाली भारतीय स्त्रियों से की और अपनी मृत बहन के कष्टों की छिपी याद ने उन्हें इस बात की प्रेरणा दी कि वे स्त्रियों की मुक्ति के लिए निस्वार्थ भाव से कार्य करें।<sup>16</sup>

इस प्रकार पाश्चात्य श्रेष्ठता स्वीकार ना करते हुए भी उन्होंने वहाँ के सकारात्मक उपलब्धियों से सीखने का विचार दिया। स्वामी विवेकानन्द के स्त्री सम्बन्धी विचारों में अंतर्विरोध न्यूनतम है और अध्यात्मिक भूमि पर खड़े होकर की गई उनकी व्याख्या हिन्दू नवजागरण के भीतर उन्हें तार्किक, मानवीय और सुधारवादी के रूप में प्रतिष्ठित करती है।

### सन्दर्भ

1. प्रो० कुसुमलता केडिया व प्रो० रामेश्वर प्रसाद मिश्र, स्त्रीत्व : धारणाएँ एवं यथार्थ (स्त्री-प्रश्न पर हिन्दू दृष्टि से सभ्यतामूलक विमर्श) 2004, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी। पृ० 27
2. वही पृ० 23
3. विवेकानन्द (1996) विवेकानन्द साहित्य, दसवाँ खण्ड, अद्वैत आश्रम प्रकाशन विभाग, कोलकाता, पृ० 263
4. वही, पृ० 263
5. वही, पृ० 266
6. विवेकानन्द (1995) विवेकानन्द साहित्य, पहला खण्ड, अद्वैत आश्रम प्रकाशन विभाग, कोलकाता, पृ० 324
7. वही, दसवाँ खण्ड, पृ० 287
8. वही, पृ० 302
9. वही, पृ० 303
10. वही, पहला खण्ड, पृ० 309
11. वही, पृ० 311
12. वही, पृ० 310
13. वही, पृ० 323
14. वही, दसवाँ खण्ड, पृ० 263
15. वही, पृ० 287
17. रोमां रोलां (1998) विवेकानन्द की जीवनी, अनुवाद डॉ० रघुराज गुप्त, अद्वैत आश्रम प्रकाशन विभाग, कोलकाता, पृ० 61

## नदी के द्वीप : निराशा में आशा और ऊर्जा का संचरण

डॉ. नियति कल्प\*

### सारांश

'नदी के द्वीप' एक प्रतीकात्मक कविता है जिसमें कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने नदी की धारा के बीच उभर आने वाले छोटे-छोटे रेतीले द्वीपों के रूप में अपने आपको कल्पित किया है। 'नदी के द्वीप' कविता में द्वीप व्यष्टि चेतना का प्रतीक है और नदी समष्टि चेतना का। नदी की धारा का पुत्र होने के बाद भी दोनों में तात्त्विक भिन्नता है। नदी के द्वीप का अस्तित्व धारा से अलग है। नदी में रहते हुए भी द्वीप की अपनी सत्ता है। नदी की धारा में जहाँ प्रवाहशीलता है, वहीं द्वीप में आत्मसमर्पण की स्थिरता है। कवि ने नदी के द्वीप के रूपक के माध्यम से कहना चाहा है कि मनुष्य का व्यक्तित्व काल- प्रवाह की प्रेरणा और परिस्थितियों के घात-प्रतिघात का प्रतिफलन है। नदी के द्वीप के व्याज से कवि अज्ञेय ने जीवन से निराशा और हताश मनुष्यों में आशा और ऊर्जा का संचार किया है।

**संकेताक्षर :** तार सप्तक, नदी के द्वीप

आधुनिक हिन्दी-साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का अप्रतिम योगदान है। साहित्य की सभी विधाओं में उनका सशक्त लेखन अविस्मरणीय है। प्रयोगवाद और नई कविता के सर्वश्रेष्ठ कवि के रूप में स्थापित अज्ञेय 'तार सप्तक' के संपादक भी हैं और उसके एक कवि के रूप में भी स्थापित हैं। 1949 ई० में रचित 'नदी के द्वीप' शीर्षक कविता 'हरी घास पर क्षण भर' नामक काव्य संग्रह में संकलित है। उक्त कविता के शीर्षक के संदर्भ में एक रोचक तथ्य यह है कि इसी शीर्षक से उन्होंने एक उपन्यास का भी लेखन किया है। 'नदी के द्वीप' एक प्रतीकात्मक कविता है जिसमें कवि अज्ञेय ने नदी की धारा के बीच उभर आने वाले छोटे-छोटे रेतीले द्वीपों के रूप में अपने आपको कल्पित किया है। द्वीप का अस्तित्व नदी की इच्छा पर निर्भर है। उसकी प्रेरणा से ही वह रूप और आकार ग्रहण करता है और पुनः उसके तीव्र प्रवाह में प्रवाहित होकर विलीन भी हो जाता है। ठीक इसी प्रकार व्यक्ति और उसके चरित्र का निर्माण समय के प्रवाह के द्वारा इस समाज में होता है। समय की बहुमुखी धारा उसे जोड़ती, तोड़ती और विस्थापित करती रहती है। यह कविता पहले 'तार सप्तक' के प्रकाशन (1943 ई.) के बाद एवं दूसरे सप्तक के प्रकाशन(1951 ई.) के पूर्व लिखी गई है। पहले सप्तक का समय द्वितीय विश्वयुद्ध का समय था। 1947 ई. में देश को स्वतंत्रता मिली,

\* सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

साथ ही मिला भीषण नरसंहार, अनगिनत शरणार्थी और कश्मीर में पाकिस्तानी घुसपैठ। परिणामतः 1948-49 ई. में लाइन ऑफ कंट्रोल बनाया गया। 'नदी के द्वीप' कविता के साथ 11 सितंबर, 1949 ई. की तिथि लिखी मिलती है। कवि आसपास की घटनाओं के प्रति निरपेक्ष निर्लिप्त दृष्टि नहीं रख सकता। संवेदना उद्वेलित होती है, तभी कविता बनती है। 'तार सप्तक' के दूसरे संस्करण के लिए दिए गए वक्तव्य 'पुनश्च' में भारत भूषण अग्रवाल ने लिखा है — " 'तार सप्तक' के प्रथम प्रकाशन के समय विश्व अपने इतिहास के सब से अधिक भीषण युद्ध में ग्रस्त था, और देश अपनी मुक्ति के द्वार पर थरथरा रहा था। जैसे- जैसे युद्ध समाप्त हुआ और देश को मुक्ति मिली, पर जीवन एवं जगत् की जटिलता निरंतर बढ़ती ही चली गयी है। आधुनिक कवि को यदि एक ओर विश्व पहली बार एक होता दीखता है, तो दूसरी ओर यांत्रिक पद्धति की जकड़ में व्यक्ति अकेला पड़ता जा रहा है। भारतीय कवि के लिए एक अतिरिक्त कठिनाई यह है कि जनतन्त्र के आलोक के साथ ही वे विभाजक खाइयाँ भी दिखाई पड़ने लग गयी हैं जो नगर और ग्राम के बीच, प्राचीन और नवीन के बीच और देशी और विदेशी के बीच खुदी हुई हैं — बल्कि कुछ खाइयाँ तो निरन्तर बढ़ती चली जा रही हैं। इन सब पर अपनी सीमित मध्यवर्गीय अनुभूति के बल पर वह संवेदना का सेतु कैसे बाँधे ? और जब तक यह सेतु न बाँधे तबतक उसका कवि-कर्म कैसे चरितार्थ हो?"<sup>1</sup>

'नदी के द्वीप' कविता में द्वीप व्यष्टि चेतना का प्रतीक है और नदी समष्टि चेतना का। कविता की निम्न पंक्तियों में कवि की आत्मविवेचना दर्शनीय है—

*"हम नदी के द्वीप हैं।  
हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर स्रोतस्विनी बह जाय।  
वह हमें आकार देती है।  
हमारे कोण, गलियाँ, अन्तरीप, उभार, सैकत कूल,  
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।  
माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।"*<sup>2</sup>

कवि स्वयं को नदी की धारा में उभर आये द्वीप के सदृश मानता है। वह नहीं चाहता कि धारा उसे छोड़कर दूर चली जाय। धारा ही उसे रूप और आकार प्रदान करती है। द्वीप का आकार, उसकी सरलता और वक्रता, उसका विस्तार और उसकी संकीर्णता, उसकी ऊँचाई-नीचाई, गोलाई, इन सबका निर्माण धारा के द्वारा ही हुआ है। वह द्वीप रूपी शिशु के लिए जन्म देने वाली और पालन-पोषण करने वाली माता के समान है। जिस प्रकार एक माता अपने शिशु को अपने रक्त और हड्डियों से उसके शरीर को रूपाकार प्रदान करती है, उसी प्रकार नदी ने भी द्वीप को सँवारा है, उसे स्वरूप प्रदान किया है।

किंतु नदी की धारा का पुत्र होने के बाद भी दोनों में तात्त्विक भिन्नता है। नदी के द्वीप का अस्तित्व धारा से अलग है। नदी में रहते हुए भी द्वीप की अपनी सत्ता है। नदी की धारा में जहाँ प्रवाहशीलता है, वहीं द्वीप में आत्मसमर्पण की स्थिरता है। क्योंकि उसके प्रवाहित होने का अर्थ रेत के रूप में उसका बह जाना है, बिखर जाना है। द्वीप अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए जल के थपेड़े खाकर भी स्थिर रहता है। उसका अस्तित्व उसी पल समाप्त हो जाएगा जब वह नदी के जल के साथ बह जायेगा। उसके पैर उखड़ जायेंगे, वह ढह जायेगा, बह जायेगा और अंततः उसका अस्तित्व पूरी तरह समाप्त हो जायेगा। लेकिन इतना निश्चित है कि स्वयं को मिटाकर भी द्वीप धारा का अंग नहीं बन पायेगा। वह अपने अस्तित्व को विस्तृत नहीं कर पायेगा। क्योंकि चूर-चूर होकर भी वह नदी की स्वच्छ धारा को रेत बनाकर कुछ गंदा अर्थात् मटमैला कर देगा, जिससे धारा की उपयोगिता ही समाप्त हो जा सकती है। अस्तित्व की इसी महत्ता को इंगित करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल ने लिखा है – “ आज का कवि केवल ‘विरासत’ पर नहीं जी सकता। उसे ‘नदी के द्वीप’ की तरह अपने को बार-बार नए ढंग से संस्कारित और आधुनिक करना पड़ता है। आज उसकी शक्ति प्रश्नाकुलता है, विनयशील श्रद्धा नहीं।”<sup>3</sup>

उक्त संदर्भ में कविता की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं –

“द्वीप हैं हम।  
यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।  
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी के क्रोड़ में।  
वह बृहद् भूखंड से हमको मिलाती है।  
और वह भूखंड अपना पितर है।  
नदी, तुम बहती चलो।  
भूखंड से जो दाय हमको मिला है, मिलता रहा है,  
माँजती, संस्कार देती चलो”<sup>4</sup>

कवि स्वयं को नदी का द्वीप मानता है। उसके मत में द्वीप की स्थिरता कोई शाप नहीं है। यह तो अपनी-अपनी नियति है। नदी से उत्पन्न होने के कारण द्वीप, नदी के उस पुत्र की भाँति है जो आश्वस्त भाव से नदी रूपी माता की गोद में स्थित है। नदी ही कभी-कभी उसे किनारे के विशाल भूखंड से जोड़ देती है। यह भूखंड उसका पिता है। विदित है कि भूखंड के ही कुछ अंश नदी की धारा में पड़कर बालू और मिट्टी के कणों का रूप धारण कर द्वीप के निर्माण का कारण बनते हैं।

द्वीप का अपनी माता अर्थात् नदी से अनुरोध है कि वह इसी प्रकार निरंतर निर्बाध रूप से प्रवाहित होती रहे और पिता भूखंड से जो उत्तराधिकार द्वीप को प्राप्त हुआ है या हो रहा है, उसे नदी परिमार्जित तथा संस्कार प्रदान



करती रहे। यदि कभी ऐसा हो कि नदी अपने आह्लाद या किसी बाहरी दबाव, विवशता या अतिचार के कारण उद्वेलित हो उठे अर्थात् उसमें बाढ़ आ जाय, उसका वेग अत्यंत तीव्र हो उठे और यह मंदगामिनी नदी भयानक तबाही मचाने लगे, वह रौद्ररूपा काल-प्रवाहिनी बन जाय, तो नदी के द्वीप को यह स्थिति भी स्वीकार है। वह बिखरकर रेत-कणों के रूप में उस धारा में मिल जायेगा। फिर कहीं वे कण एकत्रित होंगे, पुँजीभूत होंगे और एक नये द्वीप का निर्माण करेंगे। उस द्वीप को भी नदी की धारा अपनी रुचि और गति के अनुसार नया अस्तित्व प्रदान करेगी। इस प्रकार नदी बारंबार अपने बिखरे द्वीपों को नया बनायेगी; उन्हें माता की तरह रूप, आकार और संस्कार के साथ-साथ नव्य जीवन प्रदान करेगी। अज्ञेय ने एक रचनाकार के तौर पर अपने समय और समाज की सर्जनात्मकता को पहचाना है और उसे 'डी-कंस्ट्रक्ट' किया है। उनके चिंतन के केंद्र में हमेशा आधुनिक मनुष्य की स्वतंत्रता और सर्जनात्मकता रही।

प्रस्तुत कविता में कवि ने नदी के द्वीप के रूपक के माध्यम से कहना चाहा है कि मनुष्य का व्यक्तित्व काल- प्रवाह की प्रेरणा और परिस्थितियों के घात-प्रतिघात का प्रतिफलन है। परिस्थितियाँ ही मनुष्य को तोड़ती और गढ़ती रहती हैं। 'तार सप्तक' के दूसरे संस्करण में अज्ञेय ने लिखा है "ऐतिहासिक दृष्टि से यह बात सही है कि हिन्दी का कृतित्व समाज के दोनों छोरों से हटता हुआ मध्य की ओर आ रहा है। आज का कवि न अभिजात वर्ग का है न ही उन निचले स्तरों का, जिन से सच्चा लोक-कवि आता या आयेगा। संस्कृति की नदी में वह न तो मँझधारा में है जहाँ प्रवाह तीव्र हो और सबकुछ अनुक्षण बदलता रहे, न किनारे पर जहाँ ठहराव है और निश्चल जल तलदर्शी हो गया है। वह दोनों के बीच में वहीं है, जहाँ भँवर हैं, दह हैं, छिछली रेतियाँ हैं, जहाँ-तहाँ उलटी धारा भी है। साधारण भाषा में वह मध्य-वित्तीय वर्ग का प्राणी है; और भारतीय समाज-संगठन में अभी तक तो यही मध्य-वित्तीय वर्ग - जिसमें अधिसंख्य वेतनभोगी, छोटे व्यवसायी या खाते- पीते भूमिदार आदि सभी हैं - समाज की रीढ़ है। हिन्दी साहित्य में पिछले वर्ष क्यो, पचास वर्षों में जितनी नयी प्रवृत्तियाँ लक्षित हुई हैं सब के मूल में यही सामाजिक संचरण है।<sup>5</sup> किंतु कभी भी इसे जीवन के दुर्भाग्य के रूप में ग्रहण नहीं करना चाहिए। जो अनिवार्य है, अटल है, उसे स्वीकार करना और उसी के अनुरूप आत्मविकास के लिए प्रयत्नशील रहना ही मनुष्य के लिए उचित है। स्वधर्म को छोड़कर परधर्म के अनुकरण की चेष्टा व्यर्थ है। इससे हम अपना व्यक्तित्व तो नष्ट करते ही हैं, साथ ही जिसके अनुकरण का प्रयास करते हैं, उसको भी नुकसान पहुँचाते हैं। यदि कभी प्रतिकूल परिस्थितियाँ हमारे विनाश के लिए संकल्पशील जान पड़ें तो भी हमें धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। वरन् निरंतर संघर्षरत रहना ही लक्ष्य प्राप्ति का एकमात्र विकल्प है। नदी के द्वीप के व्याज से कवि अज्ञेय ने

जीवन से निराश और हताश मनुष्यों में आशा और ऊर्जा का संचार किया है।

कोई भी अच्छी कविता कवि की मनःस्थिति और देश-समाज में व्याप्त तत्कालीन जनमानस का प्रतिनिधित्व करती है। साथ ही वह बहुआयामी भी होती है, एक नहीं कई-कई अर्थ लिए हुए। प्रस्तुत कविता 1949 में लिखी गई है। विदित है स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पाकिस्तान की कारगुजारियों के कारण कश्मीर में अस्थिरता आई। यहाँ तक कि मामला संयुक्त राष्ट्र तक पहुँचा। भारत को एलओसी को मान्यता देनी पड़ी। यह भारत के स्वाभिमान पर एक न मिटाया जा सकने वाला दाग बन गया। यदि भारत ने यथोचित दृढ़ता से काम लिया होता तो संभवतः यह स्थिति आई ही न होती। कश्मीर भारत का मस्तक है। उसे ही खंडित कर दिया गया। यह बात एक राष्ट्रप्रेमी स्वाभिमानी युवक के लिए कितनी पीड़ादायक रही होगी। 'नदी के द्वीप' की पंक्तियों को देखें तो पीड़ा, आक्रोश और प्रतिशोध की भावना तीनों का ही समायोजन दीख पड़ेगा। " स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के।" क्या इन पंक्तियों से अज्ञेय भारत की शांतिप्रिय, सहिष्णु जनता की ओर इंगित नहीं कर रहे? भारत आक्रांताओं का, अन्यायी लोगों का देश नहीं है। लेकिन शराफत को कभी-कभी कमजोरी भी समझ लिया जाता है। भारतभूमि अनेक नदियों द्वारा सिंचित है। नदियों को यहाँ माता की संज्ञा दी जाती है। लेकिन भारत के स्वाभिमान पर प्रहार हुआ है। कवि चाहता है कि किसी शत्रु के स्वैराचार, उसके अतिचार पर नदी कुपित हो उठे उसके लिए काल बन जाए। कवि कहता है—

*"तुम्हारे आह्लाद से, या दूसरों के, किसी स्वैराचार से, अतिचार से,  
तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे,  
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा घोर काल प्रवाहिनी बन जाय"*<sup>6</sup>

कवि को इस प्रवाहिनी के प्रवाह में रेत हो जाना स्वीकार है। वह जानता है नदी का कोप शत्रु को नेस्तनाबूद कर देगा, भले ही वह देश की सरंचना पर भी भार डाले। कवि को यह विश्वास है कि छनकर देश फिर से जम जाएगा। उसका नया व्यक्तित्व विकसित होगा। अंत में कवि प्रार्थना करता है — "मातः, उसे फिर संस्कार तुम देना।" कवि देश की संस्कृति को अक्षुण्ण रखना चाहता है, उसे पुनर्नवा करना चाहता है। वह संस्कृति जिस पर बाहर से हमला हुआ है, जिसने देश के मस्तक को खंडित किया है, जिसने देशवासियों के मस्तक को झुका दिया है।

अंत में कृष्णदत्त पालीवाल की इस उक्ति का स्मरण करना सर्वथा प्रासंगिक होगा — " प्रश्न यह उठता है कि अज्ञेय के संपूर्ण रचना-कर्म का ध्वन्यार्थ क्या है ? इसका एक सीधा-सा उत्तर हो सकता है— अज्ञेय का स्वाधीन चिंतन। स्वाधीन मनुष्य का स्वाधीनता-बोध या मानव का

स्वातंत्र्य—दर्शन। कौन नहीं जानता कि अपनी स्वाधीनता का बोध खोकर रचनाकार अपने रचनाकर्म से स्खलित हो जाता है। इसलिए रचना—कर्म के लिए स्वाधीनता—बोध बहुत बड़ी चीज है।<sup>7</sup> 'नदी के द्वीप' कविता भी अज्ञेय के इसी चिंतन का प्रतिनिधित्व करती है।

### संदर्भ

1. अज्ञेय (सं), 'तार सप्तक', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2009, पृ. 98
2. नन्दकिशोर आचार्य (सं), अज्ञेय संचयिता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 ई०, पृ० 59
3. कृष्णदत्त पालीवाल, अज्ञेय, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 2012, पृ. 55
4. नन्दकिशोर आचार्य (सं), अज्ञेय संचयिता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 ई०, पृ० 60
5. अज्ञेय (सं), 'तार सप्तक', भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2009, पृ. 244
6. नन्दकिशोर आचार्य (सं), अज्ञेय संचयिता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 ई०, पृ० 60
7. कृष्णदत्त पालीवाल, अज्ञेय, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 2012, पृ. 83

## पुराणों में रामकथा

डॉ० अश्विनी देवी \*

वैदिक साहित्य में आख्यान, इतिहास और पुराण प्रमुखतः प्राप्त होते हैं। प्राचीन काल से ही इन्हें धार्मिक संस्कारों, यज्ञों, पर्वों के अवसर पर सुनाया जाता था। आख्यानों में गद्य के साथ-साथ पद्य भी आता था जिसे गाथा कहा गया। इन्हीं गाथाओं में रामकथा प्राप्त होता है जो पूर्णतः वाल्मीकि रामायण पर आश्रित नहीं थे। वेदों में रामकथा के पात्रों का वर्णन प्राप्त होता है जो धीरे-धीरे विकास की ओर अग्रसर होता गया। हम कह सकते हैं कि रामकथा का वेदों में बीजारोपण हुआ जो उत्तरोत्तर पल्लवित होता गया। रामकथा से सम्बन्धित गाथाएं वाल्मीकि से पूर्व ही प्रचलित थी जिसका प्रमाण बौद्ध त्रिपिटक में भी प्राप्त होता है। पुराणों में भगवान विष्णु के दशअवतारों का वर्णन प्राप्त होता है जिनमें रामावतार भारतीय संस्कृति का पर्याय बन गया क्यों कि साधारण मानव के रूप में राम साक्षात् धर्म हैं जो किसी भी परिस्थिति में मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते हैं ऐसे श्रीराम की कथा भारत में ही नहीं अन्यान्य देशों में प्रचलित है— जैसे तिब्बत, खोतान, जावा, मलय, वर्मा, थाईलैण्ड, हिंदचीन, कम्बोडिया आदि। रामायण अनेक गन्थों का आधार है जिसका उद्देश्य आदर्श एवं मर्यादित जीवन का चित्रण करना है। भगवान राम का चरित्र भारतीय जनजीवन का ऐसा प्रतिनिधित्व करता है कि संपूर्ण संस्कृत साहित्य आधिक्य या न्यून मात्रा में इससे प्रतिबिंबित है। संस्कृत साहित्य के उपजीव्य ग्रन्थों में सर्वाधिक महत्त्व रामायण का है। ऐसे रामकथा का वर्णन हमें विभिन्न पुराणों में प्राप्त होता है जिनकी कथाओं के कुछ अंश में किञ्चित् परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होता है।

### हरिवंशपुराण

हरिवंशपुराण का रचनाकाल लगभग 400 ई० माना जाता है। इसमें अत्यन्त संक्षिप्त रूप में रामकथा मिलता है। रामावतार के बाद वनवास से रावणवध की मुख्य घटनाओं का उल्लेख है। इसमें दो स्थान पर वाल्मीकि का उल्लेख है—

तल्लभ्यते व्यासवचः प्रमाणं गीतं च वाल्मीकिमहर्षिणा च।<sup>1</sup>  
सरस्वतीं च वाल्मीके स्मृतिद्वैपायने तथा ॥<sup>2</sup>

कुछ स्थानों पर रामकथा के पात्रों एवं कथानक का निर्देश किया गया है—

रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना भरतश्चैव भारत। ऋष्यशृङ्गाः शान्ता च तथा रूपैर्नटैः कृताः ॥<sup>3</sup>

\* सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कालेज, प्रयागराज

एक स्थान पर सम्पूर्ण इक्ष्वाकु वंश के राजाओं का क्रमशः उल्लेख किया गया है।<sup>4</sup> प्रथम अध्याय में ही शत्रुघ्न द्वारा लवणासुर के वध का प्रसङ्ग वर्णित है।<sup>5</sup> इसी प्रकार इस पुराण में कई स्थानों पर रामकथा के कुछ-कुछ अंशों का वर्णन है।<sup>6</sup> इसमें कहीं भी सीता और दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन नहीं है।

### विष्णुपुराण

विष्णुपुराण का रचना काल चतुर्थ शताब्दी माना जाता है। इसमें रामकथा का संक्षिप्त रूप प्राप्त होता है। चतुर्थांश में सूर्यवंश की वंशावली का क्रमशः वर्णन किया गया है।<sup>7</sup> जिसमें अज पुत्र दशरथ के चार पुत्रों के होने का उल्लेख है। चारों पुत्र भगवान् विष्णु के अंश थे—

भगवान्भजनाभोजगतः स्थित्यर्थमात्मांशेन  
रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्नरूपेण चतुर्द्धचतुर्द्धा पुत्रत्वमयासीत् ॥<sup>8</sup>

हरिवंश पुराण की अपेक्षा इसमें रामकथा की अधिक सामग्री प्राप्त होती है। इसमें सीता के अयोनिजा होने का उल्लेख है—

सीतामयोनिजा जनकराजतनया वीर्यशुल्का लेभे ॥<sup>9</sup>  
तस्य पुत्रार्थं यजनभुवं कृषतः सीरे सीता दुहिता समुत्पन्ना ॥<sup>10</sup>

यहां भी लवणासुर वध का प्रसङ्ग प्राप्त होता है—

हत्वा च लवणं रक्षो मधुपुत्रं महाबलम् शत्रुघ्नो मधुरां नाम पुरीं यत्र चकार वै ॥<sup>11</sup>

### वायुपुराण

वायुपुराण का रचनाकाल पञ्चम शताब्दी माना जाता है। इसमें वर्णित रामकथा विष्णुपुराण से पृथक् नहीं है। वायुपुराण के उत्तरार्द्ध के षड्विंश अध्याय में इक्ष्वाकुकुल की वंशावली का सम्यक् विवरण है।<sup>12</sup> इसमें अत्यन्त संक्षिप्तरूप में राम से सम्बन्धित कथानक का उल्लेख है। राजा दशरथ के चार पुत्र हुए। इनमें से शत्रुघ्न ने लवणासुर का वध किया। राम ने सीता को खोजते समय रावण का वध किया—

रामो दाशरथिवीरो धर्मज्ञो लोकविश्रुतः ।  
भरतो लक्ष्मणश्चैव शत्रुघ्नश्च महाबलः ॥  
माधवं लवणं हत्वा गत्वा मधुवनं च तत ।  
शत्रुघ्नेन पुरी तत्र मथुरा सन्निवेशिता ॥<sup>13</sup>

इसमें भी सीता के अयोनिजा होने का उल्लेख है—

उद्भिन्ना कृषता येन सीता राज्ञा यशस्विनी ।  
रामस्य महिषी साध्वी सुव्रताऽतिपतिव्रता ॥<sup>14</sup>

इसमें उल्लिखित है कि सीरध्वज ने अश्वमेधयज्ञ के समय जिस अग्निक्षेत्र का विधि—विधानपूर्वक कर्षण किया था, उसीसे सीता उत्पन्न हुई—

अग्निक्षेत्रे कृष्यमाणे अश्वमेधे महात्मना ।  
विधिना सुप्रयुक्तेन तस्मात्सा तु समुत्थिता ॥<sup>15</sup>

### भागवतपुराण

इसका समय षष्ठ अथवा सप्तम शताब्दी माना जाता है। इसमें पहली बार सीता को लक्ष्मी का अवतार माना गया है—

जित्वानुरूपगुणशीलवयोऽङ्गरूपां, सीताभिधां श्रियमुरस्यभिलक्ष्यमानाम् ॥<sup>16</sup>

इसमें मनु से लेकर सभी सूर्यवंशी राजाओं का उल्लेख है।<sup>17</sup> इस पुराण में भी श्रीहरि के अंश से राजा दशरथ के चारों पुत्रों के जन्म का वर्णन है—

तस्यापि भगवानेष साक्षात् ब्रह्ममयो हरिः ।  
अंशांशेन चतुर्धागात् पुत्रत्वं प्रार्थितरु सुरैः ।  
रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्ना इति संज्ञया ॥<sup>18</sup>

इसमें उत्तररामायण अर्थात् सीतात्याग, लव— कुश जन्म, सीता का पृथ्वी लोक में जाना आदि कथाएं वर्णित हैं, किन्तु कथानक में कुछ परिवर्तन है। इसमें राम ही शूर्पणखा को विरूप करते हैं—

रक्षःस्वसुर्व्यकृत रूपमशुद्धबुद्धेस्तस्याः खरत्रिशिरदूषणमुख्यबन्धून् ॥<sup>19</sup>

श्रीराम ने धोबी की उलाहना एवं लोकापवाद के भय से सीता का परित्याग किया—

नाहं बिभर्मि त्वां दुष्टामसतीं परवेश्मगाम्  
स्त्रीलोभी बिभृयात् सीतां रामो नाहं भजे पुनः ॥  
इति लोकात् बहुमुखाद् दुराराध्यादसंविदः ।  
पत्या भीतेन सा त्यक्त्वा प्राप्ता प्राचेतसाश्रमम् ॥<sup>20</sup>

द्वितीय स्कन्ध में अत्यन्त संक्षिप्त रूप में रामकथा का प्रसङ्ग है जिसमें राम के क्रोध से भयभीत समुद्र स्वयं ही मार्ग देता है—

यस्मा अदादुदधिरूढभयाङ्गवेपो, मार्ग सपद्यरिपुरं हरवद् दिधक्षोः ।  
दूरे सुहृन्मथितरोषसुशोणदृष्ट्या, तातप्यमानमकरोरगनक्रचक्रः ।।<sup>21</sup>

### कुर्मपुराण

सप्तम शताब्दी में रचित इस पुराण में रामकथा से सम्बन्धित कई सामग्री उपलब्ध होती हैं। इसमें राक्षसों की वंशावली का वर्णन है जिसमें विश्रवा की चार पत्नियों में से कैकसी के चार सन्तानें हुईं रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण और शूर्पणखा—

कैकस्यजनयत्पुत्रं रावणं राक्षसाधिपम् ।  
कुम्भकर्णं शूर्पणखान्तथैव च विभीषणम् ।<sup>22</sup>

अन्य की भांति इस पुराण में भी सूर्यवंश के वंशावली का वर्णन है जिसमें रामचरित्र वर्णन तथा सीता को जनकात्मजा माना गया है। जनक ने तपस्या द्वारा माता पार्वती को प्रसन्न किया। जिससे माता पार्वती ने सीता को उन्हें प्रदान किया और भगवान् शिव ने एक अद्भुत धनुष दिया—

तपसा तोषिता देवी जनकेन गिरीन्द्रजा ।  
प्रायच्छज्जानकीं सीतां रामेवाश्रितां पतिम् ।  
प्रीतश्च भगवानीशत्रिशूली नीललोहितः ।  
प्रददौ शत्रुनाशार्थं जनकायाद्भुतं धनुरु ।<sup>23</sup>

इसमें भी राम को विष्णु का अंश माना गया है जो रावणवध हेतु अवतीर्ण हुए—जज्ञे रावणनाशार्थं विष्णुरंशेन विश्वभुक् । इसमें राम— रावण— युद्ध के पश्चात् राम के द्वारा सेतु के मध्य में शिवलिङ्ग की स्थापना करने का उल्लेख है— सेतुमध्ये महादेवमीशानं कृत्तिवाससम् और इसके दर्शनमात्र से सभी पाप नष्ट हो जाएंगे— दर्शनादेव लिङ्गस्य नाशं यान्ति न संशयः । पतिव्रतोपाख्यानमें माया सीता के हरण का वृत्तान्त है। इसमें पतिव्रता स्त्रियों के धर्म एवं कर्तव्य का वर्णन किया गया है। यहां सीता अग्निदेव का आह्वाहन करती हैं। अग्निदेव प्रकट होकर माया सीता की रचना करते हैं। वह रामप्रिया सीता को अपने साथ लेकर अग्नि में ही अन्तर्धान हो जाते हैं—

सृष्ट्वा मायामयीं सीतां रावणवधेच्छया ।  
सीतामादाय रामेष्टां पावकोऽन्तरधीयत ।।<sup>24</sup>

पुनः अग्नि परीक्षा के समय अग्निदेव सीता को सम्मानपूर्वक राम को सौंपते हैं, जो इतने समय तक माता पार्वती के पास सुरक्षित थीं—

भवानीश्वरे गुप्ता माया रावणकामिता ।।<sup>25</sup>

### अग्निपुराण

अग्निपुराण की रचना 800 ई० के पश्चात् की गई है। किन्तु इसकी कुछ सामग्री बाद की है। इस पुराण में वाल्मीकि —रामायण के सात काण्डों की अत्यन्त संक्षिप्तरामकथा वर्णित है। इसमें राम के अत्याचार से पीड़ित मन्थरा राम को वन भेजने की इच्छा रखती है—

पादौ गृहीत्वा रामेण कर्षिता सापराधतः ।  
तेन वैरेण सा रामवनवासश्च काङ्क्षति ॥<sup>26</sup>

इसलिए वह कैकेयी से कहती है कि वह भरतकी, मेरी और स्वयं की रक्षा करें— बालिशे रक्ष भरतमात्मानं मां च राघवात् ।<sup>27</sup> इसमें भी कहा गया है कि रावणादि के वध हेतु श्रीहरि स्वयं चार रूपों में अवतरित हुए— रावणादेर्वधाय चतुर्धाभूत्स्वयं हरिः ।<sup>28</sup> इसमें भी सीता को अयोनिजा माना गया है— वीर्यशुल्कां स जनकः सीतां कन्यां त्वयोनिजाम् ।<sup>29</sup> दशावतार प्रतिमालक्षण के वर्णन में भी रामावतार का उल्लेख है। उनके रामावतार स्वरूप का वर्णन इस प्रकार है—

रामः चापेषुहस्तः स्यात्खड्गी परशुनान्वितः ॥  
रामश्चापि शरी खड्गी शङ्खी वा द्विभुजः स्मृतः ।<sup>30</sup>

इसी प्रकार अन्य महापुराणों में भी इक्ष्वाकु वंश की वंशावली का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु कथावस्तु के कुछ प्रसङ्गों में अन्तर होता है। वंशानुकीर्तन तो सभी पुराणों का एक लक्षण ही है— वंशानुकीर्तनं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम् ।

### सन्दर्भ

1. हरिवंशपुराण-1/1/6
2. हरिवंशपुराण-2/3/18
3. हरिवंशपुराण-2/93/8
4. हरिवंशपुराण-1/15/2-38
5. हरिवंशपुराण-1/54/26-56
6. हरिवंशपुराण-3/60/35.3/76/24.3/132/94
7. विष्णुपुराण-4/1-7
8. विष्णुपुराण- 4/4/28
9. विष्णुपुराण- 4/4/93
10. विष्णुपुराण- 4/5/28
11. विष्णुपुराण- 1/12/4
12. वायुपुराण, उत्तरार्द्ध-26/5-212
13. वायुपुराण, उत्तरार्द्ध-26/184-185



14. वायुपुराण, उत्तरार्द्ध-27/15
15. वायुपुराण, उत्तरार्द्ध-27/17
16. भागवतपुराण-9/10/7
17. भागवतपुराण-9/1-12
18. भागवतपुराण-9/10/2
19. भागवतपुराण-9/10/9
20. भागवतपुराण-9/11/9-10
21. भागवतपुराण-2/7/24
22. कुर्मपुराण, पूर्वविभाग-19/11-12
23. कुर्मपुराण, पूर्वविभाग-21/19-21
24. कुर्मपुराण, उत्तरार्द्ध- 34/126
25. कुर्मपुराण, उत्तरार्द्ध- 34/136
26. अग्निपुराण- 6/8
27. अग्निपुराण- 6/12
28. अग्निपुराण- 5/4
29. अग्निपुराण- 5/11
30. अग्निपुराण- 49/5-6

## निराला की रचनाओं में काव्य वैभव

डॉ० किरण कुमारी \*

### सारांश

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला छायावाद के कवि चतुष्टय में से एक हैं। उनके व्यक्तित्व की भास्वरता, प्रखरता और दीप्ति से एक बार सम्पूर्ण हिन्दी जगत् चमत्कृत हो गया। वे चमत्कार के कवि नहीं थे, लेकिन उनकी हर नयी रचना पाठकों को अपनी मौलिकता से केवल अभिभूत ही नहीं करती थी, बल्कि झकझोर देती थी, चमत्कृत कर देती थी। निराला आजीवन संघर्षरत रहे। इसलिए उनके काव्य में एक आग है, एक तेज है, एक ऊष्मा है। निराला ने जो कुछ लिखा जीवन के श्रमस्वेद से उसे सिक्त करके ही लिखा। इन्होंने उत्तमोत्तम छायावादी और प्रगतिवादी रचनाएँ लिखीं। ये काव्य और जीवन में भी किसी बन्धन को स्वीकार नहीं करते थे। छन्द के बन्धन तोड़कर हिन्दी में इन्होंने मुक्तछन्द का प्रारम्भ किया।

**संकेताक्षर** : महाप्राण, तेजोदीप्त, महामानव, आदर्श, मुक्त छन्द, मुक्ति धर्मा, जीवन-संघर्ष, काव्य प्रतिभा, शक्तिपूजा, शोकगीत, आत्मसम्बोधन, मनुष्यता।

महाप्राण निराला एक तेजोदीप्त व्यक्तित्व लेकर हिन्दी कविता में आविर्भूत हुए। सच्ची बात तो यह है कि निराला का सर्वथा मुक्त ऊर्ध्वस्वित व्यक्तित्व किसी वाद वृत्त में घिरा रह ही नहीं सकता था। ऐसा भी कह सकते हैं कि निराला से वाद थे, वाद से निराला नहीं थे। महाप्राण निराला सचमुच हिन्दी साहित्य के शिव थे जिन्होंने आमरण अननुकूल परिस्थितियों का गरल पिया और समाज को काव्यामृत प्रदान करते रहे। कबीर के बाद निराला दूसरे कवि हैं जिनके लेखन और जीवन में कहीं कोई अलगाव नहीं है। राम विलास शर्मा लिखते हैं—“निराला के गीत तराशे हुए, विवेक को साधकर रचे हुए गीत हैं, वे भावोद्गार मात्र नहीं हैं। उनमें जल की तरलता नहीं, हीरे की-सी कठोरता और भीतरी दमक है।”<sup>1</sup>

आदर्श की बातें करना एक बात है, आदर्श पर चलना दूसरी बात है और आदर्श हो जाना तीसरी और सर्वथा मौलिक बात है। कविताएँ तो आदर्श हुआ ही करती हैं, मगर प्राणवान् तभी हुआ करती हैं, जब उनका कवि आदर्श हो। कहना न होगा कि निराला स्वयं आदर्श थे, उनकी रचनाएँ आदर्श हैं। चाहें तो कह सकते हैं कि उनकी रचनाओं में उनका व्यक्तित्व ही प्रतिबिम्बित हुआ है। निराला 'गद्य में पद्य में समाभ्यस्त' हैं। 'अनामिका', 'अपरा', 'बेला', 'कुकुरमुत्ता' और 'सांध्य काकली' का प्रणेता प्रतिभापुंज है। महाकवि निराला अपनी क्रान्तिदर्शी दृष्टि की मौलिकता में अनन्य हैं। वे नवीनता के प्रबल आग्रही

\* सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

हैं। गंगा प्रसाद पाण्डेय के शब्दों में—“बस, मुक्त छन्द, मुक्त भाषा यही निराला की मुक्त साधना है। प्राचीनों ने इसका विरोध किया है, माखौल उड़ाया है, यह कहने की आवश्यकता नहीं। ..... नवीनों से भी निराला को निबटना पड़ा है, क्योंकि नवीनता के घोर उपासक निराला की ‘भिखारी’, ‘बादल’ और ‘वह तोड़ती पत्थर इलाहाबाद के पथ पर’ जैसी प्रगतिशील कविताओं के साथ अपने अपने को प्रगतिवादी कहने वाले साहित्यिक किसी अध्यात्म की आकुलता देखने को तैयार नहीं हैं, क्योंकि जीवन से परे मनुष्य की किसी अन्य आध्यात्मिक विचारधारा का उनके पास कोई महत्त्व नहीं है। कवि की सौन्दर्यानुभूति के निरपेक्ष सिद्धान्त को वे स्वीकार नहीं करते।”<sup>2</sup> जो कुछ नया है वह उनका काम्य है। माँ सरस्वती से वह केवल नव्यता की मांग करते हैं –

*‘नव गति, नव लय, ताल-छन्द नव,  
नवल कण्ठ, नव जलद-मन्द्र रव,  
नव नभ के नव विहग-वृन्द को नव पर, नव स्वर दे।’<sup>3</sup>*

निराला मुक्तिधर्मा हैं। बन्धन चाहे मनुष्य पर हो या छन्द पर निराला उसे तोड़ने के लिए सन्नद्ध, प्रतिबद्ध हैं। मुक्त छन्द में निराला जी ने जहाँ एक ओर ‘जुही की कली’ जैसी कोमल कल्पना को विशिष्ट रचना दी है, वहीं ‘जागो फिर एक बार’ जैसे उदात्त वीर-रस का काव्य भी दिया है। उनके मुक्त काव्य में स्वच्छन्द कल्पना का अत्यन्त सहज प्रवाह है। काव्य का अति प्राचीन काल से चले आ रहे छन्द-बन्ध से छूटना हिन्दी में एक स्मरणीय घटना है। इसका श्रेय पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला को जाता है। भले ही उनका चतुर्विध विरोध हुआ। नन्ददुलारे वाजपेयी जी लिखते हैं—“निराला की प्रतिभा में सीमाओं को अतिक्रान्त करने का गुण विद्यमान है, परन्तु उसके साथ ही उनका एक जीवन-दर्शन तथा एक रचना विधि भी है जो बहुत कुछ समरस बनी रही।”<sup>4</sup> निराला ने छन्दों के बन्ध खोल दिए। छन्दों की कैद में अपार, आकुल अभिव्यक्ति लिए छटपटाती कविता-कामिनी को इन्होंने अभिव्यक्ति का नया आकाश प्रदान किया। कवि ने आह्वान किया—

*‘तोड़ो तोड़ो, तोड़ो कारा।  
पत्थर की, निकलो फिर, गंगा जल धारा।’<sup>5</sup>*

हिन्दी में मुक्तछन्द का इन्होंने न केवल प्रारम्भ किया, बल्कि उसे एक निश्चित विकास सीमा तक भी पहुँचाकर उसका काव्यगत औचित्य सिद्ध कर दिया। वे एक अच्छे शास्त्रविद थे, और कविता में छन्द, तुक, लय, गति, यति आदि की उपयोगिता खूब मानते थे। इसलिए मुक्तछन्द को प्रस्तुत करते हुए उन्होंने उसकी शास्त्रीय व्याख्या भी की। निराला ने छन्द-बन्धों की लद्दड़ता तोड़ी, उसकी शास्त्रीयता नहीं। इसीलिए कवि के मुक्त छन्दों में भी जो लयात्मकता है, वह अप्रतिम है। उदाहरण के लिए अतिख्यात ‘जुही की कली’

की ये पंक्तियों द्रष्टव्य हैं—

“निर्दय उस नायक ने  
निपट निठुराई की  
कि झोंकों की झड़ियों से  
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,  
मसल दिए गोरे कपोल गोल।”<sup>6</sup>

निराला प्रेमिल प्रसंगों के परिपक्व कवि हैं। इनका प्रेम शरीर की सीमा ही पर ठमक, ठिठुर रहने वाला नहीं अपितु आत्मा की ऊँचाई तक पहुँचनेवाला है। प्रेम इन्हें वह शक्ति देता है जिसके सामने दुनिया भर की शक्ति भी कमतर सिद्ध होने लगती है। प्रेम पूर्ण समर्पण चाहता है और अपनी पूर्णता में वहाँ लीन होने पर फिर दुनिया की परवाह भी कहाँ रह जाती? निराला निश्शंक कहते हैं—

‘देखें केवल उर में  
सुनें सब कथा परिमल सुर में  
जो चाहे, वे कहें!’

प्रेम जाति, वर्ग, वर्ण सबके ऊपर है। इसकी लाली में रंग जाने पर दुनिया का कोई भी रंग बेअसर हो जाता है। बड़ी ईमानदारी से कबीर ने कहा था—

‘लाली देखन में गई मैं भी हो गई लाल।’

फिर निराला भी कितना दो-टूक कहते हैं—

‘मानव मानव से नहीं भिन्न  
निश्चय, हो श्वेत, कृष्ण अथवा  
वह नहीं विलिन्न;  
भेद कर पंक  
निकलता कमल जो मानव का  
वह निष्कलंक  
हो कोई सर।’<sup>6</sup>

निराला का प्रेम अन्य छायावादियों की तरह अनावश्यक रूप से रहस्यात्मक नहीं है, वह मानवतावादी है और जीवन से ऊष्मायित है।

अपने गीतों में निराला ने अपने को ही व्यक्त किया है। महादेवी ने दुःख पाला है, प्रसाद ने छील छील कर फोड़े फोड़े हैं, पंत ने ग्रन्थियाँ गूँथी हैं पर निराला ने दर्द का दोहन किया है। निराला दुःख में ही दुःख का अन्त

ढूँढते हैं, वह उनके लिए ऋणात्मक नहीं धनात्मक वस्तु है। कवि ने दुःख को जिया है उसका प्रदर्शन नहीं किया है। कभी जब पीड़ा चरम पर पहुँचती है और शब्द लेना चाहती है तब भी निराला इतना ही भर कहते हैं—

*“दुःख ही जीवन की कथा रही  
क्या कहूँ आज, जो नहीं कही।”<sup>9</sup>*

कवि का समग्र जीवन सघन संघर्ष में बीता है। कहते हैं प्रतिभा तनाव में प्रोद्भाषित होती है। निराला की प्रतिभा इसलिए अनन्य है, क्योंकि उसने तनाव की अद्भुतता देखी है। कवि जीवन के बहुविध मोर्चों पर युद्ध करते हुए कई जगहों से घायल हो गया है। विडंबना तो है कि यह सरस्वती पुत्र युद्ध भी बिना छल के करता है और लोग हैं कि ओट लेते हैं ढाल से अपने को ढकते हैं।

1935 में लिखी ‘सरोज—स्मृति’ निराला को श्रेष्ठ कविताओं में आती है। इसे हिन्दी का पहला शोक गीत माना जाता है। लेकिन यह सिर्फ शोक गीत की सीमाओं में बंधने वाली कविता नहीं होकर निराला के जीवन के हर दर्द, हर दुःख को अपने अन्दर समाहित करने वाली कविता है। निराला ने इस कविता में अपने दुःख की, अपनी इकलौती बेटी के मौत की पीड़ा को मानवीय संघर्ष के साथ जोड़ा है। निराला के जीवन का सारा संघर्ष इस कविता में एक हृदय विदारक वेदना के रूप में उमड़ आया है। उनकी मुक्त छंद विषयक रचनाओं का प्रकाशकों द्वारा लौटाया जाना, साहित्यिकों के व्यंग्य—वाण, सरोज के पालने से लेकर, राज यक्ष्मा का इलाज कराने में कवि की अपनी आर्थिक विपन्नता के कारण असमर्थता और उसकी असमय मृत्यु, अर्थोपार्जन के तरीके जानते हुए भी—

*‘जाना तो अर्थागमोपाय,  
पर रहा सदा संकुचित—काय  
लख कर अनर्थ आर्थिक पथ पर  
हारता रहा मैं स्वार्थ—समर।’<sup>10</sup>*

कभी नहीं अपनाते से लेकर सरोज के बचपन से लेकर उसका विवाह तथा कान्य कुब्ज समाज की कुरीतियों के लिए कोसना—

*‘सोचा मन में हत बार—बार—  
“ये कान्यकुब्ज—कुल कुलांगार  
खाकर पत्तल में करें छेद,  
इनके कर कन्या, अर्थ खेद,  
इस विषय—बेलि में विष ही फल,  
यह दग्ध मरुस्थल—नहीं सुजल।’<sup>11</sup>*

आदि निराला के जीवन की गाथा है जिसे स्वयं ही उन्होंने दुख की कथा के रूप में स्वीकारा है। ए० अरविंदाक्षन लिखते हैं—“पुत्री—वियोग की उत्तम व्यथा को; अपनी मानसिक पीड़ा को वे व्यक्त करते ही हैं, पर उसे उन्होंने महिमा—मंडित नहीं किया है। व्यथा के यथार्थ को निराला ने इस प्रकार व्यक्त किया है कि वह प्रत्येक वाचन के अवसर पर व्यथा के निरन्तर गहराते जाने का अनुभव भी होता है और व्यथा के अन्यान्य पक्षों में विवृत होने का अनुभव भी होता है। अतः ‘सरोज स्मृति’ व्यथा की अभिव्यक्ति है और व्यथा के यथार्थ की भी अभिव्यक्ति है।”<sup>12</sup> सरोज स्मृति में वस्तुतः अनेक स्मृतियों का आकलन है। निराला का स्वार्थ समर में हारना और इसके लिए अपने को निरर्थकता से जोड़ना ही उनकी पहचान है। यही कारण है कि कवि कहीं—कहीं निराशा के स्वर व्यक्त करने लगता है—

‘मैं अकेला  
देखता हूँ  
आ रही  
मेरे दिवस की सांध्यवेला।’<sup>13</sup>

पर सत्वर वह संभलता है। अन्यायियों, दगाबाजों को दुतकारते हुए अपनी अन्तर्शक्ति का उद्घोष करता है—

‘अभी न होगा मेरा अंत  
अभी अभी ही तो आया है  
मेरे वन में मृदुल वसन्त।’<sup>14</sup>

निराला की रचनाओं में चुभता हुआ व्यंग्य प्रचुर मात्रा में प्राप्त है। ‘गर्म पकौड़ी’ कविता की ये पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

‘गर्म पकौड़ी, ऐ गर्म पकौड़ी  
अरी तेरे लिए छोड़ी  
बम्हन की पकायी  
मैंने घी की कचौड़ी  
पर दाढ़ तले तुझे दबा ही रक्खा मैंने  
कंजूस ने ज्यों कौड़ी।’<sup>15</sup>

‘कुकुरमुत्ता’ कवि का बहुप्रशंसित व्यंग्यप्रधान काव्य है, जिसमें कवि ने गुलाब को शोषक का प्रतीक और कुकुरमुत्ता को शोषित का प्रतीक माना है। कवि ने यह सिद्ध किया है कि गुलाब के दिन लद गए। अब उपादेयता है तो कुकुरमुत्ता की। जनकवि निराला गुलाब को ललकारते हैं—

*'अबे सुन बे गुलाब!  
भूल मत गर पाई खुशबू रंगोआब  
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट  
डाल पर इतरा रहा कैपिटलिस्ट।'<sup>16</sup>*

'राम की शक्तिपूजा' विश्व की कुछ श्रेष्ठ कविताओं में परिगणनीय है। निराला ने इस दीर्घ कविता में शक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध की है। कवि कहना चाहता है कि स्वतंत्रता—प्राप्ति के लिए हमें शक्ति की सिद्धि करनी होगी। निराला के राम की सर्वप्रमुख चिन्ता लंका की कैद से सीता को मुक्त करना है। वे कहते हैं—

*'जानकी, हाय उद्धार प्रिया का हो न सका।'<sup>17</sup>*

'राम की शक्तिपूजा' निराला की काव्य—प्रतिभा का उनकी काव्य—शक्ति का प्रमाण तो है ही, हिन्दी के शक्ति काव्य का प्रतिमान भी है। निराला ने इस कविता में जीवन के शक्तिमय रूप की प्रतिष्ठा की है। 'राम की शक्तिपूजा' कवि के अन्तर्मन का संघर्ष है जो सत् और असत् के बीच सदियों से चलता आ रहा है। 'शक्ति की करो मौलिक कल्पना' महाप्राण निराला का आत्मसम्बोधन है, जिसे वे 'राम की शक्तिपूजा' में साकार करते हैं। राम के व्यक्तित्व में निराला का स्वयं का व्यक्तित्व है। राम का संशय निराला का संशय है, राम की पराजय निराला की पराजय है, फिर वह राम का एक मन जो थका नहीं निराला का अपराजेय व्यक्तित्व है मन की दृढ़ता है जो कि विषम से विषम परिस्थिति में भी थकता नहीं है। हार कर भी हारता नहीं। जो हर परिस्थिति में, हर दीनता में, जय प्राप्त करने की शक्ति रखता है। यही महाप्राण निराला की महाप्राणता है। निराला के शब्दों में—

*"वह एक और मन रहा राम का जो न थका,  
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय  
कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय,  
बुद्धि के दुर्ग पहुँचा विद्युत गति हतचेतन  
राम में जगी स्मृति, हुए सजग पा भाव प्रमन।'<sup>18</sup>*

जैसे ही राम के मन में स्मृति कौंधी उन्हें उपाय मिल गया। यह निराला का मन है जो दीनता नहीं जानता, किसी के सामने झुकना नहीं जानता। निराला यहाँ यही बताना चाहते हैं कि जीवन—समर में वही व्यक्ति जीत सकता है जो अपने बुद्धि विवेक को हमेशा जागृत रखे। परिस्थिति चाहे जितनी भी कठिन हो कोई न कोई उपाय निकल ही आता है। अंत में राम शक्ति की सिद्धि करते हैं और महाशक्ति उन्हें आशीर्वाद देती है—

*'होगी जय होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।'<sup>19</sup>*

डॉ० बुद्धसेन नीहार लिखते हैं—“कवि जनकल्याण के सर्जन में रत हो जाते हैं। ‘कुकुरमुत्ता’, ‘अणिमा’, ‘बेला’, ‘नये पत्ते’ इसी मनोवृत्ति का प्रतिफलन है। ‘अर्चना’ और ‘आराधना’ में भी कवि जनसाधारण को विस्मृत करने में असमर्थ है।”<sup>20</sup> निराला देशवासियों को जगाते हुए ओज का शंखनाद करते हैं—‘जागो फिर एक बार।’ अपनी संस्कृति पर निराला को गौरव है। वे स्पष्ट कहते हैं—

“योग्य जन जीता है,  
पश्चिम की उक्ति नहीं—  
गीता है, गीता है—  
स्मरण करो बार बार।”<sup>21</sup>

निराला सर्वहारा के सच्चे साथी हैं। वे पूरे प्राण से चाहते हैं कि शोषण का उन्मूलन हो और शोषितों के जीवन में सुख का प्रभात खिले। फटी-पुरानी झोली लिए फटी-फटी कातर आँखों से टुकटुक ताकते, भीख माँगते मनुष्य को देखकर जैसे महाप्राण निराला का कलेजा फटने-फटने को हो आता है। वे भिक्षुक का कारुणिक चित्र उपस्थित करते हैं—

‘पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक,  
चल रहा लकटिया टेक।’<sup>22</sup>

निराला मूकद्रष्टा नहीं हैं और गरीबों के प्रति सहानुभूति की औपचारिकता नहीं जताते। वे समानुभूति के कवि हैं। तभी तो ‘तोड़ती पत्थर’ कविता में उस श्रमिका के हथौड़े की मार केवल पत्थर पर नहीं पड़ती, बल्कि सामने वाली शोषण की नींव पर खड़ी अट्टालिका पर भी पड़ती है—

‘गुरु हथौड़ा हाथ  
करती बार बार प्रहार—  
सामने तरूमालिका, अट्टालिका, प्राकार।’<sup>23</sup>

निराला बादलों के कवि हैं। बादलों के प्रति उनका सम्मोहन अकारण नहीं है। कवि कृषक-पुत्र है और बादल कृषक-प्राण, फिर स्नेहिल सम्बन्ध कैसे नहीं होगा। इन्हें बादल का वह रूप अतीव प्रिय है जो वर्ष के हर्ष का आधार है। बादल की अलमस्ती, उत्सुकता, संगीतप्रियता और सबकुछ दे देने की प्रवृत्ति निराला के अपने व्यक्तित्व में भी सन्निहित है। निराला उस बादल को आमंत्रित करते हैं—

‘झूम झूम मृदु गरज गरज घनघोर  
राग अमर अम्बर में भर निज रोर।’<sup>24</sup>



मगर निराला का विद्रोही व्यक्तित्व सम्पूर्ण माधुर्य के बावजूद बादल की विप्लवकारी प्रवृत्ति की भर्त्सना करता है। वैसे बादल को निराला 'अन्ध-तम-अगम-अनर्गल-बादल' कहने में थोड़ा भी नहीं हिचकते।

निराला के काव्य में अनलंकृत अलंकृत जिस भी रूप में प्रकृति आई है सहज सम्मोहक है। वसन्त निराला का प्रिय मौसम है। निराला पतझड़ पीड़ित पत्र-हीन रूखी डाल में भी बासन्ती परिधान की परिकल्पना कर लेते हैं—'रूखी री यह डाल, वसन बासन्ती लेगी' और जब बसन्त आ जाता है तब तो कवि का गीत-कोकिल कूक ही पड़ता है—

*'सखि, वसन्त आया।  
भरा हर्ष वन के मन, नवोत्कर्ष छाया।'<sup>25</sup>*

निराला जितने बड़े कवि हैं उतने बड़े शिल्पी भी। इनके भाव एकदम निजी हैं, अपूर्व हैं, तो शैली भी परम्परित नहीं सर्वथा मौलिक, स्वयं निर्मित है। निराला ने स्पष्ट कहा है—'मैंने मैं शैली अपनायीं।' एक ओर—

*'आज का तीक्ष्ण-शर-विधृत-क्षिप्र कर, वेग-प्रखर  
शत-शेल-संवरण-शील, नील-नभ-गर्जित-स्वर'<sup>26</sup>  
जैसी तत्समनिष्ठ सामासिक भाषा मिलती है तो दूसरी ओर—  
'चाट रहे वे जूठी पत्तल कभी सड़क पर खड़े हुए,  
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।'<sup>27</sup>  
जैसी सरल सुबोध भाषा भी सहज मिल जाती है।*

कविता में संगीततत्त्व की जितनी सुंदर योजना निराला ने की है वह अन्य कवियों में शायद ही मिले। 'गीतिका' के गीत गेय हैं और शास्त्रीयता लिए हुए हैं। निराला बिम्बों और प्रतीकों की योजना में भी मौलिक हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है. —

*'वे किसान की नई बहू की आँखें  
हरीतिमा में बैठे हों दो विहग बन्द कर पाँखें।'<sup>28</sup>*

सच कहा जाय तो क्या भाव, क्या भाषा, सब में निराला—निराला हैं। निराला की सर्वोच्चता का कारण यह है कि निराला ने अपने को जन से जोड़कर रखा। उन्होंने वही लिखा जिसकी अनुभूति वे पूरे प्राण से कर पाए। निराला स्वयं कहते हैं—

*'जनता के हृदय जिया  
बन्दीगृह वरण किया।'*

और यह महाकवि आज भी जनता के मन-मन्दिर में काव्य-देवता के रूप में प्रतिष्ठित हैं और रहेगा-

“यह सच है  
तुमने जो दिया दान-दान वह,  
हिन्दी के हित का अभिमान वह,  
जनता का जन-ता का ज्ञान वह,  
सच्चा कल्याण वह अथच है -  
यह सच है।”<sup>29</sup>

### निष्कर्ष

जैसे यह सच है वैसे ही निराला की महाप्राणता सच है। वह स्वयंसिद्ध है। उनके जीवन की गाथा साहित्यकारों के लिए पठनीय है, मननीय है। निराला का स्वयं का जीवन दर्द की वह अनकही दास्तान है जो हमें मनुष्यता का असाधारण पाठ सहज ढंग से हृदयंगम करा देती है। सबसे पहले मनुष्य बनना आवश्यक है। मनुष्य वो जो दूसरों से, दीनों से, दलितों से, भिक्षुकों से, श्रमिकों से स्वयं को इतर न समझे। वह भी उनमें से एक है यह ज्ञान उसे अहंकार के चंगुल से बचा कर रखेगा। जनहित का कार्य तो वे करते थे पर उनमें उस कार्य को करने का अभिमान नहीं था, दूसरों से स्वयं को श्रेष्ठ मानने का भाव नहीं था। वे एक महामानव का ज्वलन्त, जीवन्त उदाहरण थे। स्वयं निराहार रहकर भी जो अतिथि का स्वागत सत्कार यथाशक्ति करना चाहे ऐसे कितने जन आज शेष हैं। निराला की उदारता, महानता, काव्य प्रवीणता के सम्मुख साहित्यकार समुदाय नतमस्तक है। ऐसे महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के साहित्य का पुनर्पाठ भागीरथी में पुण्य स्नान सरीखा पवित्र और आह्लादित करता है।

### संदर्भ

1. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 34.
2. पाण्डेय गंगा प्रसाद, महाप्राण निराला, साहित्यकार-संसद, प्रयाग, संस्करण 1949, पृ० 348-349.
3. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 75.
4. वाजपेयी नन्ददुलारे, कवि निराला, वाणी वितान प्रकाशन वाराणसी, संस्करण 1965, पृ० 202.
5. सं० नवल नंद किशोर, निराला रचनावली-1, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1998, पृ० 360.
6. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 49.

7. टीकाकार ज्ञानानंदजी साध्वी, कबीर साखी दर्पण, श्री कबीर ज्ञान प्रकाशन केन्द्र, गिरिडीज, झारखण्ड, सं० 2012, पृ० 234.
8. सं० नवल नंदकिशोर, निराला रचनावली-1, तृतीय संस्करण 1998, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 339.
9. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 91.
10. वही, पृ० 80.
11. वही, पृ० 88.
12. सं० अरविंदाक्षन डॉ० ए०, निराला एक पुनर्मूल्यांकन, आधार प्रकाशन, हरियाणा, 2006, पृ० 109-110.
13. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 128.
14. वही, पृ० 128.
15. शाह रमेशचन्द्र रचनाकार सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 2010, पृ० 127.
16. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2003, पृ० 145.
17. वही, पृ० 103.
18. वही, पृ० 103.
19. वही, पृ० 104.
20. नीहार डॉ० बुद्धसेन, विश्वकवि निराला, रीगल बुक डिपो, दिल्ली, संस्करण, 1975, पृ० 151.
21. निराला, परिमल, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण, 1978, पृ० 158.
22. वही, पृ० 103.
23. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2023, पृ० 119.
24. निराला, परिमल, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण, 1978, पृ० 158.
25. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2023, पृ० 44.
26. वही, पृ० 92.
27. निराला, परिमल, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण, 1978, पृ० 103.
28. सं० नवल नंदकिशोर, निराला रचनावली-1, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1998, पृ० 363.
29. निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-1978, पृ० 67.

## शोध को उपयोगी एवं जीवंत बनाए रखने में शोध समस्या के निरूपण का महत्व

डॉ० कृष्णा नंद चतुर्वेदी \*

### सारांश

प्रायः कुछ सामाजिक घटनाएँ ऐसी होती हैं जिसका अध्ययन प्रायोगिक अनुसंधान द्वारा संपन्न नहीं हो सकता उदाहरण स्वरूप – किसी अपार जन समुदाय के लोगों का व्यवहार, सामाजिक संस्थाओं, नेतृत्व, व्यक्तित्व, संस्कृति, अभिवृत्ति, निष्पत्ति, शैक्षिक उपलब्धि तथा मानसिक ग्रंथि आदि। इन क्षेत्रों की विषय सामग्री के स्वरूप का अध्ययन तथा शोध समस्या का चिन्हीकरण बड़ी सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए ऐसा करने के कई लाभ प्राप्त हो सकते हैं शोध से प्राप्त निष्कर्ष प्रायः विश्वसनीय होंगे एवं जो वैज्ञानिक भविष्य कथन को प्रमाणिक बना सकते हैं। आधुनिक युग की प्रगति एवं विकास का मूल कारण अनुसंधान है। बढ़ते ज्ञान की प्रकृति एवं स्वरूप की सत्यता समझने का एकमात्र उपाय अनुसंधान ही होता है कार्ल पियर्सन ने कहा है—“ सत्य तक पहुंचने के लिए कोई निश्चित मार्ग नहीं है वैज्ञानिक पद्धति द्वारा ही मनुष्य यथार्थ को ज्ञात कर सकता है”। शोध प्रक्रिया के प्रथम सोपान में समस्या का चयन सतर्कता पूर्वक की जानी चाहिए अन्यथा शोध कार्य में अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं तथा बाध्य होकर शोधकर्ता निराश हो जाता है। समस्या चयन में जितना ही अधिक गहन अध्ययन तथा बौद्धिक प्रयास किए जाते हैं उतनी ही सुविधा तथा सहायता वैज्ञानिक अनुसंधान में प्राप्त होती है। समस्या के निरूपण के संदर्भ में शोधार्थी को यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि आवश्यकता की अनुभूति समस्या के लिए संभावित समाधान के बारे में सोचना, संभावित समस्या का परीक्षण करना तथा परीक्षण के आधार पर निष्कर्ष निकालना, इन चारों सोपानों का उसे अनुसरण करना पड़ेगा जिसके लिए वह पद्धति के रूप में आगमन तथा निगमन दोनों को प्रयोग में ला सकता है। पद्धति चयन में वह स्वतंत्र है किंतु कारण तथा प्रभावों का संबंध स्पष्ट करके ही अवधारणाओं तथा उपकल्पनाओं को पुष्ट किया जा सकता है।

**संकेताक्षर :** समस्या निरूपण, अन्वेषण, उपकल्पना, वैज्ञानिक शोध, उपकल्पना के परिक्षेत्र का निर्धारण, आश्रित एवं अनाश्रित चर, निदर्शन प्रणाली, प्रज्ञा आश्रित बैरियेबल, एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान, आगमन एवं निगमन विधि।

आजकल अन्य विषयों की भांति सामाजिक विज्ञान में भी शोध के गुणवत्ता पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। ऐसा किया जाना उचित भी है क्योंकि नवीन ज्ञान की उपयोगिता उसके सार्थकता में ही है। जितना शोध का

\* एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, राजनीति शास्त्र, स्वामी सहजानंद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर

सरोकार बड़ा होगा उतना ही बड़ा उसका प्रभाव क्षेत्र भी होगा। अतः शोध समस्या का निरूपण शोध के कार्य को सरल बनाता है। प्रत्येक शोध के क्षेत्र में समस्या निरूपण अथवा निर्धारण का विशेष महत्व होता है। यह शोध का प्रथम चरण होने के कारण शोध की सफलता की दिशा निर्धारित करने वाला है। समस्या निरूपण के महत्व को सामान्य शब्दों में समझा जाए तो वैज्ञानिक खोज एक ऐसा कार्य है जो समस्याओं के समाधान की ओर परिचालित होता है।<sup>1</sup> वास्तव में समस्या के समुचित निर्धारण के अभाव में शोध की प्रक्रिया के आगे बढ़ने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता। यह विचार पूर्णतया सही तब हो जाता है जब व्यवहारिक अथवा सैद्धांतिक स्थिति के अंदर किसी कठिनाई का अनुभव न किया जाय। कठिनाई अथवा समस्या ही तथ्यों में से किसी ना किसी खोज को निर्देशित करती है जिसकी गुणवत्ता सामाजिक विज्ञान के संदर्भ में रिसर्च को गुणवत्ता परक बना देती हैं।

शोध प्ररचना का प्रथम चरण ऐसी समस्या का चयन है, जिसका समाधान किया जा सकता है। समस्या के निर्माण के समय इस बात का ध्यान रखा जाना अनिवार्य है कि यह अन्वेषण योग्य हो अर्थात् समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसका समाधान अनुभव आधारित तथ्यों द्वारा संभव हो। समस्या के निरूपण करते समय उसकी विषय वस्तु में क्रमबद्धता तथा तारतम्यता होनी चाहिए विशेषतः उपलब्ध साहित्य का अध्ययन आवश्यक है।

सामाजिक विज्ञान में शोध करते समय उपकल्पना या परिकल्पना जो भी नाम दिया जाए, वैज्ञानिक शोध का दूसरा महत्वपूर्ण चरण मानी जाती है। उपकल्पना दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच अनुभव मूलक संबंध का अनुमानित विवरण है। यह केवल अनुमान मात्र है जिसका परीक्षण करना अभी बाकी है। उपकल्पना अंग्रेजी के शब्द हाइपोथेसिस का हिंदी रूपांतरण है। हाइपर का अर्थ ही होता है—काल्पनिक, टेंटेटिव जबकि दूसरे का अर्थ प्रस्तावना अर्थात् स्टेटमेंट है। इस प्रकार उपकल्पना का शाब्दिक अर्थ काल्पनिक प्रस्तावना है। वह साधारणतः ऐसा कथन है जो किसी सिद्धांत, संस्कृति, उपमा या व्यक्तिगत अनुभव से प्राप्त किया जाता है परंतु इसमें कोई नई बात कही जाती है। जिसकी जांच परक की जानी है। अतः उपकल्पना से शोध का विषय निर्धारित किया जाता है। यहां यह ध्यान देने की बात है कि उपकल्पना सही है या गलत है, इसका निर्णय वास्तविक शोध के आधार पर ही किया जा सकता है। एक उपकल्पना वह सिद्धांत होती है जिसे विश्वास के साथ मान लिया जाता है ताकि इसके तार्किक परिणाम ज्ञात हो सके तथा उसकी इन तथ्यों से समानता का परीक्षण किया जा सके। जो तथ्य ज्ञात हैं अथवा शोध से पूर्व साहित्य में निर्धारित किए गए हैं। हम इसे यह भी समझ सकते हैं कि उपकल्पना एक सामान्य कारण है जिसकी प्रमाणिकता की जांच करना अभी शेष है। प्रारंभिक स्तर पर एक उपकल्पना, प्रतिभा अनुमान, काल्पनिक विचार

या सहज ज्ञान हो सकता है जिसे हम शोध का आधार बनाने जा रहे हैं। एक उपकल्पना शोध की संभावित व्याख्या अथवा समस्या के समाधान के बारे में तथ्यों को जोड़ सकती है अथवा स्वयं विनष्ट हो जाती है।<sup>2</sup>

सामाजिक घटनाओं, तथ्यों एवं समस्याओं की प्रकृति अति जटिल होती है इसीलिए वैज्ञानिक शोध में अनेक प्रकार की उपकल्पनाएं प्रयोग में लाई जाती हैं। उदाहरण के लिए अनुभाविक समानताएं बताने वाली उपकल्पनाएं, ऐसी उपकल्पनाएं जो मान्यता निषेध हो, व्यवहार प्रतिमान पर आधारित होती हैं। दूसरे प्रकार की उपकल्पनाएं जटिल आदर्श प्रारूप से संबंधित हैं ऐसी उपकल्पनाओं का निर्माण अनुभव पर आश्रित तार्किक अंतर संबंधों का परीक्षण करने हेतु संकलित की जाती हैं तथा इनका सामान्यीकरण किया जाता है।

कुछ उपकल्पनाएं विवेचनात्मक चरों में संबंध बताने वाली होती हैं ताकि समस्या के लिए उत्तरदायी विभिन्न कारकों का पता लगाया जा सके।<sup>3</sup> उक्त सैद्धांतिक एवं तथ्यपरक परिदृश्य में उपकल्पनाओं का चयन उनकी विशेषताओं के आधार पर करना चाहिए। जैसे उपकल्पना की अवधारणा स्पष्ट होनी चाहिए। इसमें भाषा संबंधी स्पष्टता होनी चाहिए। प्रत्येक अवधारणा का अर्थ सुनिश्चित एवं स्पष्ट हो, ताकि शोधार्थी सरलता से इन्हें समझ सके। उपकल्पना प्रस्तावित शोध की विशिष्ट पहलू से जुड़ी होनी चाहिए। उपकल्पना का परिसीमन इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि वह विशिष्ट तथ्यों की खोज करने में सुविधाजनक हो। एक अच्छी उपकल्पना प्रामाणिकता के संदर्भ में जांच परख तथा अनुभव आश्रित होने चाहिए।<sup>4</sup> अनुभाविक सिद्धता का गुण एक ऐसा गुण है जो शोध को सामाजिक समस्याओं से निपटने में मदद प्रदान करता है और यही उपकल्पना को सरल बना देता है।

राजनीति शास्त्र एवं अर्थशास्त्र में प्रचलित अनेक सरल उपकल्पनाएं अत्यधिक घातक होती हैं। अतः उपलब्ध प्रविधियों द्वारा उपकल्पना की जांच यदि संभव न हो तो ऐसी अव्यावहारिक उपकल्पना को छोड़ देना चाहिए।

शोध का प्रारंभ सदैव किसी समस्या अथवा प्रश्न से होता है इसलिए समस्या का सावधानी पूर्वक चयन तथा उसके समस्याग्रस्त क्षेत्र का निर्धारण भविष्य में होने वाले अनेक शोध संबंधी समस्याओं से बचा लेता है। एक गंभीर शोधार्थी वह है जो शोध की समस्या का अच्छे से निर्माण कर ले और ऐसा माना जाता है कि यह काम आधे शोध के बराबर है। अतः समस्या के निर्माण (चयन) के साथ ही उन सभी प्रश्नों से संबंधित सूचनाओं को अनुभाविक रूप से एकत्र की जानी चाहिए। प्रश्नों का आधार बौद्धिक, जिज्ञासा परक अथवा कोई व्यावहारिक समस्या हो सकता है। शोध प्रारंभ करते समय समस्या के विस्तार क्षेत्र को स्पष्ट सीमित कर लेना चाहिए अन्यथा शोध के निष्कर्ष की शुद्धता अपेक्षित परिणाम तक नहीं पहुंच पाएगी।<sup>5</sup> किसी समस्या का ठीक

निर्धारण करना समस्या से जुड़े व्यक्तियों के व्यक्तित्व पर भी निर्भर है। जैसे शोध करने वाला, शोध का उपभोग करने वाला तथा शोध से संबंधित प्रभावित होने वाले गुणयक गण या समूह। इसलिए एक वैज्ञानिक एवं जीवंत शोध के लिए यह प्रासंगिक है कि समस्याओं के अनंत भंडार से अपने चारों तरफ बिखरी पड़ी समस्याओं में से उन्ही कुछ समस्याओं का चयन करें जो पर्यावरण के संदर्भ में विशिष्ट हों अर्थात् ऐसी सामान्य श्रेणी की समस्या जो जन सामान्य तथा व्यवस्था को मूलभूत रूप से प्रभावित करने की क्षमता रखती हो।

समस्या के समाधान के बाद शोध के क्षेत्र में उपकल्पनाओं का निर्माण अत्यंत महत्वपूर्ण चरण है। उपकल्पना वैज्ञानिक शोध का एक महत्वपूर्ण चरण है जो समस्या के परिचित्रीय एवं तथ्यात्मक संकलन में मदद देती है। हम उपकल्पनाओं के बिना शोध के क्षेत्र में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते। उपकल्पना शोध का केंद्रीय बिंदु है जब शोधकर्ता किसी घटना, इकाई या समस्या का अध्ययन सभी पहलुओं को सामने रखकर नहीं कर सकता तब उसे गहन अध्ययन के लिए अध्ययन क्षेत्र को सीमित करना अनिवार्य हो जाता है।<sup>6</sup> किसी वस्तु का क्या, कितना, कब और कैसे अध्ययन करना है ? जिसके कारण अध्ययन में त्रुटियों की संभावनाएं कम रहे इसका भी ध्यान रखना पड़ता है। सामान्य शब्दों में कहें तो उपकल्पना दृष्टिहीन खोज से हमारी रक्षा करती है। हमें यह पहले ही इशारा कर देती है कि शोध को किस दिशा में आगे बढ़ाना है। जिसका परिणाम यह होता है कि व्यर्थ का परिश्रम बच जाता है और व्यय भी कम होता है। इस प्रकार उपकल्पना अध्ययन में निश्चितता लाती है। संबंध स्थापित करने, तथ्यों के संकलन में सहायक होती है, निष्कर्ष निकालने में सहायक होती है और सत्यता की खोज करने में सहायक होती है। इतना उपयोगी होने पर भी उपकल्पनाओं की सीमाएं हैं। एक तरफ यह निश्चित रूप से वैज्ञानिक शोध में पथ प्रदर्शन का कार्य करती है परंतु अगर इसका निर्माण ठीक प्रकार से नहीं किया गया तो यह पूरे निष्कर्ष को भ्रामक बना देती है।<sup>7</sup> शोध समस्या के निरूपण का महत्वपूर्ण पड़ाव है उपकल्पनाओं के संदर्भ में चरों का चयन, चर का अर्थ है—परिवर्तन होने वाले विषय या तत्व समस्या से संबंधित अनेक विषय हो सकते हैं किंतु जिस समस्या को शोधार्थी अर्थपूर्ण मानता है शोध के लिए उसी का चयन करता है चरों के चुनाव करने में कोई विशेष नियम तो नहीं है किंतु ऐसे सभी चर संकलित किए जाने चाहिए जो सामाजिक तत्वों की व्याख्या कर सकें। समाजशास्त्रीय, राजनीति शास्त्री अथवा अर्थशास्त्री अथवा समन्वयवादी दृष्टिकोण इन चरों के सापेक्ष ही निरूपित किया जाते हैं। आधुनिकीकरण का विश्लेषण करने के लिए आकांक्षाओं, वचनबद्धता, मनोबल, सार्वभौमिकता तथा निरंकुशता के मूल्यों को वेरिबल माना गया है। कुछ चर स्वतंत्र या व्याख्यात्मक होते हैं शेष चर अनाश्रित चर होते हैं अर्थात् ऐसे चर जिन्हें हम नियंत्रित कर सकते हैं। जिनके प्रभावों पर नियंत्रण रख

सकते हैं अथवा जिसे निष्कासित कर सकते हैं ऐसे समस्त चरों को राजनीतिक सहभागिता के विस्तारित फलक पर देखा जाना चाहिए।

सामाजिक शोध का प्रमुख उद्देश्य वैज्ञानिक विधि द्वारा विभिन्न प्रकार के ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना है जिनका समाज तथा विकास से किसी न किसी प्रकार का संबंध है। प्रतिवेदन, विज्ञप्ति लेखन अथवा शोध रिपोर्ट लिखना सामाजिक शोध का अंतिम एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण है। शोध का प्रारंभ जिस समस्या के निर्माण से शुरू होता है, उस समस्या को उपकल्पनाओं द्वारा विशिष्ट रूप प्रदान किया जाता है।<sup>8</sup> समस्या से संबंधित विभिन्न वैरियेबल्स का चयन किया जाता है। निदर्शन प्रणाली द्वारा सूचना दाताओं का चुनाव किया जाता है तथा विभिन्न प्रकार के उपलब्ध प्रविधियों में से उपयुक्त प्रविधि का चयन करके आंकड़ों का संकलन किया जाता है। सामाजिक शोध में अनेक एकत्रित आंकड़े अधिकांशतः गुणात्मक प्रकृति के होते हैं इसलिए कोडिंग द्वारा इनमें परिवर्तन किया जाता है वर्गीकरण तथा सारणीयन के पश्चात् सामग्री का निर्वाचन किया जाता है एवं निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इस संपूर्ण प्रक्रिया का अंत प्रतिवेदन लेखन द्वारा होता है प्रतिवेदन को इसलिए महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि इसमें सभी चरणों का विवरण दिया जाता है ताकि इसे पढ़ने वाला यह समझ सके की लेखक या शोधकर्ता क्या कहना चाहता है। इस प्रकार शोध की समस्याओं का चिन्हीकरण एवं निरूपण करते समय यथा संभव शोधकर्ता को अपनी भावनाएं दूर रखते हुए विषयगत तथ्यों को ही चयन में प्राथमिकता देनी चाहिए जिससे प्रत्येक पाठक यह समझ सके तथा शोध की जीवंतता भी बनी रहे।<sup>9</sup>

आज विश्व में मानव मात्र के सामने जो समस्याएं हैं उनमें काफी समानता तथा अतः संबंध है जिसके कारण कुछ ऐसे अध्ययन न्याय संगत लगते हैं जैसे कि अपनी पीढ़ी के संभ्रांत, कुंठित तथा अत्यधिक महत्वाकांक्षी नवयुवकों को कैसे शिक्षा दी जानी चाहिए। आधुनिक अध्येताओं की काफी अनुभूतियां, अनिवार्य मूल्य तथा आदर्श साझे प्रतीत होते हैं जिससे प्रकट होता है कि शिक्षा के प्रति उनका एक निश्चित दृष्टिकोण है जिसे भारतीय शैक्षिक उपागम की संज्ञा दी जा सकती है। मानववादी प्रयोग दर्शन को समृद्ध करता रहा है। मनुष्य मानव चिंतन को एक आकार देता है। वह संपूर्ण ढांचा प्रदान करता है। शोध की गंभीरता को परिभाषित करते समय हमें उसे एकमात्र ऐतिहासिक या भौगोलिक या जातीय या धार्मिक अर्थ या श्रेणियों के रूप में नहीं समझना चाहिए संपूर्ण मानव जाति चाहे वह किसी भी देश व स्थान के हों, किसी भी संप्रदाय से संबंधित हों, निश्चित ही वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी, सामाजिक व सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक व आध्यात्मिक कारकों से जुड़े हुए हैं। ऊपरी तौर पर विविधताएं दिखाई देती हैं किंतु उनमें एकता घनी भूत है ऐसे में सामान्य घटक को चिन्हित करते समय समस्या का निरूपण एक शोधार्थी के लिए अत्यंत महत्व का हो जाता है।



आधुनिक भारत जहां की अर्थव्यवस्था विश्व में पांचवें नंबर से तीसरे पायदान की तरफ अग्रसारित है ऐसे में कुछ परंपरागत समाज आधुनिक समाजों में परिवर्तित हुए हैं विकास की किरणें इसके सुदूर अंचल तक विस्तृत हुई हैं आज तराई का क्षेत्र हो, बस्तर के मैदान हों या नक्सल बहुल इलाके, हर क्षेत्र में उसका अतीत विकास के साथ-साथ कुछ आधुनिक समस्याएं लेकर प्रस्तुत है। ऐसे में शोध की उपयोगिता (उत्पादकता) यह है कि उसके द्वारा सुझाए गए तथ्यात्मक निष्कर्ष पर कार्य कुशलता बढ़ाई जाए तथा अपनी निरंतर बढ़ रही भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। अंतर विषयक अध्ययन में वही शोधार्थी जीवंत बन सकता है जो मात्र भौतिक संपत्ति के संचय और भोग विलास की खोज से एक निश्चित दूरी बनाए रखकर मानवीय संवेदनाओं का गंभीर अध्येता बने। उदाहरण के लिए विद्यालय में किसी बालक को शैक्षिक प्रयोग हेतु पुस्तकों, उपकरणों आदि का अधिक भार डालना और बच्चे को उसके पूर्ण परिवेश से संबंध विच्छेद करना, उसके बालपन को मार डालने के बराबर है। अतः बालक के संदर्भ में उसके शैक्षिक परिदृश्य की समस्या का चयन करते समय इन तथ्यों पर भी सम्यक विचार कर लेना आवश्यक है।<sup>10</sup> सामाजिक विज्ञानों के संदर्भ में शोध समस्या के निरूपण में यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि इन क्षेत्रों में घटनोत्तर अनुसंधान किए जाते हैं और प्रज्ञा आश्रित (पिक्चर डिपेंडेंट) वैरिबल के निरीक्षण से जिस पर अध्ययन कार्य पहले हो चुके होते हैं पश्चात अवलोकन करने पर आश्रित चरों पर पड़ने वाले प्रभावों तथा संबंधों की पुनरव्याख्या की जाती है और यह कार्यप्रयोग तुलनात्मक पद्धति से आगे बढ़ता है।<sup>11</sup> शैक्षिक शोधकर्ता को घटना उत्तर अनुसंधान द्वारा तथ्यों की प्रकृति से संबंधित मार्गदर्शन मिलता है ऐतिहासिक शोध अतीत से वर्णनात्मक शोध वर्तमान से प्रयोगात्मक शोध वास्तविकता से संबंधित है अतः शोध समस्या के निर्धारण में शोध पद्धति का चयन विशेष महत्व रखता है। एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान तथा प्रायोगिक अनुसंधान में भी अंतर हैं<sup>12</sup> और यह अंतर परिकल्पना की रचना तथा प्रतिमानों के वैज्ञानिक स्वरूप में दिखाई देता है जबकि एक्सपोस्ट फैक्टो अनुसंधान वैज्ञानिक नहीं होता दोनों के अनुसंधान प्रक्रियाएं विभिन्न होती हैं किंतु वैरिबल्स में अपनी इच्छा अनुसार चयन करने की प्रवृत्ति से शोधकर्ता शोध की दिशा से मात्रात्मक रूप से भटक जाता है।<sup>13</sup> जब शोधकर्ता अनुभव मूलक अध्ययन के अंतर्गत यादृच्छिक आधार पर समूह को समतुल्य बनाना चाहता है तो उसे अवस्था में भी व्यक्तियों की प्रयोजकता शोध के वैरिबल्स को प्रभावित करते हैं।<sup>14</sup>

### सन्दर्भ

1. डॉ० बी०एस०, "शिक्षा तथा मानव मूल्य", 1992 हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़।
2. एडवर्ड जे०बी०, (1995) ए स्टडी आप सर्टेन मारल एटीट्यूड अमोंग बॉयज-इन ए सेकेंडरी स्कूल, लंदन, डालने तथा कैली, 1982

3. कोलबर्ग, एल० (1963) "मारल डेवलपमेंट एंड आईडेंटिफिकेशन", शिकागो, यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रेस।
4. चट्टोपाध्याय, एस०के०, (1976), के०के० मित्तल (संपादित), "सत्य अन्वेषण "नई दिल्ली, प्रोफेसर करनल अभिनंदन ग्रंथ समिति।
5. टेलर एम०एम० (1945), "प्रोग्रेस एंड प्रॉब्लम्स इन मोरल एजुकेशन "लंदन, सलफ एन०एफ०इस०आर०।
6. पीटर्स, आर० एस०, (1965) एजुकेशन एज इनीशिएशन इन अरकाम बाल, केंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1965।
7. ब्लूम, बी०एस०, (1956) टैक्सोनॉमी ऑफ एजुकेशनल ऑब्जेक्टिक्स, लंदन, लॉन्ग मेशंस पब्लिकेशन।
8. हश्रट, पी०एच० (1974), मोरल एजुकेशन इन ए सेकेंडरी स्कूल, लंदन, होडर एण्ड स्तोतन।
9. पांडे, बी०बी० (1998), शैक्षिक और सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण, 1998 वसुंधरा प्रकाशन गोरखपुर
10. कैंप बेल, डी०टी० (1963) "एक्सपेरिमेंट एंड क्वासी एक्सपेरिमेंटल रिसर्च डिजाइन फॉर रिसर्च," शिकागो, फ्रेंड मैन नेली प्रेस
11. काजलैण्ड डी०आर०, (1968) "साइकोलॉजी द एक्सपेरिमेंटल अप्रोच, न्यूयॉर्क, मैकग्रा हिल बुक पब्लिकेशन।
12. वर्मा एम०, (1965) 'एन इंट्रोडक्शन टू एजुकेशनल एंड साइकोलॉजिकल रिसर्च,' नई दिल्ली, एशिया पब्लिशिंग हाउस।
13. यंग पी०वी० (1966), "साइंटिफिक सोशल सर्विस एण्ड रिसर्च", दिल्ली, एशिया पब्लिशिंग हाउस
14. कपूर डॉ० प्रियंका, (2017) "सामाजिक शोध की पद्धतियां एवं प्रविधियां", नई दिल्ली, अर्पण पब्लिकेशन दरियागंज।

## राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : वर्तमान मुद्दे और उच्च शिक्षा के भविष्य की पुनर्कल्पना

डॉ० अरुण कुमार सिंह \*

### सारांश

29 जुलाई 2020 को प्रस्तुत की गई नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020, इक्कीसवीं सदी की पहली शिक्षा नीति है। एक विकासशील राष्ट्र के रूप में भारत के लिए उच्च शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मानव विकास को प्रोत्साहित करती है। स्वतंत्रता के बाद से भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली ने उल्लेखनीय रूप से प्रगति की है। यह नीति विशेष ज्ञान और कौशल का प्रसार करके देश के विकास में योगदान देगी। यह अध्ययन एनईपी 2020 के उच्च शिक्षा प्रणाली पर प्रभावों की जांच करने का प्रयास करता है। इसके साथ ही यह अध्ययन भारत की मौजूदा उच्च शिक्षा प्रणाली के सामने आने वाली समस्याओं और चुनौतियों पर भी प्रकाश डालता है। इस अध्ययन में प्रयुक्त डेटा द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त किया गया है, जो वर्णनात्मक रूप में हैं और अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार विश्लेषित किए गए हैं। यहां, शोधकर्ताओं ने विभिन्न पत्रिकाओं, पुस्तकों, रिपोर्टों, इंटरनेट साइटों, समाचार पत्रों आदि से डेटा एकत्र किया है। एनईपी 2020 के तहत भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली को आधुनिक बनाने का प्रस्ताव है। एनईपी 2020 भारतीय उच्च शिक्षा को काफी हद तक आगे बढ़ाएगी। एनईपी 2020 एक दूरदर्शी दस्तावेज है, जो वर्तमान सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य की गहरी समझ रखता है और भविष्य की चुनौतियों का सामना करने की क्षमता भी रखता है। यदि इसे उचित रूप से लागू किया गया तो यह 2030 तक भारत को वैश्विक शिक्षा केंद्र बना सकता है।

**संकेताक्षर :** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, उच्च शिक्षा प्रणाली, प्रभाव, समस्याएँ और चुनौतियाँ।

### प्रस्तावना

29 जुलाई 2020 को प्रस्तुत की गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020, इक्कीसवीं सदी की पहली शिक्षा नीति है। निरंतर सीखने को सुनिश्चित करने के लिए, एनईपी 2020 पांच स्तंभों पर जोर देती है—पहुंच, वहनीयता, समानता, गुणवत्ता और जवाबदेही (चंद्रा, 2021)। इसे लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार डिज़ाइन किया गया है, जो समाज और अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए नियमित रूप से नई जानकारी और कौशल की खोज करते हैं। इस नीति के अनुसार, शैक्षिक प्रणाली के सभी आयामों, जिसमें इसकी शासन प्रणाली और विनियमन भी शामिल है, का पुनः परीक्षण और सुधार किया जाना

\* एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, आजमगढ़

है। एनईपी 2020 का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी को उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा और जीवन भर सीखने के अवसर मिलें, जिससे संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों 2030 के अनुसार उपयुक्त नौकरियां और उत्पादक रोजगार प्राप्त हो सके (इनामदार और परवीन, 2020)। यह नीति प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा में बड़े बदलावों की वकालत करती है, जिससे अगली पीढ़ी को नई डिजिटल अर्थव्यवस्था में प्रतिस्पर्धा करने और सफल होने के लिए तैयार किया जा सके (ऐथल और ऐथल, 2020)। यह नीति प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और ग्रामीण व शहरी भारत में व्यावसायिक प्रशिक्षण तक के लिए एक व्यापक ढांचा प्रदान करती है। नीति का उद्देश्य 2021 तक भारत की शैक्षिक प्रणाली में व्यापक बदलाव लाना है, जिससे भारत की शिक्षा प्रणाली में बड़े परिवर्तन होंगे। इसका लक्ष्य नामांकन दर में वृद्धि करना और समानतावादी, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानकीकृत साक्षरता प्रवृत्तियों को बढ़ावा देना है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर जोर देती है, जिसमें प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा, पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र सुधार, परीक्षा प्रक्रिया में परिवर्तन और शिक्षक प्रशिक्षण पहल शामिल हैं (ऐथल और ऐथल, 2019)। नई शिक्षा नीति की परामर्श प्रक्रिया जनवरी 2015 में पूर्व कैबिनेट सचिव सुब्रमण्यम के नेतृत्व वाली एक समिति द्वारा शुरू की गई थी। समिति की रिपोर्ट के अनुसार, पूर्व भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के निदेशक कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली एक पैनल ने जून 2017 में एनईपी का प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसे 2019 में अंतिम रूप दिया गया। मानव संसाधन विकास मंत्रालय (एम.एच.आर.डी.) द्वारा परामर्श के लिए कई सार्वजनिक बैठकों के बाद 2019 का प्रारूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति (डी.एन.ई.पी.) सार्वजनिक किया गया।

एनईपी 2020 का उद्देश्य यह है कि "राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक भारत-केंद्रित शिक्षा प्रणाली की परिकल्पना करती है, जो उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करके हमारे देश को एक जीवंत ज्ञान समाज में बदलने में प्रत्यक्ष रूप से योगदान देती है" (गोयल, 2020, पृ.15)। विकासशील राष्ट्र भारत में उच्च शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मानव विकास को बढ़ावा देती है। भारतीय स्वतंत्रता के बाद, उच्च शिक्षा में जबरदस्त वृद्धि हुई है। यह विशेष ज्ञान और क्षमताओं का प्रसार करके देश के विकास को बढ़ावा देती है। इस नीति का मुख्य उद्देश्य उच्च शिक्षा संस्थानों (एच.ई.आई.) की गुणवत्ता में सुधार करना और भारत को अंतरराष्ट्रीय शिक्षा का केंद्र बनाना है (दास, 2022)। जोर एक लचीले पाठ्यक्रम की पेशकश पर है, जिसमें एक अंतर्विषयक दृष्टिकोण के माध्यम से चार वर्षीय स्नातक डिग्री में कई निकास बिंदु, अनुसंधान में तेजी, संकाय समर्थन को बढ़ावा देना और वैश्वीकरण को प्रोत्साहित करना शामिल है (दास और बर्मन, 2023)।

### उच्च शिक्षा प्रणाली में एनईपी 2020 के अनुसार महत्वपूर्ण बदलाव

क्रेडिट बैंक ऑफ अकादमिक्स-क्रेडिट आधारित प्रणाली में 'अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट' राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का एक महत्वपूर्ण घटक है। जब एक छात्र किसी कार्यक्रम में दाखिला लेता है और उसका मूल्यांकन किया जाता है, तो उसके सभी अंक या क्रेडिट उसके नाम के खिलाफ इस बैंक में जोड़े जाएंगे, जैसे किसी व्यक्ति के बैंक खाते में उसके लेन-देन की जानकारी होती है। इससे छात्र कभी भी अपने क्रेडिट की जानकारी देख और ट्रैक कर सकते हैं (गुप्ता एट अल., 2021)।

एम.फिल. कार्यक्रम का समाप्ति-नई शिक्षा नीति के परिणामस्वरूप एम.फिल. कार्यक्रम अब बंद कर दिया गया है। पहले एम.फिल. को मास्टर डिग्री के बाद की उच्च शिक्षा के रूप में माना जाता था, लेकिन अब उच्च शिक्षा प्रणाली में केवल स्नातक, मास्टर और पी-एचडी डिग्री ही उपलब्ध होंगी (गुप्ता और चौबे, 2021)।

एक वर्ष का मास्टर डिग्री कार्यक्रम-चार साल के स्नातक कार्यक्रम के बाद, जिसमें एक वर्ष का शोध कार्य भी शामिल होता है, छात्रों को एक वर्ष में मास्टर डिग्री प्राप्त करने का अवसर मिलेगा। वहीं, तीन साल के स्नातक पाठ्यक्रम पूरा करने वाले छात्र, जिन्होंने अंतिम वर्ष का शोध कार्य नहीं किया है, उन्हें दो साल में मास्टर डिग्री प्राप्त करने का अवसर मिलेगा (कुमार, 2021)।

निजी संस्थानों की फीस पर कैंप-भारत के कई निजी कॉलेज और विश्वविद्यालय उच्च शुल्क लेते हैं, जिससे कई छात्रों को उच्च शिक्षा प्राप्त करना कठिन हो जाता है। सरकार ने 2035 तक नामांकन दर को 50: तक बढ़ाने के लक्ष्य के तहत निजी संस्थानों की फीस पर कैंप (सीमा) लागू की है। इसका मतलब है कि कोई भी संस्थान निर्धारित कैंप से अधिक शुल्क नहीं ले सकेगा, चाहे वह कोई भी विषय क्यों न हो (कुमार, 2020)।

### भारत की वर्तमान उच्च शिक्षा प्रणाली की समस्याएं और चुनौतियां

- **नामांकन** : भारत की उच्च शिक्षा में सकल नामांकन अनुपात (जी.ई. आर.) केवल 25.2% है, जो विकसित और अन्य प्रमुख विकासशील देशों की तुलना में काफी कम है (काकोडकर, 2022)।
- **गुणवत्ता** : भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली में रटने पर जोर, रोजगार क्षमता और कौशल विकास की कमी जैसे मुद्दे हैं।

- **अपर्याप्त बुनियादी ढांचा** : उच्च शिक्षा प्रणाली के विकास के बावजूद, अभी भी कई कॉलेज और विश्वविद्यालय बुनियादी सुविधाओं की कमी से जूझ रहे हैं (मेनन, 2020)।
- **प्रवेश और समानता की कमी** : उच्च शिक्षा में सबसे बड़ी चुनौती सभी के लिए समान पहुंच और अवसर प्रदान करने की है।
- **शिक्षकों की कमी** : कॉलेज और विश्वविद्यालयों में प्रोफेसरों की कमी उच्च शिक्षा पर प्रभाव डाल रही है।
- **उच्च शिक्षा का वित्तपोषण** : संसाधनों की कमी के कारण उच्च शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है।

### नई शिक्षा नीति 2020 का उच्च शिक्षा पर प्रभाव

उच्च शिक्षा के नियामक प्रणाली का पुनर्गठन—उच्च शिक्षा क्षेत्र को पुनः ऊर्जा देने और इसकी सफलता सुनिश्चित करने के लिए नियामक ढांचे को पूरी तरह से पुनर्गठित करना आवश्यक है। यह ढांचा यह सुनिश्चित करेगा कि अलग-अलग, स्वायत्त और सशक्त प्राधिकरण नियमन, प्रत्यायन, वित्तपोषण और शैक्षणिक मानक निर्धारण के कार्यों को स्वतंत्र रूप से संचालित करें। इन्हें 'हायर एजुकेशन कमीशन ऑफ इंडिया' (H.E.C.I.) के तहत अलग-अलग खंडों के रूप में स्थापित किया जाएगा (दास, 2023)।

घरेलू अंतरराष्ट्रीयकरण—एनईपी 2020 विदेशी विश्वविद्यालयों और शिक्षकों को एशियाई देशों में वापस लाने की भी अनुमति देता है, जिससे स्थानीय संस्थानों को अपनी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने की चुनौती मिलती है। इससे भारतीय शिक्षा प्रणाली में तेजी आई है, और विदेशी विश्वविद्यालय भारत में अपने परिसर स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। भारत में उच्च शिक्षा का सकल नामांकन अनुपात (जी.ई.आर.) केवल 26.3% है, जो अन्य बी.आर.आई.सी.एस. देशों जैसे चीन (51%) और ब्राजील (50%) की तुलना में काफी कम है (दास, 2020)।

अधिक समग्र और बहुविषयी शिक्षा की ओर—समग्र और अंतर्विषयक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक, शारीरिक, भावनात्मक और बौद्धिक गुणों का विकास करना है। यहां तक कि आईआईटी जैसे इंजीनियरिंग संस्थान भी एक अधिक समग्र और अंतर्विषयक पाठ्यक्रम में स्थानांतरित होंगे, जिसमें कला और मानविकी पर जोर दिया जाएगा। कला और मानविकी के छात्र विज्ञान का अध्ययन करेंगे और व्यावसायिक और सॉफ्ट स्किल्स की भी पढ़ाई करेंगे। सभी उच्च शिक्षा संस्थानों (H.E.I.) में सामुदायिक भागीदारी, पर्यावरण शिक्षा और मूल्य आधारित शिक्षा से संबंधित क्रेडिट आधारित पाठ्यक्रम शामिल होंगे (यादव और यादव, 2023)।

### डिग्री कार्यक्रमों की संरचना की अवधि

चार वर्षीय अंतःविषय स्नातक कार्यक्रम को राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत प्राथमिकता दी गई है। भारतीय सरकार छात्रों के अकादमिक परिणामों को डिजिटल रूप से संग्रहीत करने में मदद के लिए 'अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट' स्थापित करेगी। इससे शैक्षणिक संस्थानों के लिए छात्रों के डिग्री में क्रेडिट जोड़ना काफी आसान हो जाएगा। 'अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट' छात्रों के लिए एक ऐसा प्रस्ताव है, जिसमें वे विभिन्न प्रतिष्ठित उच्च शिक्षा संस्थानों से प्राप्त क्रेडिट को आसानी से संग्रहीत कर सकते हैं। अगर छात्र कॉलेज बदलना चाहते हैं, तो उनके क्रेडिट स्थानांतरित किए जा सकेंगे (नितीश, 2023)।

**प्रेरित, ऊर्जावान और सक्षम संकाय** – उच्च शिक्षा संस्थानों की सफलता में संकाय सदस्यों की गुणवत्ता और प्रतिबद्धता अत्यंत महत्वपूर्ण घटक हैं। शिक्षकों को पेशेवर विकास के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। यदि कोई संकाय सदस्य मूल मानकों को बनाए रखने में विफल रहता है, तो उसे जिम्मेदार ठहराया जाएगा। उच्च शिक्षा संस्थान (H.E.I.S.) स्वतंत्र रूप से संकाय भर्ती प्रक्रिया को पारदर्शी और विशिष्ट रूप से निर्धारित करेंगे (बत्रा, 2020)।

सर्वोत्तम शिक्षण वातावरण और छात्रों के लिए समर्थन—उच्च गुणवत्ता वाले शिक्षण का आधार पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र, सतत मूल्यांकन और छात्र सहायता है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रत्येक छात्र को एक प्रोत्साहनपूर्ण और आकर्षक सीखने का अनुभव मिले, संस्थान और प्रेरित प्रोफेसर पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र का निर्माण करेंगे और सतत मूल्यांकन का उपयोग प्रत्येक कार्यक्रम के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए किया जाएगा। (H.E.I.S.) सभी मूल्यांकन प्रक्रियाओं पर निर्णय लेंगे, जिसमें अंतिम प्रमाणन प्राप्त करने की प्रक्रिया भी शामिल है। 'चॉइस-बेस्ड क्रेडिट सिस्टम' (C.B.C.S.) में रचनात्मकता और लचीलेपन को बढ़ावा देने के लिए बदलाव किए जाएंगे (गोविंदा, 2020)। इसके अलावा, प्रत्येक संस्थान अपने शैक्षणिक योजनाओं को अपने शसंस्थागत विकास योजनाश (I.D.P.) में शामिल करेगा, जिसमें पाठ्यक्रम वृद्धि से लेकर कक्षा में बातचीत की प्रभावशीलता तक शामिल होगा। शिक्षकों को प्रशिक्षक, सलाहकार और परामर्शदाता के रूप में छात्रों के साथ प्रभावी ढंग से बातचीत करने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान से लैस किया जाएगा। दूसरी ओर सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के छात्रों को उच्च शिक्षा में सफलता प्राप्त करने के लिए सहायता और प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप, विश्वविद्यालयों और कॉलेजों को शीर्ष स्तरीय समर्थन केंद्र स्थापित करने और इसके लिए पर्याप्त वित्तीय और शैक्षणिक

संसाधन प्रदान करने के लिए बाध्य किया जाएगा (पंडितराव और पंडितराव, 2020; दास और बर्मन, 2023)।

### डिग्री कार्यक्रमों की संरचना की अवधि

एनईपी 2020 के ढांचे के तहत, किसी भी संस्थान में स्नातक डिग्री तीन या चार साल की हो सकती है। किसी भी संस्थान को दो साल बाद प्रमाणपत्र, तीन साल बाद डिग्री और छात्रों के लिए एक साल के अध्ययन के बाद प्रमाणपत्र प्रदान करना अनिवार्य हो सकता है। सरकार 'अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट' के निर्माण में भी मदद करेगी, जिससे शैक्षणिक परिणामों को इलेक्ट्रॉनिक रूप से संग्रहीत किया जा सके। यह उन छात्रों के लिए सहायक होगा जो किसी कारणवश कोर्स बीच में छोड़ देते हैं, क्योंकि जब वे पुनः अध्ययन शुरू करेंगे, तो वे वहीं से जारी कर सकेंगे जहां उन्होंने छोड़ा था (सक्सेना, 2020)।

**समान पहुंच** – एक शीर्ष विश्वविद्यालय में प्रवेश कई अवसरों के द्वारा खोलता है, जो लोगों को वंचित स्थिति से बाहर निकालने और समुदायों को सशक्त बनाने में मदद कर सकता है। इसलिए, सभी के लिए उच्च गुणवत्ता वाली उच्च शिक्षा को उपलब्ध कराना एक शीर्ष प्राथमिकता होनी चाहिए। एनईपी 2020 का उद्देश्य है कि 2020 तक सभी छात्रों को उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त हो, विशेषकर सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों (S.E.D.G.S.) के छात्रों को (माझी, 2021)।

**मूल्यांकन प्रणाली** – संस्थान और संकाय छात्रों के लिए एक रोमांचक और आकर्षक शैक्षणिक अनुभव सुनिश्चित करने के लिए पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धति को निर्धारित कर सकते हैं। H.E.I.S. को सभी मूल्यांकन कार्यक्रमों को स्वीकृत करना होगा जो अंतिम प्रमाणन तक पहुंचते हैं। 'चॉइस-बेस्ड क्रेडिट सिस्टम' (C.B.C.S.) को अधिक लचीलापन और परिवर्तन प्रदान करने के लिए पुनः डिजाइन किया जाएगा। उच्च-दांव वाले परीक्षाओं की जगह एक सतत और व्यापक समीक्षा प्रक्रिया अपनाई जाएगी (बनर्जी एट अल., 2021)।

**व्यावसायिक शिक्षा** – व्यावसायिक शिक्षा को सामान्य शिक्षा से कमतर माना जाता है और इसे मुख्य रूप से उन छात्रों के लिए समझा जाता है जो सामान्य शिक्षा में सफल नहीं हो पाते। यह एक महत्वपूर्ण समस्या है। इसे हल करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि भविष्य में व्यावसायिक शिक्षा कैसे प्रदान की जाएगी, इस पर पुनर्विचार किया जाए (वंखड़े, 2021)।

**उच्च शिक्षा में अनुसंधान और नवाचार** – एनईपी 2020 के मुख्य फोकस क्षेत्रों में से एक सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों से अनुसंधान और विकास में बड़े निवेश को प्रोत्साहित करना है। यह रचनात्मकता और कल्पनाशील



सोच को बढ़ावा देगा। उद्योग-आधारित स्किलिंग, अपस्किलिंग और रिस्किलिंग के लिए मजबूत उद्योग प्रतिबद्धता और शैक्षणिक सहभागिता आवश्यक है। साथ ही, "इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स" (I.P.R.) की समझ को बढ़ावा देने और उनके संरक्षण के लिए आवश्यक कौशल विकसित करना महत्वपूर्ण है ताकि उनके लाभों को प्राप्त किया जा सके (बनर्जी एट अल., 2021)।

नेशनल एजुकेशन टेक्नोलॉजी फोरम (N.E.T.F.) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) के तहत प्रस्तावित नेशनल एजुकेशन टेक्नोलॉजी फोरम (N.E.T.F.) सही दिशा में एक कदम है। यदि उच्च शिक्षा संस्थानों में गुणवत्तापूर्ण एड-टेक टूल्स सभी शिक्षण और सीखने के आयामों में उपलब्ध कराए जाएं, तो वे तेजी से प्रतिक्रिया कर सकेंगे। इसमें "ओपन-सोर्स डेवलपमेंट प्लेटफॉर्म" पर स्थानीय एड-टेक उत्पादों को होस्ट करने पर जोर देना चाहिए, जिसमें "निजता और सुरक्षा" सुनिश्चित करने के लिए साइबर सुरक्षा मानकों का पालन, फायरवॉल का उपयोग और बाहरी खतरों और कमजोरियों से बचाव के लिए इंटरनेट डिटेक्शन सिस्टम (I.D.S.) का समावेश हो। यह प्रत्येक छात्र की "निजता" की रक्षा करेगा (कुमार, 2020)। वर्तमान अध्ययन से प्राप्त अनुभवजन्य डेटा से स्पष्ट होता है कि आशावाद शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ है। आशावादी व्यक्तियों को अपने जीवन में शारीरिक और मानसिक शिकायतें कम होती हैं। यहां तक कि यदि किसी समस्या का सामना करना पड़े, जैसे बच्चे की बीमारी, तो भी आशावादी दृष्टिकोण रखने वाली माताएं स्थिति का सामना करने में सक्षम होती हैं।

### निष्कर्ष

उच्च शिक्षा किसी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था, सामाजिक स्थिति, प्रौद्योगिकी अपनाने के स्तर और स्वस्थ मानव व्यवहार को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। देश के शिक्षा विभाग की जिम्मेदारी है कि वह सकल नामांकन अनुपात (G.E.R.) को बढ़ाए ताकि सभी नागरिकों को उच्च शिक्षा के अवसर प्राप्त हो सकें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस लक्ष्य की ओर काम कर रही है, उच्च शिक्षा की गुणवत्ता, वहनीयता और आपूर्ति को बढ़ाने के लिए नए नीतियों को लागू करके और निजी क्षेत्र को शामिल करते हुए सभी उच्च शिक्षा संस्थानों में सख्त गुणवत्ता नियंत्रण लागू कर रही है (ऐथल और ऐथल, 2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली पर सकारात्मक और दीर्घकालिक प्रभाव है। सरकार का अंतरराष्ट्रीय कॉलेजों को भारत में कैंपस स्थापित करने की अनुमति देना सराहनीय है। इससे छात्रों को अपने ही देश में उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त करने में मदद मिलेगी। अंतर्विषयक संस्थानों की स्थापना से हर अनुशासन जैसे कला और मानविकी पर भी नए सिरे से

ध्यान केंद्रित किया जाएगा। इस प्रकार की शिक्षा छात्रों को समग्र रूप से अध्ययन और विकास करने का अवसर प्रदान करेगी, जिससे छात्रों के पास एक मजबूत ज्ञान आधार होगा (दास और बर्मन, 2021)। NEP 2020 का उद्देश्य भारत में उच्च शिक्षा को आधुनिक बनाना है। कुल मिलाकर, NEP 2020 कृषि से लेकर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तक विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञों को तैयार करने की आवश्यकता को संबोधित करती है। भारत को भविष्य के लिए तैयार होने की आवश्यकता है। NEP 2020 कई युवा विद्यार्थियों के लिए उचित कौशल सेट प्राप्त करने का द्वार खोलती है। NEP 2020 उच्च शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ है। हालांकि, यह तभी क्रांतिकारी होगी जब इसे प्रभावी ढंग से और सीमित समय में लागू किया जाएगा। इस कार्य के दौरान कुछ सीमाएं पाई गईं, क्योंकि NEP 2020 के संदर्भ में उच्च शिक्षा के प्रभाव पर अध्ययन के उदाहरण बहुत कम हैं। यह सीमा संभवतः इस तथ्य के कारण हो सकती है कि NEP 2020 को अभी तक पूरी तरह लागू नहीं किया गया है, और समीक्षा का दायरा मौजूदा लेखों को डेटाबेस में देखने तक सीमित था। इसके अलावा, यह ध्यान रखना चाहिए कि शोधकर्ता ने केवल द्वितीयक डेटा का चयन किया, जो वर्णनात्मक प्रकृति का है।

### संदर्भ

- Aithal, P.S., & Aithal, S. (2019). *Analysis of higher education in Indian National Education Policy proposal 2019 and its implementation challenges. International Journal of Applied Engineering and Management Letters.* <https://doi.org>
- Aithal, P.S., & Aithal, S. (2020). *Analysis of the Indian National Education Policy 2020 towards achieving its objectives. International Journal of Management, Technology, and Social Sciences.* <https://doi.org>
- Banerjee, N., Das, A., & Ghosh, S. (2021). *National Education Policy (2020): A critical analysis. Towards Excellence, 13(3).*
- Batra, P. (2020). *NEP 2020: Undermining the Constitutional Education Agenda? Social Change, 50(4).* <https://doi.org>
- Chandra, A. (2021). *National Education Policy 2020: A critically analysed spectrum to higher education. International Journal for Research in Applied Science and Engineering Technology, 9(10).* <https://doi.org>
- Das, A.K. (2020). *Understanding the changing perspectives of higher education in India. In The Future of Higher Education in India.* <https://doi.org>

- Das, K., & Barman, A. (2021). Posits of workplace competencies in management education research- A review triangulation for discerning NEP-2020 (India)'s relevance. *PSYCHOLOGY AND EDUCATION*, 58(5). [www.psychologyandeducation.net](http://www.psychologyandeducation.net)
- Das, P. (2023). Teacher education in the light of National Education Policy-2020. <https://doi.org>
- Das, P., & Barman, P. (2023). Optimal Learning Environment for Higher Education Students in the Context of National Education Policy-2020 : An Analysis. <https://doi.org>
- Das, P., & Barman, P. (2023). Does ICT Contribute Towards Sustainable Development in Education? An Overview. *International Journal of Research Publication and Reviews*, 4(7). <https://doi.org>
- Goel, M.M. (2020). New Education Policy 2020: Perceptions on higher education. *Voice of Research*, 9(2). <http://www.voiceofresearch.org>
- Govinda, R. (2020). NEP 2020: A critical examination. *Social Change*, 50(4). <https://doi.org>
- Gupta, B. (2020). Strategies for promoting and sustaining autonomy in higher education institutions in the context of National Education Policy 2020. *International Journal of Educational Research and Studies*, 2(1).
- Gupta, B.L., & Choubey, A.K. (2021). Higher education institutions- Some guidelines for obtaining and sustaining autonomy in the context of Nep 2020. *International Journal of All Research Education and Scientific Methods (IJARESM)*, 9(1).

## भारत में सविंद सरकार की सार्थकता

डॉ० शैलेन्द्र कुमार पाण्डेय \*

प्रिती वर्मा \*\*

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। यहां प्रत्येक पाँच वर्ष के लिए जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से लोकसभा तथा विधानसभा के सदस्य को चुनकर भेजा जाता है जो केंद्र तथा राज्य स्तर पर सरकार का गठन करते हैं। भारत में बहुदलीय व्यवस्था है इसलिए किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलने के अवसर अधिक पैदा होते हैं। बिना बहुमत के संसदीय शासन का निर्माण एवं संचालन संभव नहीं होता है इसलिए गठबंधन बनाकर सरकार बनाने का प्रचलन बढ़ा।

पिछले 16 आम चुनाव से भारतीय राजनीति में गठबंधन सरकार का वर्चस्व रहा है। ऐसे में "गठबंधन सरकार" की विशेषताओं व उसकी सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। संसदीय लोकतंत्र में सरकार का गठन उसका संचालन एवं पूर्णनिर्माण किस प्रकार होगा। यह एक स्पष्ट अवधारणा के रूप में विकसित हो चुका है। एक प्रतियोगी राजनीतिक व्यवस्था में यह सदैव कुछ कारकों पर निर्भर है जैसे विशिष्ट संसाधनों की उपलब्धता, सहयोगियों की निश्चित संख्या, सहयोगियों सहित एक निश्चित राजनीतिक आधार तथा राजनीतिक दक्षता आदि।<sup>1</sup>

इनशाइकलोपिडियो के अनुसार, दो या दो से अधिक इकाइयों द्वारा मिले-जुले उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए, किस निर्णय-निर्माण तक पहुंचने में संसाधनों का संयुक्त प्रयोग "गठबंधन" के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।<sup>2</sup>

गठबंधन की प्रक्रिया की उत्पत्ति में समाज का मूलभूत परिवर्तन प्रमुख कारक है। जब कोई समाज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा होता है। तब यह परिवर्तन ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देता है कि, गठबंधन अनिवार्य बन जाता है। किसी देश की राजनीतिक वहां की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों की उपज होती है। सामयिक संदर्भ में विश्व का प्रत्येक समाज स्थिर प्रवृत्ति रखता है।<sup>3</sup>

शब्द कोष के अनुसार गठबंधन का अर्थ है कि किसी एक शरीर में सहसंयोजक होना। राजनीतिक शब्दों में इसका अर्थ है, अलग-अलग राजनीतिक दलों का गठबंधन। जब विभिन्न राजनीतिक दल आम तौर पर

\* सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, सर्वोदय पी.जी. कालेज, मऊ

\*\* शोधछात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, सर्वोदय पी.जी. कालेज, मऊ

सहमत एजेंडे के आधार पर सरकार बनाने के लिए एक साथ आते हैं तो इस गठबंधन की राजनीति कहते हैं। यह व्यवस्था तब उत्पन्न होती है जब कोई भी राजनीतिक दल संसद में बहुमत हासिल नहीं कर पाता है।

गठबंधन राजनीति का वर्णन करते हुए सच्चिदानंद सिन्हा जी लिखते हैं कि "गठबंधन किसी भी रूप में राजनीति का विखंडित स्वरूप है। गठबंधन एक पद्धति है जिसके द्वारा आधुनिक बहुलवादी समाज में परस्पर क्रियात्मक हितों का एकीकरण करके राजनीतिक व्यवस्था में प्रस्तुत किया जाता है।"<sup>4</sup>

गठबंधन सरकार, एक संसदीय शासन प्रणाली में अलग-अलग परियों के संगठित होकर बनाए गए सरकार को कहते हैं। गठबंधन सरकार विश्व के स्तर पर भी देखने को मिलती है। आज, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, बेल्जियम, फिनलैंड, डेनमार्क, जर्मनी, कनाडा, जापान व इंडोनेशिया आदि सहित कई देशों में गठबंधन सरकार देखने को मिलता है। गठबंधन सरकार का सामूहिक उत्तरदायित्व होता है। कोई भी नीति निर्धारण करने से पहले गठबंधन में शामिल सभी राजनीतिक दलों से विचार-विमर्श किया जाता है। गठबंधन सरकार में अस्थिरता का संकट हमेशा बना रहता है। क्योंकि इसमें विभिन्न विचारधाराओं वाले राजनीतिक दल शामिल होते हैं और यह सरकार में शामिल भी निहित स्वार्थवश ही होते हैं।

भारत में सर्विद सरकार की व्यवस्था स्वतंत्रता के कुछ वर्षों पश्चात् ही अस्तित्व में आ गई थी। भारत में 1952 से 1967 तक कांग्रेस पार्टी का एकाधिकार रहा। केंद्र एवं अधिकांश राज्यों में कांग्रेस पार्टी को पूर्ण बहुमत मिलता रहा और सजातीय मंत्रिमंडल बनते रहे। प्रदेश की राजनीतिक में 1967 का आम चुनाव हुआ "टर्निंग पॉइंट" है। जब कांग्रेस का राजनीतिक एकाधिकार समाप्त हो गया।<sup>5</sup>

कांग्रेस पार्टी को उत्तर प्रदेश सहित आठ राज्यों में बहुमत से कम सीटें प्राप्त हुईं, कुछ राज्यों में सीमांत बहुमत प्राप्त हुआ और किसी प्रकार सरकार का गठन किया। तत्कालीन मद्रास राज्य में तो गैर कांग्रेसी सरकार बनी और देश भर में मिली-जुली सरकार का दौर शुरू हुआ। इसके बाद 1975 से 1977 तक देश में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगा दिया जून के लिए घातक साबित हुआ। "आपातकाल हटाने के बाद 1977 का चुनाव परिणाम चौंकाने वाला था। ये परिणाम विजयी पक्ष एवं पराजित पक्ष दोनों के लिए आश्चर्य जनक थे।"<sup>6</sup>

सन् 1977 का चुनाव स्पष्ट विभाजन था। उत्तर बनाम दक्षिण के बीच किंतु यह प्रतिस्पर्धा राजनीति के लिए अशुभ संकेत था। मतदाताओं में जातिगत

समूह के रूप में अपनी-अपनी पहचान से अलग हटकर मतदान किया था।<sup>7</sup> 1977 में मतदाताओं ने अपने मत के महत्व को पहचान तथा ऐसे- ऐसे लोग लोकसभा सदस्य चुने गये। जिनके पास व्यय के लिए धन नहीं था।<sup>8</sup>

आपातकाल हटाने के बाद 1970 के लोकसभा चुनाव में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में कांग्रेस जनसंघ, लोकदल, कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी समेत लगभग पूरा विपक्ष साथ आ गया। इसके बाद नई पार्टी 'जनता पार्टी' का निर्माण हुआ और 1977 में मोरारजी देसाई के नेतृत्व में भारत में पहली बार गैर-कांग्रेसी सरकार का निर्माण हुआ। उसे समय गठबंधन सरकार की स्थापना के किन्हीं भी दो राजनीतिक दलों की नीतिगत विचारधारा नहीं थी, लेकिन इंदिरा गांधी द्वारा आपातकाल लागू किए जाने के विरोध में सभी विपक्षी दल एकजुट हो गए थे। "वही 1980 में जो हुआ, वह अकल्पनीय था। वह आपस में ही जागरने लगे हुए सभी सत्ता से उतार दिए गए। यह देश का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि इस सघन अनुभव के बाद भी देश में क्षेत्रीयता और जातीय समीकरणों पर आधारित राजनीतिक दल तेजी से पनपते रहे हैं।"<sup>9</sup>

इसके बाद 1989 के लोकसभा चुनाव में जनता दल, कांग्रेस (एस.) तथा तीन राज्य स्तरीय डालो तेलुगूदेशम, डीएमके तथा असम गण परिषद ने "राष्ट्रीय मोर्चा" का गठन करके गठबंधन की सरकार बनायी। जिसे भाजपा तथा वामपंथी दलों ने बाहर से समर्थन दिया। 1989 का चुनाव जिन परिदृश्य में संपन्न हुआ उसमें मतदाताओं ने राष्ट्रीय मोर्चा सरकार के लिए एक आभासी छवि निर्धारित कर रखी थी, स्वच्छ, ईमानदार एवं प्रभावी प्रशासन देने वाली सरकार; सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार दूर करने वाली सरकार; उद्देश्यों के प्रति गंभीर प्रयासों के प्रति ईमानदार; तथा अपराधी व्यक्तियों को दंडित करने वाली सरकार के रूप में।<sup>10</sup>

1996 में हुए चुनाव में भाजपा ने अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में 161 सीटें हासिल की थी। सबसे बड़ी पार्टी होने के नाते अटल बिहारी वाजपेयी जी को सरकार बनाने का मौका मिला लेकिन संसद में बहुमत साबित नहीं कर पाने के कारण 13 दिन बाद सरकार गिर गयी। बाद में एच.डी. देवगोंडा के नेतृत्व में जनता दल समाजवादी पार्टी, तेलुगू रेशम पार्टी और अन्य पार्टियों मिलकर सरकार बनाई तथा कांग्रेस ने बाहर से समर्थन दिया। कुछ दिनों बाद अन्तर्विरोध के कारण इंद्रकुमार गुजराल को प्रधानमंत्री बनाये गये। जैन आयोग की रिपोर्ट आने के बाद कांग्रेस ने संयुक्त मोर्चा सरकार के सहयोगी द्रमुक को अविलंब सरकार से बाहर निकालने की मांग की लेकिन द्रमुक को सरकार से बाहर न निकालने पर कांग्रेस पार्टी ने संयुक्त मोर्चा सरकार से समर्थन वापस ले लिया।

कांग्रेस द्वारा जैन आयोग की संस्तुतियों के संदर्भ में संयुक्त मोर्चा सरकार से समर्थन वापस लेने से 1898 में मध्यवर्ती चुनाव संपन्न कराए गए।

चुनाव बाद राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन द्वारा सरकार बनाई गई। रजग यानि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन एक पूर्णतः अवसरवादी गठबंधन था, जिसका प्रधान उद्देश्य गठबंधन प्रक्रिया द्वारा संसदीय संख्या में वृद्धि करना था। यद्यपि सरकार के निर्माण के बाद उसका संचालन न्यूनतम सझा कार्यक्रम के आधार पर संचालित हुआ किंतु गठबंधन निर्माण की प्रक्रिया में दलीय विचारधारात्मक समीपता की अपेक्षा की गई।<sup>11</sup>

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन में भाजपा सबसे बड़ी सहयोगी पार्टी थी इसलिए उसे बिग ब्रदर एवं गठबंधन के अन्य घटक दलों को स्माल एलाइज के नाम से संबोधित किया जाता रहा है।<sup>12</sup> लेकिन यह गठबंधन ज्यादा दिनों तक नहीं चली। "ए आई एन डी एम के पार्टी के द्वारा रजग से समर्थन वापस लेने के कारण : राष्ट्रपति की अनुदेश पर सरकार ने विश्वास प्रस्ताव को सदन में पेश किया। 17 अप्रैल 1999 को मात्र 13 महीने में ही सरकार गिर गयी।<sup>13</sup> वर्ष 1999 में लोकसभा चुनाव संपन्न कराए गये। चुनाव परिणाम में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन को बहुमत प्राप्त हुआ। संख्या बल की सुगमता से उपलब्धता एवं घटकिया सहमति की आधार पर रजग की यह सरकार अपना कार्यकाल पूरा कर सकी। गठबंधन की सरकारों में यह प्रथम ऐसी सरकार थी जिसे अपना कार्यकाल पूरा करने का इतिहास रच दिया। 2004 में हुए 14 वे लोकसभा चुनाव में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (सप्रंग) को सर्वाधिक 218 सिम मिली और कुछ अन्य पार्टियों ने बाहर से समर्थन देकर सप्रंग की सरकार बनायी। 2009 के चुनाव में फिर से कांग्रेस के नेतृत्व में लगातार दूसरी बार सप्रंग की सरकार बनी। 2014 के चुनाव में राजग (राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन) ने 336 सीटें जीती। अकेले भाजपा ने 283 सीटें जीती। सप्रंग को सिर्फ 59 सीटों पर जीत मिली। 2019 के चुनाव में राजग ने 353 सीटें जीती। अकेले भाजपा 303 सीटें जीती। सप्रंग को सिर्फ 92 सीटें मिली। राजग ने फिर से अपनी सरकार बनायी। कांग्रेस पार्टी की सीटें कम होने के कारण इस समय लोकसभा में विपक्ष की भूमिका कमजोर हो गयी है।<sup>14</sup>

इससे पता चलता है कि गठबंधन सरकारों के इतने लंबे इतिहास ने गठबंधन को भारतीय लोकतंत्र के एक महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में स्थापित किया है। केंद्र के अलावा राज्यों के स्तर पर भी देश के गठबंधन सरकार काम करती रही है। इसके हालिया उदाहरण के रूप में बिहार, कर्नाटक, केरल, पंजाब, गोवा मेघालय, जैसे राज्यों की सरकारों को देखा जा सकता है।<sup>15</sup> गठबंधन सरकारों की लंबे इतिहास को देखकर यह प्रश्न स्वाभाविक ही उपजत है कि जब आजादी के बाद एक लंबे समय तक एकल दल के नेतृत्व में स्थाई सरकारी रही हैं। तो गठबंधन सरकारों के उदय के पीछे क्या वजह हो सकती है।

आजादी के बाद शुरू के सालों में भारतीय राजनीति में सक्रिय दलों और नेताओं की पहचान आजादी दिलाने वाले नेताओं के तौर पर थी। समय

के साथ यह स्थिति बदली और नए नेताओं के भारतीय राजनीति में पदार्पण के साथ ही भारतीय राजनीति ने एक नया मोड़ लिया। लोगों में सिर्फ आजादी से जुड़ी भावनाओं के आधार पर अपने नेता को चुनने की प्रवृत्ति में बदलाव आया। इसलिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में बना स्थायित्व भी कमजोर हो गया। इसके अलावा एक पक्ष यह भी है कि भारत विविधताओं से बड़ा देश है। यहां अलग-अलग राज्यों की अपनी जरूरत है। भौगोलिक, भाषाई, धार्मिक, जातीय, सांस्कृतिक और प्रजाति विविधता भारतीय संस्कृति के अंग है। इसके साथ ही अलग-अलग परिस्थितियों के चलते देश के सभी भागों में विकास भी एक समान नहीं हुआ है। ऐसे में किसी एक राष्ट्रीय स्तर के दल के द्वारा सभी क्षेत्रों की जरूरत को समझ पाना कई बार संभव नहीं होता। इन क्षेत्रीय स्तर पर मौजूद विविधताओं और विकास की अलग-अलग जरूरत ने क्षेत्रीय दलों के उदय के लिए अनुकूल परिस्थितियों तैयार की है। यह क्षेत्रीय दल स्थलीय मांगों की आवाज के तौर पर उठे हैं।

पंजाब में अकाली दल, उड़ीसा में बी.जे.डी., आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में सक्रिय तेलुगू देशम पार्टी क्षेत्रीय दलों के कुछ उदाहरण है। यह समय-समय पर अपने क्षेत्र की मांगों को सामने रखते हैं। स्थानीय जरूरत के समझ के चलते जनता इन्हें अपना प्रतिनिधि चुनौती है और यह राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक दलों को समर्थन देकर गठबंधन सरकारों के बनने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दूसरा पक्ष यह भी है कि कई बार चुनाव में जाति, धर्म, भाषा से जुड़े मुद्दे प्रमुख हो जाते हैं। जबकि विकास के मुद्दे पीछे छूट जाते हैं।

भारतीय संविधान की बात करें तो स्पष्ट तौर पर गठबंधन सरकार के व्यवस्था के संबंध में कोई प्रावधान नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 75 (3) में केंद्रीय मंत्री परिषद और अनुच्छेद 164 (2) में राज्यमंत्री परिषद के संबंध में कहा गया है किया क्रमशः लोकसभा और राज्य विधानसभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदाई होंगे और यह एक दल की तरह कार्य करेंगे।<sup>16</sup> केंद्र ही नहीं राज्य के स्तर पर भी गठबंधन सरकारें आम हो चुकी है। इस व्यवस्था के अपने फायदे और नुकसान भी हैं। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि यह व्यवस्था भारतीय लोकतांत्रिक ढांचे और लोगों के अधिकारों को किस सीमा तक प्रभावित करती है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भारत को एक लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में परिभाषित किया गया है। इसका सीधा सा अर्थ है कि भारतीय जनता अपनी सरकार चुनती है। चुनाव में किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने की स्थिति में गठबंधन बनते हैं। राजनीतिक दल सरकार बनाने के लिए विपरीत विचारधाराओं वाले राजनीतिक दलों को भी समर्थन देते हैं। इससे एक मतदाता जो मतदान करते समय किसी विशेष विचारधारा वाले दल को चुना चाहता है, उसके चुनने की स्वतंत्रता पर सीमाएं लग जाती है। कई बार गठबंधन जाति और धर्म के मुद्दे पर भी बन जाते हैं।



इसे भारतीय संविधान में घोषित देश का पंथनिरपेक्ष स्वरूप और लोगों को दिया गया समानता का अधिकार भी प्रभावित होता है।<sup>17</sup>

गठबंधन की राजनीति की सबसे बड़ी विडंबना है कि यह जातीय समीकरणों पर आधारित दलों को अपने साथ जोड़ने के लिए राष्ट्रीय दल उत्सुक रहने लगे हैं। जिस ढंग से चुनाव के कुछ दिन पहले दल बदल हो रहा है। दलबदलुओ का जोड़-शोर से स्वागत हो रहा है, वह लोकतंत्र तो बिल्कुल भी नहीं है।<sup>18</sup> गठबंधन की सरकारों के संबंध में एक मानसिकता रहती है कि इसमें स्थायित्व की कमी रहती है। पिछले अनुभवों को देख तो 1990 के दशक में गठबंधन सरकारों की अस्थिरता अपने चरम पर थी। कभी सरकार तेरा दिन तो कभी 13 महीने में गिर गई। गठबंधन में शामिल राजनीतिक दल अपनी मांग न माने जाने पर किसी भी वक्त समर्थन वापस ले लेते हैं। हर समय अस्थायित्व का खतरा बने रहने के चलते सरकारी विकास कार्यों पर ध्यान नहीं दे पाती। वह सहयोगी दलों के तुष्टीकरण के लिए कठोर निर्णय लेने से बचाती है। सरकार के निर्णय विकास के लक्ष्य से ज्यादा सहयोगी दलों के बीच संतुलन बनाए रखने पर केंद्रित होते हैं। इससे सरकार अपने वास्तविक लक्ष्य से भटक जाती है।

इस अस्थिरता की समस्या से निपटने के लिए 1985 दल-बदल कानून लाया गया था। संविधान में 52वे संशोधन के माध्यम से संविधान में दसवीं अनुसूची जोड़ी गयी। इसका मकसद सांसदों और विधायकों द्वारा दल बदलने की स्थिति में योग्यताओं का प्रावधान करना था। इसके बाद 2003 में दसवीं अनुसूची में 91 संविधान संशोधन के माध्यम से भी कुछ बदलाव किए गए हैं। इस कानून से दल बदल की प्रवृत्ति पर भी रोक लगी और स्थिरता को बढ़ावा मिला।<sup>19</sup>

अगर हम 1999 के बाद से देखें तो केंद्र में गठबंधन सरकारों में स्थायित्व आया है और इन्होंने अपना कार्यकाल भी पूरा किया है। इसकी एक बड़ी वजह यह भी है कि वर्तमान में राष्ट्रीय स्तर पर बनने वाले गठबंधन चाहे वह संप्रग हो या राजग राज्यों की स्वायत्तता को पहचान दे रहे हैं। इसका कारण यह है कि यह दोनों ही गठबंधन समर्थन के लिए क्षेत्रीय दलों पर निर्भर है। यहां पर इस बात का जिक्र करना लाजमी है कि गठबंधन की राजनीति हमेशा नुकसान दायक ही हो यह भी नहीं है। सविंद सरकारी कई मामलों में बेहतर भी साबित होती है।

गठबंधन सरकारों की आलोचना में जो बिंदु सबसे ज्यादा प्रभावी दिखता है वह है सरकार में कठोर पूर्ण निर्माण लेने की क्षमता ना होना लेकिन हम हालिया दो दशकों के घटना क्रम पर नजर डालें तो यह तर्क कई मामलों में कमजोर नजर आता है। 1991 में आर्थिक उदारीकरण का फैसला, लगभग दर्जन भर दलों के समर्थन से बनी सरकार द्वारा परमाणु परीक्षण का फैसला;

विशेष आर्थिक क्षेत्र अधिनियम, (F.D.I.) नीति का उदारीकरण जैसे बड़े फैसले सरकारों ने ही लिए। मनरेगा जैसी कल्याणकारी योजना सूचना के अधिकार जैसे सुधार गठबंधन सरकार के कार्यकाल में ही लागू किए गए हैं। गठबंधन सरकार एक ऐसी व्यवस्था मुहैया कराती है जिससे सट्टा का विकेंद्रीकरण होता है। यह संघवाद और लोकतंत्र दोनों के लिए सकारात्मक है। क्योंकि इसमें ताकत किसी एक दल के पास नहीं रह पाती। यही भारतीय राज्य व्यवस्था का सार भी है। गठबंधन में शामिल दल केवल अपने क्षेत्र का ही नहीं प्रतिनिधित्व करते बल्कि यह देश के विभिन्न सामाजिक समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसे में इसके समर्थन से बनी किसी भी सरकार के लिए पिछड़े समूह के हितों को नजर अंदाज करना आसान नहीं होता है।

ऐसा भी देखा गया है कि विभिन्न राजनीतिक दलों के सहयोग से बनी सरकार की नीतियां सामाजिक तौर पर ज्यादा समावेशित होती हैं इसकी वजह यह है कि सहयोगी दल देश को एक बड़े वर्ग और समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं। देखा जाय तो गठबंधन की सरकारों के फायदे और नुकसान दोनों ही हैं। ऐसे में जरूरी है कि ऐसे उपाय अपनाए जाएं जिससे कि इस व्यवस्था के नुकसानों को काम करते हुए सकारात्मक प्रभाव को बढ़ाया जा सके। भारत जैसे विविधता से भरे देश में सभी वर्गों और क्षेत्र के लोगों को साथ लेकर चलना एक कठिन चुनौती है। ऐसे में देश में ऐसे नेताओं की जरूरत है जो विभिन्न वर्गों के हितों के बीच समन्वय बैठा सके। इसके साथी राजनीतिक दलों को भी अपने ही निहित हितों से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित को बरीयता देनी चाहिए।

गठबंधन सरकारों के बनने में धान का प्रयोग ना हो इसके लिए भारतीय निर्वाचन आयोग को कठोर कदम भी उठाने होंगे। धर्म समुदाय और जातीय मुद्दों से ऊपर उठकर विकास के मुद्दों को चुनाव में शामिल किए जाने की आवश्यकता है। देश में अभी भी मतदान प्रतिशत संतोषजनक नहीं है। ज्यादा से ज्यादा लोगों को मतदान के लिए जागरूक किए जाने की जरूरत है। ताकि योग्य उम्मीदवार ही चुने जाए।

इससे आगे यह भी ध्यान देने लायक बात है कि सर्विंद सरकारों के सामान्य में संविधान में इससे जुड़े प्रावधान शामिल किया जाए तो इस व्यवस्था को कानूनी अधिकार मिल सकेगा। अक्सर ऐसा देखा गया है कि सर्विंद सरकारों में क्षेत्रीय मुद्दे हाबी हो जाते हैं और राष्ट्रीय मुद्दे पीछे छूट जाते हैं। ऐसे में क्षेत्रवाद को भी बढ़ावा मिलता है और वैश्विक स्तर पर देश के हित से जुड़े फैसले लेने में सरकार को दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। इसके लिए देश की जनता का जागरूक होना बेहद जरूरी है।

### निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है – जब जनता क्षेत्रीय हितों के साथ-साथ राष्ट्रीय हितों को भी वरीयता देगी तब जनप्रतिनिधित्व भी सिर्फ क्षेत्रीय मुद्दों पर सरकार से समर्थन वापस लेने की बात नहीं करेगी। इस सरकार में स्थायित्व तो आएगा ही साथ ही भारतीय संविधान में घोषित लोकतांत्रिक संप्रभुत्व और पथनिरपेक्ष गणराज्य की अवधारणा भी वास्तविक रूप से लागू हो सकेगी।

### संदर्भ

1. मसक्यूटो, क्रॉस ब्यूनो डी, 1975, स्ट्रेटजी रिस्क एंड पर्सनैलिटी इन कोएलिशन पालीटिक्स, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ० 4
2. गेम्सन, विलियम ए, 1961, ए थ्योरी ऑफ कोएलिशन फारमेशन, अमेरिका सोशियोलॉजिकल कल रिव्यू, नई दिल्ली, भाग-16, पृ० 373-382
3. कोठारी, रजनी, 1972, भारत में राजनीति; ओरिएंटल लांगमैन लिमिटेड नई दिल्ली, पृ० 110
4. सिन्हा, सच्चिनानंद, 1987, कोलिशन इन पॉलिटिक्स मुजफ्फरपुर मारल प्रकाशन, पृ० 75
5. ब्रास; पॉल, 1969, फेक्शनल पॉलिटिक्स इन एन इंडियन स्टेट : थे कांग्रेस पार्टी इन यू०पी०, बारकोली यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस
6. भारद्वाज, नरेंद्र, 1977, एनाटामी ऑफ एंटी कांग्रेस वेब सेकुलर डेमोक्रेसी; नई दिल्ली, वॉल्यूम 8, पृ० 8
7. सिंहा सच्चिनानंद, 1987, कोएलीशन इन पॉलिटिक्स द न्यू चौलेंज मुजफ्फरपुर; मॉडल प्रकाशन, अरुणालय राजेंद्रपुरी पृ० 43
8. दैनिक जागरण, वाराणसी 8 फरवरी 2022
9. दैनिक जागरण, वाराणसी 8 फरवरी 2022
10. जैन, एच. एम., 1990, व्यवहार के लिए रणनीति मैन स्ट्रीम, नई दिल्ली पृ० 15-16
11. भल्ला, सुरजीत एस०, 1998 द वेलकम इरा ऑफ कोएलीशन पालिटिक्स, सेमिनार, 465 नई दिल्ली, पृ० 16
12. परमार, चंद्रिका, 1998, एलायंस 1998 सेमिनार 465 नई दिल्ली, पृ० 51
13. पाण्डे, कृष्ण किशोर, 1999, राजनीतिक भूचाल की संभावना, यंग इंडियन नई दिल्ली पृ० 16
14. भारतीय निर्वाचन आयोग पोर्टल
15. त्रिपाठी, ब्रजेश कुमार; 2012 भारत में सविंद सरकारें : एक समीक्षात्मक अध्ययन 1977 से अधतन गठित केंद्र सरकारों के विशेष संदर्भ में
16. लक्ष्मीकांत, एम०, भारत की राजव्यवस्था, पंचम संस्करण अध्याय-20-32
17. द हिंदू में छपे लेख, A promise to live by : on Indian democracy और loksabha 2019: An election that is not about one
18. दैनिक जागरण, वाराणसी 8 फरवरी 2022
19. लक्ष्मीकांत; एम०, भारत की राज्यव्यवस्था, पंचम संस्करण: अध्याय-72 (दल परिवर्तन कानून)

## भारतीय किसान आन्दोलन में स्वामी सहजानंद सरस्वती का योगदान

सुभाष चन्द्र यादव \*  
डॉ० कृष्णा नन्द चतुर्वेदी \*\*

### सारांश

आधुनिक भारत में स्वामी सहजानंद सरस्वती उन महान पुरुषों की परंपरा में आते हैं जिनका संपूर्ण जीवन ही भारत की बहुसंख्यक शोषित जनता और उसकी सच्ची आत्मा 'किसानों' के नवजागरण हेतु समर्पित रहा। भारत वर्ष प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। साथ ही प्राचीन काल से ही किसान हमारे समाज का अभिन्न अंग भी रहा है। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि तब से ही किसान सुख-सुविधाओं से वंचित भी रहा है। जब समाज में अलग-अलग दर्जे बने तो सबसे निचला दर्जा किसानों या मजदूरों का था जो खेतों या शहरों में काम करते थे। यद्यपि इस दर्जे में सबसे ज्यादा व्यक्ति थे फिर भी और दर्जे के व्यक्ति उन्हीं पर दांत लगाए रहते थे, साथ ही उनसे कुछ न कुछ ऐंठते रहते थे। प्रस्तुत शोध पत्र में स्वामी सहजानंद का कृषक आंदोलन में योगदान तथा उनके कृत्यों के माध्यम से ही उनके वैचारिक पक्ष को उजागर करने का प्रयास किया गया है। बात यदि मध्यकाल की कि जाय तो इस समय भी किसानों की स्थिति अच्छी नहीं थी। अत्यधिक लगान वसूली के कारण ही जब-तब कृषक विद्रोह होते रहे। यही सिलसिला आधुनिक काल में भी जारी रहा। आधुनिक काल में भी किसानों के शोषण व उन पर अत्याचार होते रहे। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में देश में बार-बार अकाल पड़े तथा भूख से लाखों कृषक एवं अन्य कमजोर वर्ग के लोग मृत्युग्रस्त हो गए। इस काल में भारत के विभिन्न भागों में 24 छोटे-छोटे अकाल पड़े जिसमें लगभग 2 करोड़ 25 लाख व्यक्ति मारे गए। आश्चर्य तो तब होता है जब विभिन्न अकाल आयोगों ने यह स्पष्ट कर दिया कि सरकार के राहत कार्यों का प्रमुख उद्देश्य देश में परोपकार नहीं बल्कि संपत्ति की संस्था को बनाए रखना और उसकी रक्षा करना था। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल से आधुनिक काल तक भारत कृषि प्रधान अवश्य रहा पर किसानों की दशा किसी काल में संतोषजनक नहीं रही।

**संकेताक्षर :** नवजागरण, धरतीपुत्र, वामपंथ, गांधीवाद, समन्वयवाद, बक्सर आन्दोलन, भावली लगान, बकात्स जमीन, बटाईदार, साम्राज्यवाद, सामन्तवाद, पूँजीपतीवर्ग, वर्गीयसमझ।

\* शोधार्थी, स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर

\*\* एसोसिएट प्रोफेसर, स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर

### परिचय

स्वामी सहजानन्द भारतीय जनता के मध्य धरतीपुत्र के रूप में थे। वे स्वयं किसान परिवार से जुड़े थे। पश्चिमी पटना में किसानों की इस दयनीय स्थिति ने उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। उन्होंने देखा कि किस तरह भारत के अन्दर भारत के ही लोग जो संख्या में गिने चुने हैं, बहुसंख्यक किसानों व मजदूरों का शोषण कर रहे हैं। प्रकृति ने जब सृष्टि की रचना की तो उसने अमीर व गरीब नहीं बनाया। प्रकृति पर सबका समान अधिकार था। लेकिन समाज के कुछ चतुर लोगों ने आम जनता के भोलेपन का लाभ उठाया। परिश्रम कोई और करे, लाभ किसी और को हो। यही वह समय है जब स्वामी जी का रूझान वामपंथ की ओर होता है। लेकिन अभी उनके ऊपर गांधीवाद का प्रभाव था ऐसे में उनका किसान संगठन, प्रकृति से समन्वयवादी था।

यदि वैश्विक परिदृश्य की बात की जाय तो समय-समय पर किसानों द्वारा सामंतों के विरुद्ध विद्रोह किए जाते रहे। स्वामी सहजानंद सरस्वती ने किसान सभा के संस्मरण में विश्व के कुछ प्रमुख देशों के किसान आंदोलनों और विद्रोहों का उल्लेख किया है। प्रायः सभी जगह किसानों की स्थिति एक समान ही रही है। जमींदार या महाजन सभी जगह रहे हैं। वे किसानों का शोषण करते रहे हैं और सरकार भी उन्हीं का समर्थन करती रही है। चाहे जर्मनी हो, इंग्लैंड, इटली, आस्ट्रेलिया, हंगरी अथवा फ्रांस हर जगह किसानों द्वारा विद्रोह किया गया। यूरोप के किसानों की तरह ही एशियाई किसानों ने भी सामंती व्यवस्था के विरुद्ध आंदोलन किए। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में चीन के किसानों ने विद्रोह किया। इसे 'ताइपिंग विद्रोह' के नाम से जाना जाता है। इस शताब्दी में किसानों का यह सबसे महत्वपूर्ण विद्रोह था। इसके अतिरिक्त 'बॉक्सर आंदोलन' 1899-1900 ई. चीनी किसानों का दूसरा महत्वपूर्ण आंदोलन था। स्वामी सहजानंद ने अपनी अंतर्दृष्टि से इस बात को ठीक ढंग से समझा कि यदि किसानों और मजदूरों को अपना हक प्राप्त करना है तो उन्हें संगठित होना होगा। इसके पूर्व अनेक किसान आंदोलन हुए। उचित संगठन एवं नेतृत्व के अभाव में इन आंदोलनों को ब्रिटिश शासक एवं उनके सहयोगी जमींदार एवं साहूकारों ने मिलकर दबा दिया। इन्हीं सबके चलते किसान नेताओं के अंदर यह भावना जागृत हुई कि किसानों का अपना एक वर्गीय संगठन होना चाहिए जो किसान समस्याओं पर संगठित दूरगामी संघर्ष को संचालित कर सके। इस संदर्भ में स्वामी जी स्वयं लिखते हैं कि— "असंगठित देखकर सभी को जुल्म करने की चाह होती है, जब तक किसान संगठित नहीं है तब तक हजार मीठी बातें बनाने पर भी जमींदार और उसके अमले किसानों पर जुल्म करते ही रहेंगे और वे वेबसी की हालत में आह भरकर रह जाएंगे। बोल तो सकते नहीं पर भीतर ही भीतर जमींदारों को कोसेंगे। इस प्रकार समाज में जमींदारों तथा किसानों के बीच बनी खाई दिन-प्रतिदिन चौड़ी होती

जाएगी क्योंकि असली मेल तो दिलों का होता है और किसानों के जख्मी दिल कभी भी जमींदारों से मिल सकते नहीं, खासकर ऐसी हालत में जबकि आए दिन जुल्म का नमक उन पर बराबर छिड़का जाता रहा है। लेकिन किसान आंदोलन के चलते, यदि किसान संगठित व बलशाली हो जाएं तो उन पर जुल्म करने की हिम्मत किसे होगी।” स्वामी जी के कृषक आंदोलन की शुरुआत बिहार प्रांत से हुई। स्वामी जी का प्रमुख कर्मक्षेत्र भी बिहार राज्य ही रहा है।<sup>2</sup>

1793 ई. में लार्ड कार्नवालिस ने केवल 46 हजार लोगों को बंगाल-बिहार में जमींदारियां दी थीं। किंतु 1940 में जमींदारों की संख्या 80 लाख हो गयी। भारत के स्थाई बंदोबस्त वाले तमाम क्षेत्रों की यही दशा थी। राष्ट्रीय स्तर के आंकड़े बतलाते हैं कि समूचे देश में 1901-1921 ई. के मध्य लगान वसूलने वालों की संख्या में 250 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसमें निस्संदेह बिहार की दशा सबसे बुरी थी क्योंकि ये लगान वसूलने वाले सिर्फ लगान ही नहीं वसूलते थे बल्कि तरह-तरह की गैर-कानूनी वसूलियां भी करते थे। स्वामी जी ने गया जिले में की जा रही 45 प्रकार की गैर कानूनी वसूलियों की चर्चा भी की है। लगान वसूलने वालों की संख्या के साथ ही किसानों की छाती पर इसका बोझ भी बढ़ता गया। चूंकि जमींदार लोग ही बिहार में मुख्य शासक वर्ग और विदेशी शासन के मुख्य सामाजिक आधार थे। अतः बिहारी जनता के सबसे प्रबल शत्रु हुए। लिहाजा बिहार के बहुसंख्यक वर्ग में इन जमींदारों के विरुद्ध नफरत की आग धधक रही थी।

दूसरी ओर यदि दृष्टि डाले तों भावली लगान (गल्ले के रूप में ली जाने वाली लगान) के नगदी में रूपान्तरण से परिस्थितियां किसानों हेतु और बुरी हो गयी। स्वामी जी ने गया जिले की सर्वे रिपोर्ट में 16 गांवों का एक वृत्तान्त पेश किया है जिसमें उन्होंने दिखलाया है कि कैसे इस परिवर्तन के चलते लगान लगभग दो गुना हो गया। इसका कारण भी बताते हैं कि कैसे एक वर्ष के लगान के बराबर, नजराना भी वसूला जाने लगा, जिससे किसान कर्जों के भारी नागफास में जकड़ गए। ‘मझियावां’ के किसानों को पहले ही वर्ष लगान व नजराने में 30 हजार रूपए देने पड़े और 4 वर्षों के भीतर ही उन पर सरकारी व महाजनी कर्जों का बोझ एक लाख 30 हजार रु. हो गया। 60 वर्ष पूर्व इसी गांव का लगान जो मात्र 900 रु. था वे अब बढ़कर 1500 रु. हो गया था। इस प्रकार नगदी में रूपान्तरण के वक्त जमींदारों के मनमाने निर्धारण और अनाज की बेतहासा घटती कीमतों ने किसानों के लिए नगदीकरण को भी गले की फांस ही बना दिया।<sup>3</sup>

उस समय ‘बटाईदारी’ बिहार की एक अन्य विकराल समस्या थी। जब किसान लगान नहीं दे पाते थे तो जमींदार जबरन जमीन उनसे छीन लेते थे।

ऐसी जमीन 'बकाशत' जमीन कहलाती थी जिसे कानूनन तो जमींदारों को स्वयं जोतना चाहिए था, परन्तु कानून तोड़कर जमींदार इस जमीन को बंटाई पर लगा देता था। इस प्रकार अधिकांश मामलों में स्वयं जमींदार ही बंटाईदार बन जाते थे। अतः अब यह काम किसानों की हड़पने का एक हथियार बन गया था। स्वामी जी का कार्य क्षेत्र पश्चिमी पटना जिला में था। इसी को ध्यान में रखते हुए सन् 1927 ई. के अन्त में उन्होंने अपने किसान आन्दोलन को शुरू किया। इसके कुछ दिनों तक चलने के पश्चात् दिनांक 04.03.1928 ई. को 'पश्चिमी पटना किसान सभा' को जन्म दिया गया। इसकी नियमावली आदि बनायी गयी। उसका उद्देश्य क्या हो ? उसके मेम्बर कौन हों, इत्यादि बातें तय की गईं।

'पश्चिमी पटना किसान सभा' का गठन वास्तव में कब हुआ इसको लेकर विवाद रहा। कुछ लोगों ने दिनांक 04.03.1928 ई. को इसका जन्म माना। इस प्रश्न का समाधान करते हुए स्वामी जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है— "जो लोग यह तारीख देखकर किसान सभा का जन्म 1928 ई. में मानते हैं, वह भूलते हैं। उस समय तो उसका विधान आदि बन गया और पूरे रूप में खड़ा हो गया। मगर इसके लिए तैयारी भी तो चाहिए और उसमें कुछ समय तो लगता ही है। इसलिए किसान सभा का जन्म असल में सन् 1927 ई. के अन्तिम दिनों में ही, आखिरी महीनों में ही हुआ इतना तो पक्का है।"<sup>4</sup>

स्वामी सहजानन्द सरस्वती के कृषक आन्दोलन में प्रवेश के फलस्वरूप भारत में किसान आन्दोलन के इतिहास में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई। इसी समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस गांधी जी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता संग्राम में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही थी। कांग्रेस में सभी धर्मों एवं जातियों का प्रतिनिधित्व भी था। ऐसे में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि स्वामी सहजानन्द के मन में वे कौन से ऐसे विचार थे जिन्होंने स्वामी जी को एक पृथक् कृषक सभा के स्थापना की आवश्यकता महसूस करायी, तो इसका उत्तर हमें स्वामी जी के विचारों से ही प्राप्त हो सकता है। वस्तुतः स्वामी सहजानन्द के अनुसार— 'कांग्रेस राजनीति के आइने में अर्थनीति को देखती थी वहीं किसान सभा अर्थनीति के आइने में राजनीति को देखती थी।' अतः किसान सभा की पहचान एक पृथक् संस्था के रूप में उजागर होती है।<sup>5</sup>

स्वामी जी ने 'किसान सभा के संस्मरण' नामक ग्रन्थ में लिखा है—बिना आर्थिक आजादी के राजनैतिक आजादी का कोई अर्थ नहीं है। देश के किसान भारत की रीढ़ हैं। उनका वर्चस्व कांग्रेस पर होना चाहिए। कांग्रेस राजनीतिक संस्था है। किसान सभा किसानों की वर्ग संस्था है, जो कांग्रेस की गणसंस्था के रूप में है तथा आर्थिक मांगों पर खड़ी है। जब तक राजनीति तथा अर्थ नीति दो शब्द हैं, तब तक ये दोनों संस्थाएं भी दो हैं। कांग्रेस में अधिकतर

विभिन्न वर्गों के लोग हैं। वह राष्ट्रीय संस्था है। कांग्रेस मुल्क की आजादी के लिए लड़ती है, किसान सभा आर्थिक अधिकारों के लिए लड़ती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्वामी सहजानन्द ने किसानों के वर्गीय हितों की रक्षा के लिए ही किसान सभा का गठन कांग्रेस की एक सहयोगी संस्था के रूप में किया।<sup>6</sup>

आरम्भिक दौर में स्वामी जी द्वारा संचालित इस आन्दोलन की प्रकृति को समझने के लिए हमें स्वामी जी द्वारा 'किसान सभा' की स्थापना के सम्बन्ध में लिखी निम्न पंक्तियों पर गौर करना होगा—

'अन्त में मैंने यह तय किया कि किसान सभा के माध्यम से आन्दोलन चलाना ही उचित होगा। इसका कारण यह है कि ऐसी दशा में एक तो हम समझ-बूझ कर कदम बढ़ाएंगे जिससे न तो गृह-कलह और न ही किसान-जमींदार संघर्ष होगा। विवाद की स्थिति में भी दोनों को समझा-बुझा कर मामला शांत कर दिया जाएगा जैसा कि कांग्रेस का भी सिद्धान्त है और गांधी जी का भी मानना, और मेरे लिए तो गांधी जी पथप्रदर्शक भी हैं। दूसरा लाभ यह होगा कि ऐसी दशा में गैर जवाबदेह लोगों को हमारे आन्दोलन और हमारी सभा को देखकर यहां आने की हिम्मत ही नहीं करेंगे। इसी निश्चय के साथ हमने किसानों की सभाएं जहां-तहां शुरू कर दी और उनका आन्दोलन जारी किया।'<sup>7</sup>

उपर्युक्त वाक्यों से जो बात स्पष्ट होती है वो यह कि इस समय तक चूंकि स्वामी जी कांग्रेस के सदस्य थे अतः कहीं न कहीं उनके विचारों में समन्वयवादिता व समझौता परस्ती दिखाई पड़ती है।

स्वामी सहजानन्द के नेतृत्व में यमुना कार्या, यदुनन्दन शर्मा, कार्यानन्द शर्मा, धनराज शर्मा, इन्द्रदीप सिन्हा जैसे स्थानीय कार्यकर्ताओं के सहयोग से किसान सभा का रूख नरमवादी और समझौतावादी से धीरे-धीरे बदल कर उग्र संघर्षवादी बनता गया। बाद में राहुल सांकृत्यायन, जयप्रकाश नारायण, जैसे बुद्धिजीवियों के प्रवेश ने सभा को आर्थिक रूप से भी सशक्त बनाया। परन्तु मूलतः किसान सभा स्वामी सहजानन्द के इर्द-गिर्द ही केन्द्रित रही। इस दरम्यान जब 1930 ई. में सविन अवज्ञा आन्दोलन की शुरुआत हुई तो गांधी जी की नीति के तहत उन्होंने किसान सभा के कार्यों को स्थगित कर दिया क्योंकि उन्हें ऐसा महसूस हुआ कि कहीं किसान सभा की गतिविधियां कांग्रेस के बहुवर्गीय चरित्र के खिलाफ न हो जायें और जिससे सविनय अवज्ञा आन्दोलन के क्षेत्र में किसी प्रकार की बाधा न उत्पन्न हो जाय।<sup>8</sup>

स्वामी सहजानन्द सरस्वती का राजनीतिक जीवन साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष से शुरू होता है। धीरे-धीरे उन्होंने देखा कि साम्राज्यवाद का आधार



सामंतवाद है। अतः अब उन्होंने साम्राज्यवाद व सामंतवाद के विरुद्ध साथ-साथ संघर्ष प्रारम्भ किया। यह संघर्ष एक ओर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध तथा दूसरी ओर सामंतवाद के विरुद्ध था। इन दोनों मोर्चों पर उनको व्यापक सफलता मिली। इसीलिए उन्होंने कांग्रेस का भारत की स्वतन्त्रता तक साथ दिया। कांग्रेस देश के मध्यम वर्गीय लोगों का दल था। उसका जन्म एक ब्रिटिश अधिकारी के माध्यम से हुआ। गांधी जी के नेतृत्व में कांग्रेस जनाभिमुख हुई लेकिन उसका साध्य भारत की स्वतन्त्रता थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय सामाजिक संरचना कैसी हो, इस ओर उसका ध्यान नहीं था। इसलिए हम कह सकते हैं कि स्वतन्त्रता के पश्चात् कांग्रेस अवश्य कुछ उद्देश्यों से विहीन हो गयी। स्वामी सहजानन्द का मानना था कि यदि स्वतन्त्रता के पश्चात् भी भारत में एक शोषणमुक्त समाज की स्थापना नहीं हो सकेगी तो ऐसी स्वतन्त्रता व्यर्थ ही होगी।<sup>9</sup>

भारत में आज तक किसान मजदूर राज्य स्थापित नहीं हो सका है। उनकी मृत्यु के पश्चात् भारत में किसान आन्दोलन दिशाहीन हो गया। स्वामी जी के जीवन में भी किसान आन्दोलन को तोड़ने का प्रयास किया गया था। उनकी मृत्यु के पश्चात् रिक्त स्थान को भरने के लिए कोई भी समर्पित नेता उभर कर सामने नहीं आया। देश की पूंजीवादी शक्तियों ने किसान आन्दोलन में फूट डाल दी। वहीं वामपंथी शक्तियां आपसी कलह में उलझी रहीं। देश के राजनीतिक दल किसानों की बात अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु करते हैं। सिर्फ चुनावी घोषणा में ही ढेर सारे वायदे किए जाते हैं। देश में बिहार, झारखण्ड, आंध्र आदि का किसान आन्दोलन हिंसक हो चुका है। वहीं शेष भारत में आज भी किसान बिखरे हैं। यदि भारत में किसानों व मजदूरों को अपना हक पाना है तो उनको आपसी मतभेदों को भुलाकर एक जुट होकर, अखिल भारतीय स्तर पर अपना संगठन बनाना होगा। स्वामी सहजानन्द का विचार था कि वामपंथी ताकतों को एकजुट कर देश के किसानों और मजदूरों को एकजुट किया जा सकता है। उनको जनशक्ति पर पूर्ण भरोसा था, देश की 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या उस समय गांवों में बसती थी। गांवों के किसान और मजदूर ही सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था के केन्द्र-बिन्दु थे, स्वामी सहजानन्द के अनुसार, किसान-आन्दोलन के अलग-अलग दल तथा अलग-अलग नेतृत्व होने की वजह से पूंजीपति वर्ग अथवा सत्ता सर्वदा अपने उद्देश्य में सफल रहती है।

### निष्कर्ष

स्वामी सहजानन्द सरस्वती के कृषक आन्दोलन में प्रवेश के फलस्वरूप भारत में किसान आन्दोलन के इतिहास में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई। स्वामी जी के नेतृत्व में किसानों और मजदूरों की व्यापक एकता बनी।

सम्पूर्ण मुक्ति के लिए दिया गया नारा तथा वर्गीय आन्दोलन का दृष्टिकोण उन्हें किसान मजदूर प्रश्नों पर साम्यवादियों के निकट ज्यादा लाया तथा कांग्रेस जो राष्ट्रीय पूंजी, बड़ी जमींदारियों तथा उच्च मध्यवर्ग के सबसे वाचाल तबके का प्रतिनिधित्व करती थी, वर्गीय अंतर्विरोधों को पैदा कर दिया। इस वर्गीय समझ का प्रतिबिम्ब किसान सभा की नियमावली में ही परिलक्षित हुआ। स्वामी जी ने अपनी अन्तर्दृष्टि से इस बात को महसूस किया कि दलों के बिखराव का लाभ शोषक वर्ग को मिलता है तथा शोषित अपनी बात कभी भी दृढ़ता के साथ नहीं रख सकता। इस बिखराव को रोकने हेतु स्वामी जी ने अपने स्तर पर एक सकारात्मक प्रयास किया किन्तु स्वामी जी को अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी। यद्यपि स्वामी जी को सफलता पूर्णतः नहीं मिली किन्तु उनके द्वारा किए प्रयास का प्रभाव भी महसूस किया जा सकता है।

### संदर्भ

1. बनर्जी, एस.एन., ए नेशन इन मेकिंग, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, कलकत्ता, 1925 एवं त्रिपाठी, डॉ. दिवाकर, स्वामी सहजानन्द सरस्वती और स्वतंत्रता आंदोलन, मंगलम् प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
2. बोस, सुभाष चन्द्र, द इंडियन स्ट्रगल, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, कलकत्ता, 1934
3. सरस्वती, सहजानंद, मेरा जीवन संघर्ष, पिपुल्स पब्लिशिंग हाउस, लि. दिल्ली, 1958
4. चौधरी, वि.वि. : एग्रेरियन मूवमेंट्स इन बिहार एण्ड बंगाल, बी.आर. नंदा (सं.) सोसियोलिज्म इन इंडिया, दिल्ली, 1972
5. जूनाजी, टॉम्स : एग्रेरियन काइसिस इन इंडिया, ए केस ऑफ, बिहार, एस. चाँद, दिल्ली, 1974 एवं शर्मा, सुधाकर त्रिवेदी, लोकनायक स्वामी सहजानन्द सरस्वती, गया, 1973
6. झा, हेतुकर, लोअर कास्ट पिजेन्ट्स एण्ड अपर कास्ट जमींदारस इन बिहार (1921-1925), इंडियन इकॉनोमिक एण्ड सोशल हिस्ट्री रिव्यू, नेशनल, कलकत्ता, 14, 1977
7. शर्मा, के.के. : एग्रेरियन मूवमेंट्स एण्ड कांग्रेस पॉलिटिक्स इन बिहार, 1927-1947, दिल्ली, 1989
8. कुमार, कपिल, किसान विद्रोह कांग्रेस और अंग्रेजी राज्य, मनोहर पब्लिकेशन दिल्ली, 2001
9. दत्ता, के.के., बिहार के स्वतंत्रता आन्दोलन, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1957

## धर्मसूत्रों में विवेचित धर्म : एक समाजशास्त्रीय विवेचन

आराधना द्विवेदी \*

डॉ. सन्तेश्वर कुमार मिश्र \*\*

### सारांश

धर्मसूत्र साहित्य प्राच्य भारतीय सामाजिक जीवन की आचार संहिता के रूप में रचित है। इसके रचनाकार आचार्य समाज चिंतक के आदर्श रूप रहे हैं। धर्मसूत्रों में वेद और मानव जीवन के अनुभव को आधार बनाकर समाज, संस्कृति, धर्म, वर्णित ज्ञान, राजनीति, व्यक्ति, परिवार और जीवन दर्शन को उन्नत रूप में प्रस्तुत किया गया है। धर्मसूत्रों का विवेच्य धर्म जीवनपद्धति (Way of Life) है। राज्य शासन सञ्चालन की विधि व्यवस्था है। व्यक्ति परिवार और समाज के सम्बन्धों का नियमन करने वाला है। इसमें वर्णित धर्म को सदाचार के रूप में जाना जाता है। सदाचार के अभाव में व्यक्ति परिवार और समाज का अस्तित्व सम्भव नहीं है। धर्मसूत्रों की सामाजिक व्यवस्था में धर्म के सम्बन्ध में समाज चिंतक आचार्यों के विचारों से सम्बन्धित तथ्यों को समाजशास्त्रीय विवेचना की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है।

**संकेताक्षर :** धर्मसूत्र और उसके प्रतिपाद्य, धर्मसूत्रों में धर्म, धर्म का आशय, धर्म और आचार, आचार की महिमा, आचार ही परमधर्म है; आदि।

वेदांग साहित्य के कल्प अथवा सूत्र साहित्य नामक अंग की धर्मसूत्र विधा का प्रमुख विवेच्य सामाजिक एवं वैयक्तिक विधिनिषेध परक आचार व्यवस्था रही है। धर्म का सम्बन्ध मनुष्य और उसके समाज से है। धर्मसूत्रकारों की दृष्टि में धर्म सामाजिक जीवन का ही रूप है। इसका क्षेत्र व्यक्ति के स्वपरक तथा सामाजिक आचार से सीमायित रहा है। धर्म सामाजिक जीवन का ही अभिन्न स्वरूप हो गया है। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने लिखा है कि— “धर्म और सामाजिक जीवन में स्पष्ट विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती। सामाजिक संस्थाएँ अन्ततः मनुष्यों के निर्णयों पर आधृत होती हैं, जिनके अनुसार मनुष्य और उनके अनुयायी आचरण करते हैं। धर्म एक सामाजिक बन्धन का कार्य करता है।”<sup>1</sup> वस्तुतः धर्मसूत्रों में आचार्यों ने व्यक्ति और उसके सामाजिक सम्बन्धों को बड़ी पैनी दृष्टि से निरीक्षण कर

\* शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित् विश्वविद्यालय, प्रयागराज

\*\* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित् विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रादेशिक आचार्यों, नियमों तथा लौकिक परम्पराओं को मान्यता प्रदान करने की अनिवार्यता का अनुभव किया है। क्योंकि धर्म सम्बन्धी आचार व्यवहार के नियम एक समान सार्वदेशिक नहीं हो पाते। उनमें यत्किंचित् परिवर्तन एवं अन्तर सम्भव होते हैं। इसलिए प्रादेशिक आचार्य भी अपनी विभिन्नता में भी धर्म का स्रोत बन जाते हैं। जिसे धर्मसूत्रकार समाज चिंतकों ने बड़ी सावधानी से स्वीकृति प्रदान किया है। प्रदेश शब्द धर्मसूत्रों में एक समान प्रकार के आचार, विचार तथा संस्कारों का अनुगमन करने वाले मनुष्यों के समूह को माना गया है; जिस समूह की अपनी आचार-विचार विषयक समानता एक भौगोलिक सीमा का निर्धारण भी करती है। धर्मसूत्र कालीन आर्यों के सामाजिक आचार से भिन्न आचार पालक मनुष्यों का भी समूह रहा है, इसी को दृष्टिगत कर धर्मसूत्रकारों ने आर्यों के प्रदेश में व्यवहृत एवं प्रचलित आचार नियम “उत्तम और वास्तविक धर्म” है, को स्पष्ट करने को औचित्यपूर्ण मानकर उसे ही ‘प्रादेशिक आचार’ की संज्ञा दी है; जो श्रुति और स्मृति विहित नियम रहे। प्रादेशिक आचारों को सूत्रकारों ने प्रामाणिकता प्रदान की है।<sup>2</sup> आर्यावर्त गंगा और यमुना इन दोनों नदियों के मध्यवर्ती प्रदेश के रूप में बौधायन नामक धर्मसूत्रकार ने स्वीकृत किया है।<sup>3</sup> यही कारण रहा है कि आचार्य वसिष्ठ ने स्पष्ट घोषणापूर्ण नियम निर्देशन किया है कि “आर्यावर्त में जो धर्म और आचार मान्य हैं, उन्हीं को सर्वत्र प्रामाणिक मानना चाहिए। जो नियम विपरीत आचरण वाले प्रदेशों में प्रचलित हैं; उनका आचरण नहीं करना चाहिए।<sup>4</sup> आचार्य वसिष्ठ एवं बौधायन दोनों ने कहा है कि जिस प्रदेश में कृष्ण मृग पाये जाते हैं, वहाँ तक ब्रह्मतेज व्याप्त रहता है।<sup>5</sup> यह स्थिति आर्यावर्त की रही है।

इससे स्पष्ट होता है कि आर्यावर्त में प्रचलित धर्म श्रुति एवं स्मृति मूलक हैं। अतएव यही सही धर्म हैं। धर्मसूत्रकारों की दृष्टि में हम यह भी तथ्य पाते हैं कि जो आचार जिस प्रदेश में मान्य होता है; उससे भिन्न यदि किसी प्रदेश में वह आचरण किया जाय; तो उस आचरण से उस प्रदेश में दोष उत्पन्न होगा। वह विरुद्ध आचरण माना जायेगा। इसलिए आचार्य बौधायन ने स्पष्ट किया है कि विशिष्ट प्रकार के आचार नियम उसी विशिष्ट प्रदेश में ही मान्य होते हैं जहाँ उन्हें प्रामाणिकता प्राप्त होती है।<sup>6</sup> इस प्रकार की प्रादेशिक धर्म व्यवस्था जो अपने-अपने वर्ग और प्रदेश के नियम के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त है, को ध्यान देकर राजा तक को निर्देशन किया गया है कि वह न्याय करते समय विशिष्ट एवं प्रादेशिक नियमों को संज्ञात में लेकर ही धर्म एवं न्याय की व्यवस्था करे।<sup>7</sup>

उपरिवर्णित प्रादेशिक धर्म विषयक विवेचन यहाँ एक मात्र प्रतिदर्श स्वरूप है। सामान्य रूप में धर्मसूत्रों के अन्तर्गत मनुष्य के सामाजिक धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक पारिवारिक, वैयक्तिक तथा दार्शनिक आदि विषयक धर्म नियमों के विधान वर्णित हैं। जिन्हें संक्षिप्त रूप में अग्रक्रम में देखा जा सकता है—

1. **वर्ण धर्म** — सभी मनुष्यों के वर्णों के अनुपालनीय कर्तव्य विवेचन।
2. **आश्रम धर्म** — ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास आश्रम के कर्तव्यों का विवेचन।
3. **नैमित्तिक धर्म** — इस कोटि के धर्म में प्रायश्चित्त विधान, पाप पुण्य कर्म व्रताचरण आदि के नियम आदि के विवेचन।
4. **गुणधर्म** — राजा के कर्तव्यों आदि विषयक धर्म नियमों का उल्लेख।
5. **साधारण धर्म** — सम्पूर्ण व्यक्तियों के लिए अनुपालनीय विधि निषेधपरक कर्तव्यों के विवेचन

उपरिलिखित धर्मों के अन्तर्गत साधारण धर्म, जो सभी व्यक्तियों पर समान रूप में प्रभावी नियमों के रूप में होता है, इसे विज्ञानेश्वर द्वारा प्रतिपादित किया गया है।<sup>8</sup> यद्यपि धर्मसूत्रों में आश्रमों के धर्म नियमों का उल्लेख (अपेक्षाकृत अन्य धर्म के) अधिक विस्तार में विहित किया गया है।

आचार्यों ने वर्णों के धर्म विवेचन में वर्ण संकर जातियों का वर्णन कर सामाजिक संस्तरिकरण एवं स्थिति का स्पष्टीकरण भी प्रस्तुत किया है। नैमित्तिक धर्म के प्रसंग: में अनेक प्रकार के पातक कर्म, उपपातक कर्म, पाप पुण्य और उसके फल, व्रत जप आदि को धर्म की प्रासंगिकता में विधान दिए हैं। गुणधर्म नामक प्रकरण में समग्र धर्मसूत्र साहित्य राजा के अधिकार, कर्तव्य, न्याय एवं दण्ड व्यवस्था तथा साक्षी आदि के विवेचन हैं।<sup>9</sup> इन्हीं क्रमों में नारी विषयक कर्तव्य और अधिकारों का निश्चयन भी धर्मसूत्रकारों ने विहित किया है। यत्र—तत्र आभिचारिक क्रिया भी दर्शित की गई है। इसी प्रकार साधारण धर्म जो नीति विषयक आचार है, के बहुशः नियमों निर्धारण किए गए हैं। जिनका सभी मनुष्यों के द्वारा अनुपालनीय किया गया है।<sup>10</sup> इससे सामाजिक एवं वैयक्तिक जीवन व्यस्थित एवं शान्तिमय होता है। इनमें इन्द्रिय संयमन, अहिंसा, सत्यभाषण, दान, अक्रोध, अलोभ तथा प्रजनन विषयक प्रमुख है।<sup>11</sup> पापविमोचन हेतु क्रियमाण कर्म को आचार्य गौतम ने नैमित्तिक धर्म को स्पष्ट करते हुए कहा

है कि ब्रह्महत्या आदि के प्रायश्चित्त कर्म की नैमित्तिक धर्म संज्ञा दी है।<sup>12</sup> वस्तुतः धर्मसूत्रों में प्रतिपादित धर्म मानव जीवन की पद्धति है। जो श्रुति स्मृति विहित व्यवस्थापरक धर्म कहलाता है। उसके अभाव में शिष्टजनों के शिष्टाचार ही धर्म के प्रमाण है। शिष्टजन वे हैं, जिन्हें किसी भी प्रकार की लौकिक कामना नहीं होती है।<sup>13</sup> धर्मसूत्रकारों की व्यवस्था में शनैः शनैः वर्णाश्रम की विधियों के सन्निकट धर्म का आगमन हो जाता है। उपनिषद् ने वर्ण और आश्रम के आचारों और संस्कारों के ज्ञान हेतु धर्म को आधार माना है।<sup>14</sup> यह धर्म वही है जिसे धर्मसूत्रकारों ने जीवन विधि के रूप में उपन्यस्त किया है। जो श्रुति प्रमाणित है।<sup>15</sup> फलतः यह सुस्पष्ट हो जाता है कि भारतीय धर्म श्रुति स्मृति मूलक है। इसे स्वीकार कर धर्मसूत्रों के आचार्यों ने जो नियम अथवा आचार विहित किया है;<sup>16</sup> वही धर्म के रूप में प्रतिपादित हुआ है। धर्मसूत्रों में आचार को धर्म का मूल स्वीकारा है। धर्म के साथ उसका परिपालन तथा व्यवहार किया जाना ही उसका वास्तविक प्रयोजन सिद्ध होता है। धर्मसूत्रों में विवेचित धर्म स्वरूप आचार का शाश्वत सन्देश यह है कि

धर्म चरत माधर्म सत्यं वदत मानृतम् ।  
दीर्घं पश्चत माह्रस्वं परंपश्यत मापरम् ॥

अर्थात् "धर्म का आचरण करो अधर्म का नहीं। सत्य बोलो असत्य नहीं। दूर तक देखो संकुचित् दृष्टि न रखो। हीन वस्तु देखकर अपना विचार हीन मत बनाओ। श्रेष्ठ वस्तु देखो और जीवन का उद्देश्य सर्वदा उच्च से भी उच्च बनाये रखो" क्योंकि आचार ही धर्म और संस्कृति का मूलाधार है। इसी पर भारतीय समाज का सृजन धारण और संचालन हुआ है। धर्म का व्यावहारिक पक्ष आचार है। इसीलिए आचार परम धर्म के रूप में प्रतिष्ठित रहा है। हीनाचार व्यक्ति को इस लोक और परलोक दोनों में सुख नहीं मिलता; वह नष्ट हो जाता है।

आचारः परमोधर्मः सर्वेषामिति निश्चयः ।  
हीनाचार परीतात्मा प्रेत्य चेहच नश्यति ।<sup>17</sup>

इस प्रकार की धर्मसूत्रों की व्यवस्था जो आचार, व्यवहार और नैतिक भावना पर आधारित रही है इसको संज्ञान में लेकर मेकेंजी जॉन नामक विचारक ने कहा है कि— इनमें ऐसे तत्त्व निहित हैं, जो स्वतः इतने मूल्यवान हैं कि वे विश्व के विचार और संस्कृति को सम्बद्ध करने में समर्थ हैं।<sup>18</sup> धर्मसूत्रों की

व्यवस्था ने ही भारतीय सामाजिक जीवन में सदाचार के अनुपालनीय नियम विधानों के माध्यम से उच्च चरित्र की स्थापना का प्रयत्न किया है। जिससे मानव जीवन उत्तम बन सके। आदर्श समाज की स्थापना बन सके। मृत्यु के परे भी आत्यन्तिक शान्ति अर्थात् सद्गति (मोक्ष) प्राप्त हो सके। इसी भारतीय चरित्र की परलौकिक मनोवृत्ति की प्रशंसा में मैक्समूलर ने कहा है कि— “भारतीय चरित्र में इस परलौकिक मनोवृत्ति ने किसी भी देश की अपेक्षा अधिक प्रधानता अर्जित किया है।”<sup>19</sup> डॉ. राधा कृष्णन ने भी कहा है कि— “जहाँ तक हिन्दू जीवन का प्रश्न है, वह आध्यात्मिक और नीति शास्त्रीय दर्शन का मूर्त रूप है।”<sup>20</sup>

पूर्वलिखित विवेचनों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि धर्मसूत्र सहित्य में प्रतिपादित धर्म मानव जीवन विधि का आदर्श रूप है। जो सत्य, दया, अक्रोध, सदाचार नैतिकता एवं सद्दिचारों पर आधारित व्यवहारिक जीवन में अनुपालनीय नियम विधान है। इसी से प्राच्य भारतीय समाज का संचालन और पोषण होता रहा है, इसकी प्रासंगिकता न्यूनाधिक्य में आज भी विद्यमान है। इसका आधार वेद एवं स्मृति है। यह सम्पूर्ण मानव समाज के लिए परम उपयोगी धर्म विधान हैं। इन्हें Way of Life जीवनशैली के साथ ही Hindu Code of Conduct हिन्दू आचार संहिता भी कहा जाना उपयुक्त होगा।

### सन्दर्भ

1. *Recovery of Faith. P. 27. We can not draw a sharp line of distinction between religion and Social life. Social organization rests Ultimately on a series of Decisions taken by human beings as to the man her in which they and their followers should live.....Religion is a Social Cement a way in which men express their aspirations and find solace for their frustrations.*
2. विशेष विवरणार्थ द्रष्टव्य—बौधायन धर्मसूत्र 1.2.10 एतदार्यावर्ततस्मिन् आचारस्स प्रमाणम् तथा वसिष्ठ धर्मसूत्र—1.8—9
3. तदेव—1.2.11—गंगा—यमुना योरन्तरमित्येके।
4. वसिष्ठ धर्मसूत्र—1.10— तस्मिन् देशे ये धर्म येचाचारास्ते सर्वत्र न त्वन्ये प्रतिलोमक धर्माणाम्।
5. तदेव—1.14—15, बौधायन धर्मसूत्र—1.2.13 विशेष हेतु द्रष्टव्य है— धर्मशास्त्र का इतिहास—पी.वी. काणे (हिन्दी अनु.) भाग—2
6. बौधायन धर्मसूत्र 1.2.6.7 तत्र—तत्र देशे प्रामाण्यमेव स्यात्.....।
7. गौतम धर्मसूत्र 2.2.21. स्वेस्वे वर्गे।

6. याज्ञवल्क्य स्मृति 1.1 का भाष्य।
9. गौतम धर्मसूत्र 3.1.1-3 तथा हरदत्त भाष्य, बौधायनधर्म सूत्र-1.1.3. गोविन्दभाष्य
10. तदेव - 3.1.1 - वक्ष्यमाणस्तु पुरुषमात्र धर्मः।
11. वसिष्ठ धर्मसूत्र 4.4 सर्वेषां सत्यमक्रोधो दानमहिंसा प्रजननंच।
12. गौतमधर्मसूत्र 3.1.1 ब्रह्महत्यादौ निमित्ते कर्तव्यो नैमित्तिको धर्म प्रायाश्चित्तः तथा विज्ञानेश्वर भाष्य दृष्टव्य हैं।
13. वसिष्ठ धर्मसूत्रव 1.4-7 श्रुतिस्मृति विहितोधर्मः तदलाभे शिष्टाचारः प्रमाणम् पुनरकामात्मा 1...1 एवं वही 6.43 तथा आपस्तम्बधर्मसूत्र -1.1.2 धर्मज्ञसमयः प्रमाणम् एवं वही 1.1.3-वेदाश्च।
14. छान्दोग्योपनिषद् 2.23. तथा दृष्टव्य है धर्म और समाज, डॉ. एस. राधाकृष्णन
15. मनुस्तमृति 2.1. श्रुति प्रमाण को धर्मः कुल्लूक टीका
16. आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1.1.1.2
17. वासिष्ठ धर्मसूत्र-6.1
18. *Hindu ethics, p. 241. We may claim for them that they contain elements which are of great value in themselves, and which may serve to enrich the thought and culture of the world.*
19. *What can India Teach us- p. b*
20. *The Hindu view of life, p. 77. Hindu's is insists not on religious conformity but not spiritual and ethical outlook in life.*







**Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences**  
**Subscription Order Form**  
website:www.manglamallahabad.com

1. Name : .....
2. Address : .....
3. Tel./ Mabile No. .... e-mail .....
4. Tpe of Subscription : Individual/ Institon
5. Period of Subscription : Annual/ Three year's/ Life time\*
6. Number of Copies Subscription : .....

Dear Editor,

Kindly acknowledge the receipt of my Subscription and staet sending the issue (s) of Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences (ISSN-0976-8149) at follwing Aeddres.

.....  
.....  
.....

The Subscription rates ars sa Follow : w.e.f. 31.08.21\012

India (Rs.)	Members of Manglam Sewa Samiti	Individuals	Institutions
Single Copy	Rs. 300/-	Rs. 600/-	Rs. 750/-
Anaual Copy	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 1500/-
Three Copy	Rs. 1500/-	Rs. 8000/-	Rs. 4500/-
Life time*	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 10,000/-
OTHER COUNTRIES	Members of Sewa Samiti	Individuals	Institutions
Single Copy	\$ 65	\$ 80	\$ 120
Anaual Copy	\$ 120	\$ 150	\$ 240
Three Copy	\$ 360	\$ 430	\$ 720
Life time*	\$ 3000	\$ 5000	\$ 10,000

(\*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Maglam International Journal of Humanities & Social Sciial Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India Prayagraj Branch : Civil Lines Prayagraj  
Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963  
IFC Code : SBIN 0018245 MICR Code : 211007003

Please return this form to

**Dr. Dinkar Tripathi**

Editor : Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences  
463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj(U.P.)- India, 211002  
website:www.manglamallahabad.com  
e-mail : drdinkartripathi@gmail.com

## Instruction for Research Paper's

- Reserach Papers are Invited Only in Hindi, Sanskrit and English with a Declaration of being Original and unpublished ,work.
- The Paper Must be Neaty Typed in 14 Point Size of KrutiDav-010/ Times New Roman on A4 Size Paper having 1.25 inch margin of evey side with full Residential & Offical Address Mobile No. and email.
- The Research Paper Should have the Maximum Limit of 2000 Words. It can be returned if no Summary (Maximum in 150 Words) and referenace are attached.
- Research Paper will be Published after the approval of Editorial board.
- Author Should give the References in this manner  
for Articles- Dr. Gopal Prasad, Economic Development and Panchayatiraj, Manglam Journal, Allahabad. ISSN-097-8149 Year 02 No-01 February 2011 P.17-18.  
for book- Yogendra Yadav, Electroal Politics in the time of Change:India's third Electoral Sytem 1989-99" Economic & Political Weekly Vol.34 No.34 21-28Aug.1999. P-2330-2399.
- All Right of Published Papers will be Preserved under the Name of Editor.
- Authors may sent two copies of their Books (Under one year of its Publication) for Review in the Journal.
- The Journal will be Sent to all Personal and Institutional Members. Through general post, if some one required post be will have to pay Additional Charge for it.
- Please sent your Research Paper, C.D. and Subscription form/ Membership Form at the address given below.

### Editor

Dr. DINKAR TRIPATHI

•  
**Manglam -Half Yearly Journal**  
463/359G-2 Shivam Apartment,  
New Mumfordganj, Allahabad (U.P.) India  
Mobile- +91-7398180008, +91-9044666672  
Email- drdinkartripathi@gmail.com

•  
**Manglam- Half Yearly Journal**  
1249/1A, Civil Lines-2  
(Behind-Raj Hotel ) Sultanpur, (U.P.)  
Mobile- +91-9532006658